अंक: 72

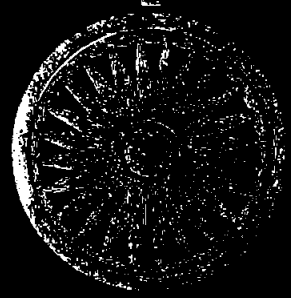

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

तुम वहन कर सको जन-मन में मेरे विचार
वाणी मेरी, चाहिए तुम्हें क्या अलंकार?

—सुमित्रा नन्दन पन्त

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे

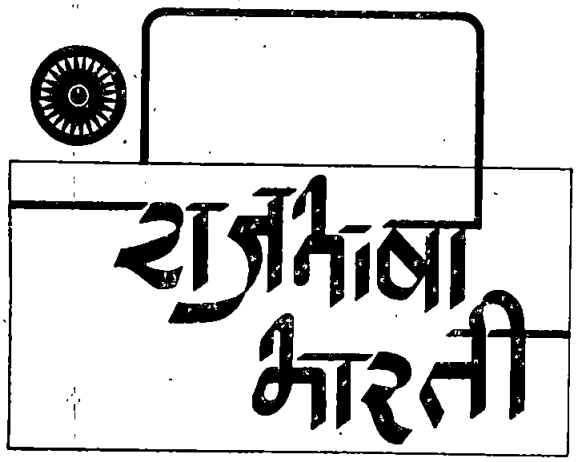

— निराला

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्षः 18

अंकः 72

माघ-फाल्गुन, 1917 शक   जनवरी-मार्च, 1996

संपादक

राज कुमार सैनी
निदेशक (अनुसंधान)
फोनः 4617807

उपसंपादक

नेत्रसिंह रावत
फोनः 4698054

सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोनः 4699441

संपादन सहायक

शांति कुमार स्याल
फोनः 4698054

नि:शुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र-व्यवहार का पताः

संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन, (11वां तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003

अनुक्रम   पृष्ठ

☐ इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार समारोह के अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति जी का भाषण — 3

☐ संपादकीय — 5

☐ चिंतन

1. प्राचीन से अर्वाचीन की ओर — ज्योतिषाचार्य नन्दन मिश्र — 7
2. भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम — एस० सी० शर्मा — 9
3. हिंदी: एक परिप्रेक्ष्य — दयानाथ लाल — 11
4. कार्यालयी भाषा हिंदी का स्वरूप — डॉ० किरन पाल सिंह — 15
5. भारतीय भाषा के भविष्य के लिए जनधर्म — डी० के० पणिक्कर — 19
6. शैक्षिक अस्मिता और भाषा — डॉ० राम गोपाल सोनी — 21

☐ साहित्यिकी

7. गीत काव्य का भविष्य — राजकुमार सैनी — 23
8. कहते हैं अगले जमाने में कोई मीर भी था — डा० परमानन्द पांचाल — 26
9. बूदें रचतीं जल-कथा — देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' — 29
10. भइया बटोरिया रे — मधुकर सिंह — 30

☐ संस्कृति दर्शन

11. संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास — डॉ० शशि तिवारी — 32

☐ पुरानी यादें : नए परिप्रेक्ष्य

12. गांधी जी के अंतिम दिन — डा० रामदास 'नादार' — 37

□ भारतीय भाषा संगम 39

13. आंसू — बाल शौरि रेड्डी
14. गीत — डॉ० भरत मिश्र 'आरा'
15. उर्दू गुलदस्ता — त० शा० निशा

□ प्रेरणा पुंज 44

16. दक्षिण में हिंदी की गौरवमयी परम्परा — प्रताप सिंह
(श्री बाल शौरि रेड्डी से बातचीत)

□ पुस्तक-समीक्षा 17

(इस स्तम्भ में पुस्तक के लेखक का नाम/समीक्षक का नाम पूर्वापर क्रम से दिया गया है)

वहां के लोग (संपादक—डा० हरिवंश अनेजा/दिलीप कुमार चौधरी), सोते जागते (निरंकार नारायण सक्सेना/संतोष खन्ना), दक्षिण एशियाई महासागर के तटीय क्षेत्रों में नियोजन व प्रबंध हेतु क्षमता निर्माण (जे०वी०आर० प्रसाद राव, सुश्री राकेश शर्मा/सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा), कभी आसमान साफ होगा (बाल शर्मा/देवी दत्त तिवाड़ी), दोहा रामायण (डॉ० भरत मिश्र/शांति कुमार स्याल), नए उद्योगों की स्थापना एवं बीमार उद्योगों का इलाज—क्यों और कैसे (चन्द्रशेखर झा/शांति कुमार स्याल), आधुनिक महिला लेखन (रमणिका गुप्ता/विश्वमोहन तिवारी), नदिया (डा० सूरजमणि स्टेला कुजूर/ओम नारायण), अपना-अपना सुख (निरंकार नारायण सक्सेना/राधेश्याम यादव।

□ हिंदी कार्यशालाएं 55

□ हिंदी दिवस 58

□ समिति समाचार 64

□ विविधा 68

● पूर्वोत्तर में हिंदी ● समाचार ● आदेश-अनुदेश

इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार समारोह के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति डा० शंकर दयाल शर्मा जी का भाषण

[राष्ट्रपति भवन में दिनांक 14-9-95 को इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति जी द्वारा राजभाषा नीति-कार्यान्वयन में उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए विविध मंत्रालयों, विभागों आदि को वर्ष 1993-94 एवं 1994-95 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार प्रदान किए गए। महामहिम राष्ट्रपति जी द्वारा इस अवसर पर दिया गया भाषण राजभाषा भारती के पाठकों के लिए यहां प्रस्तुत किया जा रहा है। संपादक]

आज 'हिंदी दिवस' के अवसर पर इंदिरा गांधी राजभाषा शील्ड और पुरस्कार प्रदान करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। पुरस्कार प्राप्त करने वाले मंत्रालयों, विभागों उपक्रमों, समितियों तथा लेखकों को मैं अपनी बधाई देता हूं और आशा करता हूं कि आप सब अपने कार्यों के द्वारा अन्य लोगों को भी हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित करते रहेंगे।

इस पुरस्कार का नाम श्रीमती इंदिरा गांधी जी के नाम पर रखा गया है, बिल्कुल सही है। राजभाषा विभाग की स्थापना का श्रेय उन्हीं को है। वे लंबे समय तक केन्द्रीय हिंदी समिति की अध्यक्ष रहीं और उसकी बैठकों में बराबर भाग लेती रहीं। वे इस बात की पक्षधर थीं कि केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों को हिंदी भाषा का कार्यसाधक ज्ञान होना ही चाहिए। यह उनकी भाषा के प्रति उनके लगाव का ही परिणाम था कि उन्होंने प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन, नागपुर तथा तृतीय हिंदी सम्मेलन, दिल्ली की अध्यक्षता की। हमारे देश की भाषाओं और उनके बीच हिंदी के स्थान के बारे में उनका बहुत ही स्पष्ट और व्यावहारिक दृष्टिकोण था। 10 जनवरी 1975 को नागपुर में प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए उन्होंने जो बात जिस भावुकता के साथ रखी थी, उसे मैं यहां दुहराना चाहूंगा। उन्होंने कहा था—

"भारत जैसे संयुक्त परिवार का अच्छा उदाहरण मिलना कठिन है। हर प्रत्येक मातृभाषा इस परिवार की पुत्री के समान है। ये सभी भाषाएं हमारी सांस्कृतिक-संपत्ति की समान उत्तराधिकारी हैं। ये भाषाएं भारत की राष्ट्रभाषाएं हैं, और इनमें से हिंदी भारत की राष्ट्रीय संपर्क की भाषा है, क्योंकि इस भाषा का परिवार सबसे बड़ा है।"

मुझे लगता है कि वस्तुतः भाषा के प्रति हमें संयुक्त परिवार का ही दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, जो हमारी संरचना की एक महत्वपूर्ण विरासत है। इसके अंतर्गत सहृदयता, सम्मान तथा समझदारी की बात बहुत मायने रखती है। इसके बिना कोई भी संयुक्त परिवार नहीं चलता। और मैं समझता हूं कि हिंदी भाषा के लिए भी इन्हीं गुणों की ज़रूरत है।

जब हम राजभाषा की बात करते हैं, तो हम सही मायने में अपने देश के सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर एक सच्चे लोकतांत्रिक व्यवस्था की बात करते हैं। मेरा यह मानना है कि राजभाषा हिंदी का विकास हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक विकास के समानान्तर हुआ है। 17वीं- 18वीं शताब्दी में जब हिंदी का रूप उभरना शुरू हुआ था, तभी से यह जन-साधारण के सम्पर्क की भाषा बन गई थी। इतिहास इस बात का प्रमाण है कि अंग्रेजों ने दक्षिण भारत में अपने राज्य प्रसार करते समय फौजी अफसरों के लिए दक्खिनी भाषा की जानकारी अनिवार्य कर दी थी। जॉर्ज ग्रियर्सन ने "लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया' के भाग-1 के प्रारम्भ में ही लिखा है—

"उन दिनों के कुछ अंग्रेज सौदागर निस्सन्देह धड़ल्ले से हिन्दुस्तानी बोल सकते थे।"

हमारे सामने इस बात के प्रमाण हैं कि 19वीं सदी में 'राजपुताने' में नियुक्त अंग्रेज अधिकारी वहां के राजाओं से हिंदी में ही पत्र व्यवहार करते थे। उस समय हमारे जितने भी प्रमुख व्यापारिक केन्द्र थे, उनकी सम्पर्क भाषा हिंदी थी। इसका एक बहुत बड़ा कारण यह था कि हिंदी भाषी क्षेत्र के अधिकांश मजदूर इन व्यापारिक केन्द्रों में काम करने जाया करते थे। इससे हिंदी भाषा के फैलने में बहुत मदद मिली। इन मजदूरों ने हिंदी को केवल देश में ही नहीं फैलाया, बल्कि विश्व में फैलाया। पिछले दिनों मैं जब त्रिनिदाद एवं टोबागो में भारतीयों के वहां पहुंचने के 150वें वर्ष के अवसर पर गया था, तब मैंने देखा कि वहां के लोग किस प्रकार भोजपुरी गीत गाते हैं, सुनते हैं और उन पर नृत्य करते हैं। मारिशस, सूरीनाम, फीजी और गुयाना में भी इन्हीं मजदूरों ने हिंदी को पहुंचाया।

बाद में जब हमारे देश में स्वतंत्रता आन्दोलन की शुरूआत हुई, तो हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने अपनी बात अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए हिंदी भाषा का सहारा लिया। यह काम केवल हिंदी क्षेत्र के नेताओं ने ही नहीं किया, बल्कि उससे भी कहीं अधिक अहिंदी भाषी क्षेत्रों के नेताओं ने किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती, केशव चन्द सेन, लोकमान्य तिलक, बाबूराव विष्णु पराडकर, सुब्रह्मण्य भारती, सुभाष चन्द्र बोस तथा विनोबा भावे आदि सभी ने भारतीय संदर्भ में हिंदी की आवश्यकता को खुले मन से स्वीकार किया। हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन के समय ही राष्ट्रभाषा की बात कितनी महत्वपूर्ण थी, इसके लिए मैं आप लोगों के सामने एक उदाहरण रखना चाहूंगा। सन् 1931 में संयुक्त भारत के चेम्बर ऑफ कामर्स का अधिवेशन कराची में हुआ था। उस अधिवेशन में गांधी जी ने अपना भाषण हिंदी में दिया था। उन्होंने कहा था—

"मेरे अंग्रेज मित्र क्षमा करेंगे कि जो कुछ मुझे कहना है, वह मैं राष्ट्रभाषा में कहूंगा। इस अवसर पर मुझे उस सभा की याद आ रही है, जो यहीं 1918 में बुलाई गई थी। बहुत बहस-मुबाहसे के बाद जब मैं इस सभा में आने को तैयार हुआ, तो मैंने उनसे प्रार्थना की कि मुझे हिन्दी या हिन्दुस्तानी में बोलने की अनुमति दी जाए। मैं जानता हूं कि इसके लिए प्रार्थना करना जरूरी नहीं था। फिर भी सभ्यता का तकाजा था, वरना वाइसराय को बुरा लगता। उन्होंने तुरन्त मुझे अनुमति दे दी, और तभी से इस मामले में मेरी हिम्मत और खुल गई है। और आज फिर मैं उसी जगह अपने उस अमल को दुहराने जा रहा हूं। और इस चेम्बर के सदस्यों से मैं विनय करूंगा कि आपका यह कर्तव्य है कि आप अपना सारा काम राष्ट्रभाषा में करें।"

अपने सार्वजनिक जीवन में मैंने पूरे देश का और विदेश में भी कई देशों का भ्रमण किया है। मैंने यह पाया है कि देश में हिंदी की स्थिति ऐसी होती जा रही है, कि लोग उसे समझने लगे हैं और उनमें इसे जानने और सीखने की उत्सुकता है। विदेशों में जो भारतीय बसे हुए हैं, वे एक-दूसरे से बातचीत करने के लिए अधिकतर हिंदी भाषा का ही उपयोग करते हैं। इसलिए मुझे ऐसा बिल्कुल नहीं लगता कि हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में, और उसके उपयोग में किसी तरह की कोई बहुत बड़ी दिक्कत है। लेकिन एक बात जरूर है कि इसके लिए हमारे लोगों में जो इच्छा-शक्ति होनी चाहिए, उसे अभी थोड़ा और बढ़ाना है। लोगों के दिल और दिमाग़ पर हिंदी के प्रयोग के बारे में जो हिचक और संकोच बना हुआ है, उसे तोड़ने की ज़रूरत है। लोग आज तक इस भ्रम के शिकार हैं कि यदि उन्होंने अपने बैंक का चैक हिंदी में काटा, तो शायद वह चैक भुनेगा नहीं। ऐसी स्थिति में यह देखना होगा कि लोगों के मन में गहरे रूप से बैठी हुई इस झिझक को कैसे दूर किया जाए। स्वाभाविक है कि यह तब तक दूर नहीं हो सकती, जब तक कि काम करने की शुरूआत न की जाए। जैसा कि अब दिखाई देने लगा है, धीरे-धीरे मंत्रालयों में सरकारी स्तर पर हिंदी में कामकाज करने की शुरूआत हो चुकी है। मैं समझता हूं कि धीरे-धीरे स्थिति और बेहतर बनेगी, और एक दिन ऐसा जरूर आएगा, जब इस तरह की झिझक पूरी तरह दूर हो जाएगी।

आज हमारे सामने एक नई विश्व-व्यवस्था उभर रही है। व्यापारिक रूप से पूरी दुनिया एक विशाल मण्डी में तब्दील होती जा रही है। ऐसी स्थिति में हमें यह देखना होगा कि हमें किस प्रकार के राजकाज की भाषा को जन्म देना है? हमारे राजकाज की भाषा कैसी होनी चाहिए? मैंने बातचीत के दौरान लोगों को यह शिकायत करते हुए पाया है कि राजभाषा हिंदी बहुत कठिन है। वह आम लोगों की समझ में नहीं आती। मुझे उनकी शिकायत में कुछ सच्चाई नज़र आती है। मुझे लगता है कि यदि हमें सचमुच हिंदी को राजभाषा बनाना है, तो उसे लोगों की भाषा के करीब लाना होगा। लोगों की भाषा के करीब लाने का मतलब यह नहीं है कि भाषा का स्वरुप ही समाप्त कर दिया जाए। लेकिन ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि ऐसी परिष्कृत भाषा तैयार की जाए, जो लोगों के व्यवहार में न उतर सके। यदि भाषा बहुत परिनिष्ठित हुई, तो वह बहुत व्यावहारिक नह[illegible] होगी, और इस प्रकार उस भाषा के विकास का शक्ति-स्रोत थम जाएगा। और यदि वह बहुत अपरिनिष्ठित हुई, तो उससे भाषा के स्वरूप के बिगड़ने की भी आशंका रहती है। इसलिए देखना यह होगा कि राजकाज के लिए किस प्रकार एक बीच का रास्ता निकाला जाए। मुझे इस समय बापू के [illegible] शब्द याद आ रहे हैं, जो उन्होंने सन् 1931 में कहे थे। उन्होंने कहा था—

"यदि स्वराज्य अंग्रेजी-पढ़े भारतवासियों का है, और केवल उनके लिए है, तो सम्पर्क-भाषा अवश्य अंग्रेजी होगी। लेकिन यदि वह करोड़ों भूख[illegible] लोगों, करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों, सताये हुए अछूतों के लिए है, तो सम्पर्क-भाषा केवल हिंदी हो सकती है।"

हमारे राजकाज की भाषा को इन्हीं करोड़ों लोगों की भाषा बनाना है, और इसके लिए यदि अन्य भाषाओं से शब्द लेने पड़े, तो उसके लिए परहेज़ नहीं किया जाना चाहिए। वैसे भी हमारे संविधान के अनुच्छेद 3[illegible] में हिंदी भाषा के ऊपर यह दायित्व डाला गया है कि वह "भारत [illegible] सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके[illegible] हिंदी को राजभाषा के रूप में विकसित किए जाते समय इस संवैधानि[illegible] तथ्य को ध्यान में रखना आवश्यक ही नहीं होगा, बल्कि व्यावहारिक [illegible] होगा।

मैं इस अवसर पर एक बात और भी कहना चाहूंगा। मुझे लगता है [illegible] हिंदी में लिखना ही जरूरी नहीं है, बल्कि उससे कहीं अधिक हिंदी [illegible] सोचना जरूरी है। जब हिंदी में सोचा जाएगा, और इसके बाद यदि कु[illegible] लिखा जाएगा, तो उससे जो हिंदी बनेगी, वह निश्चित रूप से मौलि[illegible] हिंदी होगी। उसी हिंदी में अपनी मिट्टी और अपनी संस्कृति के संर[illegible] होंगे। उसी भाषा में लोगों के सच्चे भाव होंगे, और उसी में स[illegible] अपनापन और राष्ट्रीयता की गहराई होगी। जब कोई भाषा सिर्फ अनु[illegible] की भाषा बनकर रह जाती है, तो धीरे-धीरे उसका अपना मौलिक स्व[illegible] खत्म होने लगता है। जब राजभाषा की बात आती है, तो हमें यह देख[illegible] होगा कि कहीं ऐसा तो नहीं कि वह अनुवाद की भाषा बनती जा रही [illegible] और यदि ऐसा लगता है, तो इस बारे में भी सोचा जाना चाहि[illegible]

आज 'हिंदी दिवस' है। सन् 1949 में आज ही के दिन हमारे स्वतं[illegible] सेनानियों और दूरदर्शी राष्ट्रीय नेताओं ने संविधान में हिंदी को राजभाषा [illegible] दर्जा दिया था। इसलिए इस विशेष अवसर पर मैं कहना चाहूंगा कि हि[illegible] के विकास का दायित्व देश के सभी लोगों का संवैधानिक और र[illegible] दायित्व है। यह हमारे देश की राष्ट्रीयता का एक अंग है। इसलिए ज[illegible] है कि देश का प्रत्येक नागरिक हिंदी के काम में अपना यथा-स[illegible] योगदान करे।

आप लोगों ने मुझे इस कार्यक्रम में आमंत्रित किया, इसके लि[illegible] आप सबका आभारी हूं।

जय हिन्द

भारत के संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अनुसार संघ की राजभाषा ...न्दी और लिपि देवनागरी है। तथापि 343(2) में यह व्यवस्था की गई थी कि 343(1) में किसी बात के होते हुए भी संविधान के प्रारंभ से पन्द्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था। तथापि, राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3 द्वारा यह पुनर्व्यवस्था की गई कि संविधान के प्रारंभ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग जारी रहेगा। यह पुनर्व्यवस्था तब तक जारी रहेगी जब तक कि सभी राज्यों के विधान मंडलों द्वारा, जिन्होंने हिंदी को अपनी राजभाषा ...रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिए जाएं और तब ...के संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात ऐसी समाप्ति के लिए ...के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर लिया जाए।

... एक द्विभाषी युग प्रारंभ हो गया। राजभाषा अधिनियम की धारा ...) के तहत महत्वपूर्ण दस्तावेजों को हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में ...करना अनिवार्य हो गया। अब प्रश्न यह कि इस द्विभाषी युग में हिंदी ...अंग्रेजी में से कौन-सी भाषा मुख्य राजभाषा और कौन- सी सहायक ...भाषा होगी। इस समस्या का समाधान राष्ट्रपति के 1960 में दिए गये ...श के पैरा 1(ग) से हो जाता है, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया कि ...65 तक अंग्रेजी मुख्य राजभाषा और हिन्दी सहायक रहनी चाहिए। ...किन 1965 के बाद हिन्दी संघ की मुख्य राजभाषा हो जाएगी और ...जी सहायक राजभाषा के रूप में चलती रहनी चाहिए।

...संविधान के अनुच्छेद 351 के अन्तर्गत हिंदी भाषा के विकास के लिए ...विशेष निदेश दिया गया। संविधान के इस विशेष निदेश से कई बातें ...होती हैं। एक तो यही की भारत (संघ) की राजभाषा उत्तर प्रदेश या ...र या मध्य प्रदेश की हिंदी नहीं है। भारत (संघ) की राजभाषा वही ...है जो पूरे देश की सामासिक संस्कृति को अभिव्यक्त करने का माध्यम ...के तथा इस योग्य बनाने के लिए भारतीय भाषाओं के रूप, शैली ...पदों को आत्मसात करते हुए अपने शब्द भंडार के लिए मुख्यतः ...त से और गौणतः भारतीय भाषाओं से शब्द ग्रहण करे। राष्ट्रपिता ...मा गांधी ने देश की राजभाषा के रूप में जिस भाषा की कल्पना की ...अनुच्छेद 351 में अन्तर्निहित परिकल्पना उससे मेल खाती है। गांधी ...स भाषा को हिन्दुस्तानी कहते थे। यह हिन्दुस्तानी, हिंदी, हिंदवी, ...खड़ी बोली और उर्दू आदि विभिन्न नामों से पुकारी जाती थी। ... में इसे दक्षिणी हिंदी, पूर्व में पूर्वी हिंदी, पश्चिम में पश्चिमी हिंदी भी ...जाता था। समय और स्थान के भेद से यह थोड़ा-बहुत बदलती जाती ...थापि मूल रूप में यह पूरे हिन्दुस्तान में बोली और समझी जाती थी। ...हिन्दुस्तानी भाषा उर्दू, हिन्दी और भारतीय भाषाओं के विनियम से ...ी, पल्लवित और विकसित हुई थी। यह किसी एक प्रदेश की भाषा ...ी बल्कि भारत के विभिन्न भाषा-भाषी साधुओं, संतों, भक्तों, दरवेशों, ...ं, व्यापारियों, तीर्थ-यात्रियों, सैलानियों के परस्पर मेलजोल से सम्पर्क ...विनिमय से, जन्मी और विकसित हुई थी। इसी भाषा को सधुक्कड़ी भी ...ा था। कुछ लोगों ने इसे खिचड़ी कहा। यह भी कहा गया कि ...न की भाषा है चाहें कोई इसे उर्दू कह ले या हिंदी या हिन्दुस्तानी (हफ़ीज अपनी बोली, मुहब्बत की बोली, न हिन्दी न उर्दू न हिन्दोस्तानी-हफ़ीज जालन्धरी)।

लगभग नौ सौ वर्ष पूर्व अमीर खुसरो ने फारसी का विद्वान होते हुए इस भाषा में कविता की शुरुआत की:

1. खीर पकाई जतन से, चरखा दिया चला।
   आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजा।।
2. एक नार ने अचरज किया, सांप मार पिंजरे में दिया।
3. एक थाल मोती से भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।
   चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे।।
4. एक नार दो को ले बैठी, टेढ़ी होके बिल में पैठी।
   जिससे बैठे उसे सुहाय, खुसरो उसके बल बल जाए।।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने "खड़ी बोली का कितना निखरा हुआ रूप है" कह कर अमीर खुसरो की इस भाषा की प्रशंसा की है। खुसरो की ये पहेलियां और मुकरियां लगभग 900 साल पुरानी हैं। कबीर की भाषा में भी इसके विविध रूप मिलते हैं। उर्दू के महान कवि मीर ने अपनी कविता की भाषा को हिन्दी कहा था : 'आया नहीं है लफ़्ज ये हिन्दी जबां के बीच।'

मीर के बाद उर्दू के दूसरे महान कवि ग़ालिब ने अपने को हिंदवी का शायर कहा था।

उर्दू के तीसरे महान कवि इकबाल ने भी हिन्दी शब्द का प्रयोग कितनी आत्मीयता के साथ किया है : 'हिन्दी हैं हम वतन हैं हिन्दुस्तां हमारा।'

मीर की एक और पंक्ति है—'इक जरा सी बात का विस्तार हो गया।' इस पंक्ति को सुनकर ऐसा लगता है कि यह जैसे सचमुच आज की समकालीन हिन्दी हो। ग़ालिब ने मीर से इसी भाषा को विरासत में लिया। यह बात और है कि उन्होंने उसे अरबी और फारसी के शब्दों से भारी भरकम अथवा बेझिल बनाने की भी कोशिश की। उर्दू के एक और बड़े कवि दाग़ ने लिखा है :

नहीं खेल है दाग़ यारों से कह दो, के आती है उर्दू जबां आते-आते

यहां उर्दू ज़बां से उनकी मुराद फारसी, अरबी अथवा संस्कृत से लदी-फदी भाषा से नहीं है। उनका आशय उसी सहज भाषा से है जिसे मीर 'हिन्दी' और ग़ालिब 'हिंदवी' कहा करते थे। दक्खन में वली दक्खनी ने भी इसी भाषा में शायरी की। आशय यही है कि उस ज़माने में हिंदी और उर्दू के बीच भाषा-भेद नहीं था मात्र लिपि-भेद था। कालान्तर में एक ओर से संस्कृत शब्दावली की भरमार से एक ही भाषा के दो रूप हो गए। लिपि के अन्तर से यह भेद तीव्र हो कर सामने आया। धार्मिक कट्टरता ने इस भेद को खाई की तरह चौड़ा कर दिया। आज हिंदी और उर्दू दो अलग-अलग भाषाएं हैं, चूंकि अब यह इतिहास की एक आयरनी है और इतिहास को झुठलाया नहीं जा सकता। हां उस दर्द को महसूस जरूर किया जा सकता। इस दर्द के अहसास को भी झुठलाया नहीं जा सकता। मैंने इस दर्द को कभी अपने एक मुक्तक में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है :

हर तरफ़ फैला हुआ संत्रास है
हम हुए तकसीम यह इतिहास है
एक मन है बहुत तुम से दूर है
एक मन बिल्कुल तुमहारे पास है।

हिंदी के सुपरिचित साहित्यकार अमृत राय ने इस दर्द के अहसास से उद्वेलित होकर अंग्रेजी में एक पुस्तक लिखी है : *दि हाउस दैट डिवाइडेड।* निष्कर्ष यह है कि रेख्ता कहो या खड़ी बोली, उर्दू कहो या हिंदी, यह वही भाषा थी जिसे गांधी जी हिन्दुस्तानी कहना पसंद करते थे। भारत के संविधान के अनुच्छेद 351 में राजभाषा के जिस स्वरूप की परिकल्पना की गई है वह गांधी जी की हिन्दुस्तानी के बेहद निकट है और भाषा के इस स्वरूप का अपना इतिहास है जो लगभग 900 वर्ष पुराना है।

अंग्रेजों के भारत में आने से पूर्व यही हिंदी या हिन्दुस्तानी भारत की सम्पर्क भाषा थी। अंग्रेजों के आने के बाद भी यह सम्पर्क भाषा बनी रही। सिर्फ मुट्ठी-भर अंग्रेजीदां लोगों ने इस ऐतिहासिक सत्य को झुठलाया। उन्होंने हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी को भारत की सम्पर्क भाषा के रूप में मान्यता दी और उसे भारतीय जनता पर थोपा। हिन्दी को किसी ने नहीं थोपा। वह तो स्वतः स्वाभाविक रूप में पिछले 900 वर्षों से भारत के साधुओं, संतों, सूफियों, दरवेशों, फकीरों, व्यापारियों और तीर्थाटकों के बीच आपसी विनिमय और आदान-प्रदान की भाषा रही है। गुरूनानक देश के बाहर गए। मक्का तक हो आए। इसी भाषा के सहारे। इसी उर्दू-हिंदी मिश्रित हिन्दुस्तानी (जिसमें अन्य भारतीय भाषाओं के शब्द, रूप और पद भी मिलते गए) का व्यवहार करते हुए उन्होंने देश-विदेश में अपने सन्देश का प्रचार और प्रसार किया :

राम की चिड़िया, राम का खेत। खाओ चिड़ियों, भर भरपेट।।

मुगल शहज़ादे दारा ने भी इसी हिन्दी या हिन्दुस्तानी में कविता की।

ऋषि दयानन्द प्रारंभ में संस्कृत में भाषण दे कर अपना संदेश सम्प्रेषित करते थे। वे स्वयं गुजराती थे। लेकिन आचार्य केशचंद्र सेन ने, जो बंगाली थे, उन्हें परामर्श दिया कि वे हिन्दी सीखें और हिन्दी में भाषण दें तो अधिकांश जनता उनके विचारों से लाभान्वित होगी। ऋषि दयानन्द ने हिन्दी सीखी, हिन्दी में भाषण देना शुरू किया और फिर अपनी किताबें भी हिन्दी में लिखी। उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' अपने समय के हिंदी गद्य का एक अच्छा-खासा उदाहरण है। नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने आज़ाद हिंद सेना के कमांड हिंदी में देने की सर्वप्रथम शुरूआत की। कहते हैं कि उन्होंने गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा रचित राष्ट्रीय गान का भी हिंदी में पद्यानुवाद किया था। शहीद भगत सिंह पंजाबी थे लेकिन हिंदी बोलते थे। अब यह विचारणीय है कि अमीर खुसरो, रहीम, दारा, गुरु नानक, गुरु गोविन्द सिंह, ऋषि दयानन्द और सुभाष चन्द्र बोस जैसे महापुरूषों पर हिंदी कौन थोप सकता था। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी पर जब अंग्रेज अंग्रेजी नहीं थोप सके तो उन पर हिन्दी को कौन थोपता! इन सभी ने स्वेच्छा से हिन्दी को अपनाया तो आखिर क्यों अपनाया ? स्वयं अंग्रेजों ने कलकत्ता में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना की तो हिन्दी गद्य लिखवाने के लिए मुंशी सदासुख लाल, सैयद इंशा अल्ला खां, लल्लू लाल और सदल मिश्र को खड़ी बोली गद्य की पुस्तकें तैयार करने का कार्य सौंपा। आखिर क्यों?

ये सभी तथ्य इस सत्य के सबूत हैं कि अंग्रेजों के प्रचलन से हिन्दी ही भारतीय जनता के बीच सम्पर्क-भाषा की भूमिका अदा कर थी। दरअसल यह भूमिका वह सेकड़ों वर्षों से अदा कर रही है

कुछ लोगों का यह विचार हो सकता है कि हिन्दु-मुसलमानों के आपसी विचार-विनियम की भाषा 'रेख्ता' थी; हिन्दी नहीं थी। शायद कहना चाहेंगे कि 'रेख्ता' और हिन्दी दो अलग ज़बाने थीं। रेख्ता के सब बड़े उस्ताद मीर हुए हैं। स्वयं ग़ालिब ने कहा था :

रेख्ते में तुम्हीं उस्ताद नहीं हो ग़ालिब
कहते है अगले जमाने में कोई मीर भी था।

लेकिन रेख्ते के ये दोनों उस्ताद अपने को हिंदी/हिंदवी का शायर मा रहे थे तो क्या इनमें यह स्पष्ट नहीं होता कि रेख्ता/हिंदवी/हिंदी एक ही ज़बान के अलग-अलग नाम थे।

लिपि भेद और फिर अरबी-फारसी तथा संस्कृत शब्दों के इस भेद को तीव्र किया। धार्मिक कट्टरता, [illegible] की तीव्रतर किया।

आज भी हिंदी के सबसे बड़े कथाकार प्रेमचंद हैं। वह उ महान कथाकार थे। उनकी रचनाएं देवनागरी में छपतीं थीं तो हिन्दी जाती थीं। उर्दू-लिपि में छपती थी तो उर्दू कहलाती थीं। ऐसी मिसालें हैं। सबसे ताज़ा मिसाल हंसराज 'रहबर' का है जो 19 लगातार लेखन करते रहे। दोनों ही भाषाओं के (हिंदी और उ लोकप्रिय थे। उर्दू और हिन्दी आज दो अलग-अलग भाषाएं हैं गोस्वामी तुलसीदास की पंक्ति 'कहियत भिन्न न भिन्न' ही को

अब देवनागरी लिपि के बारे में भी कुछ चर्चा कर ली जाए। विनोबा हिंदी भाषी नहीं थे। उनका कहना था कि देवनागरी सर्वा वैज्ञानिक लिपि है। देवनागरी लिपि सीखने का अर्थ क्या है? सं पालि, प्राकृत, अपभ्रंश और हिंदी का सारा वाङ्मय तथा देवनागरी में लिखा गया। मराठी, नेपाली, कोंकणी, सिंधी की भी देवनागरी है। गुजराती की लिपि देवनागरी से बहुत मिलती-जुलती अन्य भारतीय भाषाओं में कुछेक को छोड़कर अधिकांश भारतीय की लिपियों में और देवनागरी में काफी समानता है। ऐसी स्थि देवनागरी को जानने का अर्थ है देशभर की समेकित संस्कृति (क कल्चर) और इथॉस को उसके मूल स्वरूप में जानने और पह योग्य हो जाना। यह कार्य रोमन लिपि नहीं कर सकती।

विश्व-भर में अंग्रेजी भाषा और रोमन लिपि का अपना विशिष्ट म उससे इंकार नहीं किया जा सकता। लेकिन भारत की सामासिक और भारत के इथॉस की संवाहिका अंग्रेजी भाषा और रोमन लिपि सकती। भारत में अधिक दस-बीस प्रतिशत लोग अंग्रेजी भाषा अ लिपि जानते हैं। ये दस-बीस प्रतिशत देश की जनसंख्या का बहु हैं। लोकतंत्र का भी यही तकाज़ा है कि हिंदी ही इस देश की सम्प और देवनागरी इस देश की सम्पर्क-लिपि हो। यह कोई नई या देने वाली प्रस्तावना नहीं है।

अंग्रेजों के आने से पहले सैकड़ों वर्षों से हिन्दी इस सम्पर्क-भाषा और देवनागरी इस देश की सम्पर्क-लिपि रही है

— राजकु

प्राचीन से अर्वाचीन की ओर

—ज्योतिषाचार्य नन्दन मिश्र

जिस प्रकार हम रात्रि के बाद दिन में प्रवेश करते हैं, अन्धकार से प्रकाश में प्रवेश करते हैं, अज्ञान से ज्ञान में प्रवेश करते हैं, गत से आगत की तरफ भी हम ठीक उसी प्रकार जा रहे हैं। सदियों से हम एक ऐसी कड़ी से जुड़े हुए हैं जिस कड़ी के द्वारा हम अतीत के सहारे वर्तमान तथा वर्तमान के सहारे भविष्य की ओर अग्रसर हो रहे हैं। इस क्रिया का सम्पादन जिस माध्यम से हो रहा है, उसे हमारे प्राचीन महर्षियों ने काल की संज्ञा दी। मध्य युग में इस शब्द में परिवर्तन आया और इसे मध्य युग के परिवेश में "समय" के नाम से जाना जाने लगा। आधुनिक परिवेश में उसी को अंग्रेजी में टाइम शब्द से विभूषित किया गया। अन्वेषकों में प्राचीनअन्वेषकों से लेकर आधुनिक अन्वेषकों तक के कार्य-काल में समय को निश्चित करने के लिए किसी न किसी यंत्रों का माध्यम अवश्य लिया गया। उस माध्यम में जुड़ी हुई कड़ी ही हमें इस दिशा की तरफ इंगित करती हैं, जिस दिशा में हम आज चल रहे हैं उसमें भूतकाल का विशेष योगदान प्रशंसनीय है। हम कल के बाद आज में प्रवेश कर रहे हैं परन्तु हमें आज का वर्तमान नहीं, मात्र भविष्य ही दिखलाई दे रहा है।

हम इसे कभी नहीं भूल सकते कि हमारा भूतकाल, प्रत्येक वर्तमान काल के लिए एक आधार स्तम्भ है और हम इसी आधार के सहारे वर्तमान को प्राप्त कर पाते हैं। हम वर्तमान में जी रहे हैं या कुछ भी कर रहे हैं, उसमें भूतकाल की एक अहम भूमिका है। हम बिना भूतकाल से कुछ शिक्षा पाए अथवा भूतकाल के अनुभव के बगैर वर्तमान में जी भी नहीं सकते हैं, और यदि वर्तमान में हम जीना ही चाहते हैं, यदि वर्तमान में हमें कुछ करना ही पड़ रहा है, तो उसमें भूतकाल का एक विशेष अनुभव हमारे साथ है। यदि नहीं होता तो हम वर्तमान को प्राप्त ही नहीं कर पाते। हम आज जो विकास कर रहे हैं इसमें भी भूतकाल की बहुत बड़ी प्रेरणा रही है। भूतकाल हमारा बहुत ही सहयोगी रहा है जिसमें हमने वर्तमान काल में जीने की शिक्षा पाई, वरना वर्तमान में हम कैसे पहुंच पाते कैसे जी पाते? रह गई बात भविष्य की, तो हम अपने आगे आने वाली भविष्य की पीढ़ी को या भविष्य काल को अपना क्या सहयोग दे रहे हैं? हमारे वर्तमान के कर्मों से भविष्यकाल को आखिर क्या मिल रहा है? हम आने वाले कल को आज ही, क्या प्रदान कर रहे हैं? क्योंकि वर्तमान काल के कर्मों की छाप भविष्य पर पड़ना निश्चित है। आज जो हम कर रहे हैं उससे जुड़े हुए आने वाले काल में हम आगे बढ़ते हुए भी उसे देख नहीं पाते। आने वाले कल में हम प्रकाश में अपने को जाता हुआ देख रहे हैं पर इधर हमारा वर्तमान भूत अंधकार बनता जा रहा है, और हम भी इसी काल में भूत बनते जा रहे हैं। परन्तु हमें आभास है तक नहीं है। आज आवश्यकता है हमें वर्तमान में जीने की।

हम सभी कालों में विज्ञान शब्द से जुड़ रहे हैं, आज हमने जो भी ज्ञान पाया है उसमें ही हमारे बीते हुए भूतकाल के विज्ञान का अनुभव साथ-साथ है। आज जो विज्ञान पुष्पित एवं पल्लवित हो रहा है उसमें भी हमारे प्राचीन अन्वेषकों का विशेष योगदान रहा है। हमारे प्राचीन जो भी महर्षि हुए, उन्हें भी वैज्ञानिक ही माना जाता रहा। आज हम जो भी नवीन में प्राप्त कर रहे हैं, उसमें प्राचीन का विशेष योगदान रहा है। अंधकार के युग में आदि मानव को जब कुछ सोचने और समझने की उत्सुकता हुई तो उसे चारों ओर से घिरा हुआ तिमिराच्छन्न वातावरण कुछ अजीब भयावह सा लगा। फिर इधर-उधर काफी सोचने और दौड़ धूप करने पर भी जब उसे कुछ अनुभूति नहीं हुई तो, उसे एक प्रकाश की अनुभूति अवश्य हुई जिसमें उसने खुद को देखने को अनुभूति प्राप्त की। उसी अनुभूति में उसने खुद के होने का अनुभव प्राप्त किया। उसने अपनी नजर इर्दगिर्द दौड़ाई तो उसे चारों तरफ धवल प्रकाश दिखाई दिया, जिसमें उसने वनस्पतियों का अवलोकन किया। वनस्पतियों को देखने के बाद उसने उन्हें छूना चाहा। उसने उत्सुकतावश किसी एक वनस्पति को छूने के लिये अपना हाथ आगे बढ़ाया, फिर आगे चलने की भूमिका का अनुसरण किया, उसके हाथ मे एक वनस्पति टूटकर आई, परन्तु हाथों में दर्द की अनुभूति हुई फिर खून निकलने लगा। अपने रक्त को मानव ने बड़े विस्मय से देखा, परन्तु उसकी समझ में कुछ नहीं आया। शायद उसने किसी कांटेदार वृक्ष की टहनी की भूल से हाथ में ले लिया था। फिर उसने चुभे हुए हाथ में कांटे, जो दर्द की अनुभूति दे रहे थे उन्हें निकाला फिर उसे अपने पास रख लिया। अब वह प्रकाश में सब कुछ देख रहा था। उसने ज़मीन देखी आसमान देखा और खुद को भी देख लिया, बस, फिर क्या था? प्रारम्भ हो गई विचारों की शुरूआत। सहसा ज़मीन पर बैठ गया फिर उसने अपनी नज़र घबराकर बंद कर ली, उसे नींद आ गई और वह सो गया। नींद प्रातःकाल ही टूटी, फिर वह उठा और आंख मलते हुए चारों तरफ देखना शुरू किया, फिर उसने उस काल के समय उगते हुए उस सूर्य को देखा जो प्रकाश ही प्रकाश बिखेर रहा था। उसे आकाश में जलता हुआ गोला जानकर एक टक उसी की तरफ देखने लगा, जिसमें उसे एक ज़ीरो दिखलाई दिया जो काफी ज्वलनशील एवं प्रकाश की अनुभूति उसके मन में कर रहा था। हाथ में लिये हुए कांटे को उसने बड़े गौर से देखा। उसे कुछ करने की उत्सुकता हुई तो उसने फिर ज़मीन पर देखकर हाथ में लिए हुए कांटे से इधर-उधर रेखाओं जैसा कुछ खींचना शुरू कर दिया; उसे लगा कि इन रेखाओं का कुछ न कुछ अवश्य महत्व हो सकता है, फिर उसने रेखा खींचते-खींचते जो गोलाकार वस्तु के रूप में सूर्य को देखती उसी के आकार की रेखा का भी निर्माण अपने हाथों में लिए हुए उस कांटे से करने लगा। फिर शुरू हो गया रेखा और शून्य का गणित। समय बीतता गया फिर प्रारम्भ हो गया रेखा और शून्य का मिलाजुला भाव। विज्ञान के रूप में एक-एक ईट बनकर नींव से लेकर छत तक जा पहुंचा। हमारे आदिमानव ने रेखा और शून्य को लकड़ियों, पत्थरों आदि पर अंकित कर दिया। धीरे-धीरे हमारे प्राचीन महर्षियों का युग आया। महार्षियों ने उस लकड़ी एवं पत्थर पर खुदे हुए रेखा एवं शून्य को देखा और उसे संगृहीत किया। फिर उन्होंने उसी शून्य और रेखाओं को मिलाकर शब्दों

एवं अंको को लिपिबद्ध करना शुरू किया। इसके लिये उन्होंने वनस्पतियों की स्याही बनाकर वनस्पति के ही कलम से वनस्पतियों के ही पत्तों पर लिखना शुरू किया। जिसमें कहीं-कहीं ताड़ के पत्तों एवं कहीं-कहीं भोज पत्रों का भी प्रयोग किया गया। हमारे प्रचीन महर्षियों ने रेखा और शून्य पर काफी खोजबीन करने के बाद धीरे-धीरे सभी क्षेत्रों में विकास किया। फिर शुरू हो गया रेखा-गणित का पैमाना, फिर उसके बाद शून्य के माध्यम से अंकगणित का सृजन किया, फिर रेखा और शून्य के मिले-जुले पैमाने पर एक नये विज्ञान का ढांचा बनने लगा, जिसे हमारे प्राचीन महर्षियों ने आध्यात्म विज्ञान का रूप दिया, अब वही रूप निरंतर विकसित होता गया। रेखा और शून्य के मिले-जुले पैमाने पर अध्यात्म विज्ञान ने शब्दों का निर्माण किया। फिर

नित्य नए आविष्कार पर आविष्कार होने लगे, अध्यात्म विज्ञान काफ़ी पुष्पित एवं पल्लवित हुआ, यहां तक कि महर्षियों ने भी रथ से लेकर विमानों तक का आविष्कार किया। अनेकों औषधियों का, यंत्रों का तथा उसके साथ ही नित्य उपयोग में आने वाली आवश्यक सभी वस्तुओं ने भी अपने को आविष्कृत पाया। अनेकों क्षेत्रों में अध्यात्म ने प्रगति की, अनेकों अमोघ शस्त्रों का आविष्कार किया गया। आध्यात्मिक वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर उत्तमता की कसौटी पर कसा हुआ था दधीची के हड्डी से बना वह दिव्य वज्र। अनेकों दिव्य अस्त्रों का भी आविष्कार किया गया। उत्तमता हमारे प्राचीन महर्षियों ने देव और दानव की लड़ाई में इन्हीं दिव्य अस्त्रों का प्रयोग किया था। सतयुग से लेकर द्वापर युग के बीच में महर्षियों द्वारा निर्मित ही अस्त्रों एवं शस्त्रों का प्रयोग किया गया। रावण के ज़माने में भी जो विज्ञान का विकसित रूप था उसमें हमारे प्राचीन महर्षियों (वैज्ञानिकों) का विशेष योगदान रहा। हम द्वापर युग तक वनस्पतियों के ही आधार पर चले हैं। जब से हम प्रबुद्ध हुए; तबसे हमने वनस्पतियों के साथ छेड़खानी करनी शुरू कर दी, और लगा नष्ट होने फिर हमारा हरा-भरा भूभाग। रावण के ज़माने में बिना ईधन के ही विमान काफी महत्वपूर्ण थे, उसमें मात्र यंत्रों का ही गणित फिट था जो बिना ध्वनि के ही तीव्र गति से कहीं भी आ जा सकते थे, यहां तक कि द्वापर युग में ही महाभारत की लड़ाई में काफ़ी दिव्यास्त्रों का प्रयोग हुआ। महाभारत के समय में ही कितने दिव्यास्त्र प्रयोग द्वारा नष्ट कर दिये गये। फिर कई प्राचीन आविष्कार भी नष्ट हुये। द्वापर के बाद कलियुग प्रारम्भ होने पर महाभारत प्रयोग के बाद बचे हुए शेष अस्त्रों, शस्त्रों एवं शेष नष्ट होने से भग्नावशेष एवं आविष्कार बचे हुए हमें काफी संख्या में प्राप्त हु प्राचीन महर्षियों के लिखे हुए भोजपत्रों एवं ताड़ के पत्तों के रूप हुए; जिसमें महर्षियों ने अपना आविष्कार लिखा था। फिर तो हमारे वि ने अपने को काफी प्रगतिशील दिशा में बढ़ता पाया। फिर तो विज्ञान पुष्पित एवं पल्लवित होने का बराबर ही अवसर प्राप्त होता मोहनजोदड़ो, हड़प्पा आदि की खुदाई में हमें जो भी तथ्य या संकेत हुए उससे भी हमने या हमारे विज्ञान ने बहुत-कुछ विकास किया जिस आधार भी रेखा और शून्य ही हुआ जिसे आधुनिक अन्वेषकों ने भी विज्ञान के रूप में माना। रेखागणित के क्षेत्र में पाइथागोरस जैसे वि मानवों की विशेष भूमिका रही है। आधुनिक युग का भी विज्ञान हमारे शून्य और क्रास पर आधारित है, जिसे हमारे आध्यात्मिक वैज्ञानिक युग हमारे प्राचीन महर्षियों ने अपनी अन्वेषणा से काफ़ी कुछ विकास को प्र किया था। फिर हमारे अर्वाचीन को बराबर प्राचीन से कुछ न कुछ सह मिलता ही गया। प्राचीन ज़माने में जहां तक रेखा और शून्य के आधार हमारे अध्यात्म विज्ञान ने काफ़ी कुछ विकास किया, फिर हमने टूटे- भूतकाल के अनेकों उपकरणों को इकट्ठा कर उसे विकास का रूप दि तभी से हमारा आधुनिक विज्ञान पुष्पित एवं पल्लवित होने लगा, अ कोई भी सवारी या यंत्र बिना रेखा एवं शून्य के सहयोग से नहीं सकता। किसी भी यंत्र आदि के निर्माण में रेखा और शून्य का ही वि योगदान रहा है। साइकिल से लेकर हवाईजहाज तक, मशीनरीयों से ले फ़ैक्ट्रियों तक बिना शून्य और रेखा के सिद्धान्त से अलग नहीं हैं । च और धुरी, यहां तक की बैरिंग आदि शून्य और रेखा के ही आधार इंगित करते हैं। कम्प्यूटर में सूक्ष्म रेखाओं और सूक्ष्म बिन्दुओं लिपिबद्ध तरीके से इस प्रकार फिट किया गया है जिससे उन स कम्प्यूटरों से काफी प्रभावशाली एंवं महत्वपूर्ण कार्य किये जा रहे रेखागणित का आधार अंकगणित हैं। जिसमें रेखा एक लम्ब है, तो ब एक आधार हैं, और इसी बिन्दु से लगे हुए इसी प्रकार बिन्दु एवं लम्ब मिला-जुला पैमाना है हमारा आधुनिक विज्ञान, जिसे हम अपने वर्तमा जी रहे हैं।

सभी निष्कर्षों के आधार पर माना जाय तो ज्ञात होगा कि हम जि अर्वाचीन काल में चल रहे हैं उसमें हमारे प्राचीन काल की एक बहुत-ब भूमिका रही है। आज हम बीते हुए कल की सीढ़ी पर अपना पैर रख उठ खड़े हुये हैं। हम कल प्राचीन थे, आज अर्वाचीन हैं।

> "अगर आज हिन्दी भाषा मान ली गई तो वह इसलिए नहीं कि वह किसी प्रांत विशेष की भाषा है, बल्कि इसलिए कि वह अपनी सरलता, व्यापकता तथा क्षमता के कारण सारे देश की भाषा है"
>
> –नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

भारत में परिवार कार्यक्रम : एक नज़र

— एस॰सी॰ शर्मा

भारत में राष्ट्रीय परिवार कार्यक्रम 1951-52 में आरम्भ किया गया था। इसका उद्देश्य, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अनुरूप जन्मदर को घटाकर, जनसंख्या को स्थिर करना था।

परिवार कल्याण की जागरूकता बढ़ाने के लिए, सभी संप्रेषण माध्यमों और विभिन्न शैक्षणिक पद्धतियों द्वारा किए गए सतत प्रचार प्रयासों से इस कार्यक्रम को बहुत लाभ हुआ है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 1992-93 के परिणामों से पता चलता है कि परिवार कल्याण की जानकारी 95 प्रतिशत लोगों को है। इसके फलस्वरूप अब परिवार कल्याण सेवाओं की मांग बढ़ गई है। बढ़ी हुई मांग को पूरा करने के लिए सेवाओं का और विस्तार किया जा रहा है।

जन्म-दर में गिरावट

इस कार्यक्रम में किएं गंए प्रयासों के परिणाम स्वरूप जन्म-दर, जो सन् 1951 में 42 प्रति हजार थी, घटकर सन् 1993 में 28.7 हो गई है। प्रति महिला बच्चों की पैदावार मापक, कुल प्रजनन-दर, जो पचास के दशक में 6 थी वह सन् 1992 में घटकर 3.6 रह गई है। इस क्रम में जनसंख्या की सहज वृद्धि-दर 1992 में घटकर 1.9 प्रतिशत रह गई है। मृत्यु-दर में भी गिरावट आई है, यह सन् 1951 में 27 प्रति हजार थी, वह घटकर सन् 1993 में 9.3 रह गई है। यह जनांकिकी में बदलाव का प्रथम दौर है।

परिवार कल्याण कार्यक्रम की शुरूआत से 31.3.94 तक, भारत को 16.88 करोड़ अनचाहे जन्मों को रोकने में सफलता मिली है। इसका यह तात्पर्य है कि, यदि ये जन्म नहीं रोके गए होते तो, जनसंख्या की घातीय वृद्धि-दर, जो 1981-91 में 2.14 थी वह बढ़कर 2.71 हो जाती। इसके बावजूद अभी जनसंख्या में अन्तर्राज्यीय अंतर बहुत है। एक तरफ केरल, तमिलनाडु और गोवा जैसे राज्य हैं जिन्होंने प्रजनन का प्रतिस्थापन स्तर प्राप्त कर लिया है। दूसरी ओर हिन्दी भाषी बड़े राज्य उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान है जिनकी प्रजनन और मृत्यु-दर चिंताजनक है। इसे तुरन्त नियंत्रित करने की ज़रूरत है.

मातृ एवं शिशु कल्याण कार्यक्रम

उच्च जन्म-दर और उच्च नवजात मृत्यु-दर में घनिष्ठ संबंध होने के कारण सन् 1985 में मातृ एवं शिशु कल्याण कार्यक्रम की महत्वपूर्ण शुरूआत हुई। व्यापक प्रतिरक्षण कार्यक्रम जिसे बाद में प्रौद्योगिकी मिशन का नाम दिया गया, का 1989-90 तक सभी ज़िलों में विस्तार कर दिया गया; इसमें उल्लेखनीय उपलब्धि प्राप्त हुई है। सन् 1985-86 में डी॰पी॰टी॰, ओ॰पी॰वी॰, बी॰सी॰जी॰, मिजिल्स और टी॰टी॰ के प्रतिरक्षण की व्याप्तता दर क्रमशः 41.12, 35.66, 28.84, 1.34 और 39.85 प्रतिशत थी वह बढ़कर सन् 1993-94 में क्रमशः 92.85, 93.23, 96.69, 98.30 और 82.12 प्रतिशत हो गई है।

प्रतिरक्षण की व्यापकता के कारण उन बीमारियों में गिरावट आई है जिन्हें प्रतिरक्षण (टीके) द्वारा रोका जा सकता है। प्रतिरक्षण कार्यक्रम का प्रभाव नवजात शिशु मृत्यु-दर में कमी आने से सिद्ध होता है। सन् 1987 में यह दर 95 प्रति हजार से घटकर सन् 1993 में 74 रह गई है।

परिवार कल्याण के सभी कार्यक्रमों की खासियत यह है कि यह सभी बच्चों के लिए समान रूप से लागू किया जा रहा है, चाहे वह लड़का हो या लड़की। सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम के लिए विशेष प्रयास किए जा रहे हैं जिनका उद्देश्य गर्भवती स्त्री के स्वास्थ्य-स्तर का सुधार करना है। इसमें पारम्परिक दाईयों को प्रशिक्षण दिया जाता है, उन्हें किट प्रदान किए जाते हैं। प्रथम रेफरल चिकित्सातंत्र को सुदृढ़ किया जा रहा है तथा असामान्य प्रसवों के मामले सुरक्षित प्रसव के लिए अस्पताल भेजे जाते हैं।

स्वयंसेवी संस्था और सूचना, शिक्षा एवं संप्रेषण

परिवार कल्याण सेवाओं की अदायगी के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं का काफी सहयोग लिया जाता है। आज अनेक स्वयंसेवी संस्थाएं सेवाओं की अदायगी में सहयोग कर रही हैं। 1993-94 में ऐसी संस्थाओं पर 12 करोड़ रुपये व्यय किए गए। इन पर मौजूदा वर्ष में 15 करोड़ रुपये व्यय होने की संभावना है।

जनसंचार और सीधे संवाद को प्रोत्साहन दिया जा रहा है ताकि लाभार्थी को कोई भ्रांति या संदेह न रहे और वे कार्यक्रम और समस्या को स्पष्टता से समझ सकें। 1994-95 के 33.50 करोड़ के बजट में सीधे संवाद के लिए 15 करोड़ रुपये रखे गए हैं।

जन्म नियंत्रण उपाय

राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम के अधीन अनेक गर्भ निरोधक उपाय उपलब्ध हैं इनमें निरोध, कापर-टी, खाने वाली गोलियां, महिला नसबंदी और पुरुष नसबंदी शामिल हैं। परिवार परिसीमन के लिए सामाजिक विपणन योजना ने हाल ही में एक नई निरोधक गोली जिसे सहेली के नाम से जाना जाता है, का विपणन शुरू कर दिया है। इस स्वदेशी खोज और विकास के परिणामस्वरूप तैयार की गई है यह सेंट क्रोमन गोली है। भारत में अभी नारप्लांट और गर्भनिरोधक सूई का प्रचलन राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में नहीं किया गया है।

महिला नसबंदी और पुरुष नसबंदी के मामले में व्याप्त असंतुलन को दूर करने के लिए पुरुष नसबंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। इस दिशा में हाल ही में एक नई तकनीक से पुरुषों की नसबंदी को और सुविधाजनक बना दिया गया है। इसमें बिना चीरा और टांके के नसबंदी की जाती है। परिवार कल्याण के साधन अपनाने में पुरुषों की भागीदारी बढ़ाने के लिए गर्भरोधी वैकसीन तैयार करने के लिए खोज और प्रयत्न किए जा रहे हैं, जिससे पुरुषों के लिए लिए भी कई गर्भनिरोधक विकल्प सुलभ हो रहे हैं।

प्रसव-पूर्व जांच तकनीक (दुरुपयोग रोकने के उद्देश्य से विनियमन। और प्रतिरोध) अधिनियम, 1994

गर्भस्थ शिशु की प्रसवपूर्व जांच कराकर लड़कियों का भ्रूण नष्ट किए जाने पर पाबंदी लगाने और जांच तकनीक का दुरुपयोग रोकने के लिए एक कानून बनाया गया है इसका नाम है प्रसवपूर्व जांच तकनीक (दुरुपयोग रोकने के उद्देश्य से विनिमियन और प्रतिरोध) अधिनियम 1994। इस अधिनियम को सन् 1994 के मानसून अधिवेशन में संसद ने पारित किया। इसे राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो गई है और यह राजपत्र में छप चुका है। इस कानून में व्यवस्था है कि यह जांच कुछ विशेष परिस्थितियों में ही कराई जा सकती है और इसकी जांच केवल पंजीकृत संस्थान में ही हो सकती है। कानून तोड़ने पर दण्ड का प्रावधान है। इस कानून को लागू करने की दिशा में नियम बनाए जा रहे हैं और कानूनी तंत्र स्थापित करने के उपाय किए जा रहे हैं।

परिवार कल्याण तंत्र

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण तंत्र का व्यापक विस्तार है इसके लिए पिछले चार दशकों में देश भर में उपकेन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र बनाए गए हैं। अब समाज के हर वर्ग के लिए देश के कोने-कोने में इन सुविधाओं का जाल-सा बिछा है। सन् 1993-94 के अंत तक देश में 1,31,471 उपकेन्द्र, 21,024 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और 2,293 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र थे।

दर-असल परिवार कल्याण कार्यक्रम का संबंध नागरिकों के व्यक्तिगत जीवन से है। इसके साथ अन्य अनेक समस्याएं जैसे गरीबी, स्त्रियों में अशिक्षा, कम उम्र में गृहस्थी का बोझ और अन्य सामाजिक सांस्कृतिक घटक जिसमें पुत्र-मोह भी शामिल है, प्रमुख बाधाएं हैं। इन परिस्थितियों में यह कहा जा सकता है कि अपने लक्ष्य की प्राप्ति में इस कार्यक्रम को जो सफलता मिली है वह सभी के सहयोग का परिणाम है।

इस क्षेत्र में जितने प्रयत्न किए जा रहे हैं और जितने लोगों को कार्यक्रम का संदेश पहुंचाया जा रहा है, आंकड़े उसका हिसाब देने की क्षमता नहीं रखते। परन्तु सबसे सुखद स्थिति तो वह होगी, जब घर-घर में जन-जन तक, छोटे, सुखी और स्वस्थ परिवार का संदेश गूंजेगा।

राष्ट्र के एकीकरण
के लिए सर्वसामान्यभाषा से
अधिक बलशाली कोई
तत्व नहीं है। मेरे विचार में
हिन्दी ही ऐसी भाषा है।

– लोकमान्य तिलक

हिन्दी : एक परिप्रेक्ष्य

— दयानाथ लाल

यह भारत की एक प्राचीन एवं महत्वपूर्ण भाषा है पर इसकी उत्पत्ति कब हुई, कैसे हुई और किस परिस्थिति में हुई, इस विषय को लेकर भिन्न-भिन्न विचार-धाराएं हिन्दी जगत् में देखने को मिलती हैं।

कहा जाता है कि संस्कृत की "स" ध्वनि फारसी में "ह" हो जाती है। इसीलिए जब फारसी भाषा-भाषियों का सम्पर्क भारत के सिन्ध प्रदेश से हुआ तो सिन्ध को हिन्द, सिन्धु को हिन्दु तथा सिन्धी को हिन्दी कहा गया। सदियों तक हिन्दी के लिए कई नामों का प्रयोग होता रहा। जैसे-हिन्दवी, हिन्दी, हिन्दुस्तानी, जबाने-उर्दू-ए-मुअल्ला, जबाने के हिन्दुस्तान, देहलंवी और न मालूम क्या-क्या! जो हो, लेकिन हिन्दी शब्द फारसी की ही देन है और हिन्दुस्तानी महात्मा गांधी की। नागरी और फारसी दोनों लिपियों का प्रयोग करने वाली भाषा को महात्मा गांधी "हिन्दुस्तानी" कहा करते थे। वस्तुतः यह विषय भी अभी तक वाद-विवाद के घेरे में ही है। जहां तक हिन्दी भाषा के विकास का सवाल है तो कुछ इतिहासकारों का कहना है कि प्राकृत भाषा से अपभ्रंश और हिन्दी का विकास हुआ लेकिन कुछ ऐसे भी हिन्दी के जानकार हैं; जिनके अनुसार हिन्दी का विकास सिर्फ अपभ्रंश से ही हिन्दी का तथा उत्तरी भारत की अन्य आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ है। "1 शिवसिंह सेंगर के मुताबिक हिन्दी का उद्भव काल छठी सदी के आसपास से माना जाना चाहिए, तो आचार्य शुक्ल के अनुसार सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ से। डा० रामकुमार वर्मा दसवीं शती के इर्द-गिर्द हिन्दी भाषा का आविर्भाव काल मानते हैं। लेकिन आठवीं शती में यदि सिद्धों की वाणी में हिन्दी के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया जाय तो यह मानना पड़ेगा कि हिन्दी की उत्पत्ति 769 ई० के आस-पास ही हुई होगी और जहां तक विचारों में विभिन्नता का प्रश्न है तो भारतवासियों में विचारों का मतभेद सर्वदा ही रहा है; फिर भी सम्पूर्ण भारत की जड़ें अखण्ड हैं तथा हिन्दी, भाषा एवं संस्कृति के प्रांगण में इस सत्य का प्रतीक है। अब हम अपने विषयानुसार निम्नलिखित विषयों पर विचार करेंगे:-

1. भाषा और व्याकरण
2. हिन्दी भाषा का मानकीकरण
3. हिन्दी भाषा का काल विभाजन
4. भाषा और साहित्य
5. हिन्दी भाषा का वर्गीकरण
6. बोली और काव्यभाषा

1. **भाषा और व्याकरण:** व्यक्ति अपने विचारों को भाषा के जरिए ही व्यक्त करता है। इसीलिए भाषा अपने विचार प्रकट करने का तथा दूसरों के विचार सुनने का एक मात्र साधन है। भाषा का प्रयोग हम कभी बोलकर करते हैं तो कभी लिखकर। भाषा का बोला गया रूप मौखिक रूप कहलाता है और लिखा गया रूप लिखित रूप। भाषा का निर्माण साधारण जन भी करते हैं लेकिन व्याकरण का निर्माण ज्ञानी पंडित लोग ही कर सकते हैं। किसी भाषा के विशेष ज्ञान के लिए उस भाषा का व्याकरण जानना आवश्यक होता है। व्याकरण का ज्ञान न होने से न तो हम शुद्ध-शुद्ध बोल सकते हैं; न तो शुद्ध-शुद्ध लिख सकते हैं। अन्य शब्दों में व्याकरण वही है, जिसके द्वारा शब्दों का विश्लेषण हो तथा उनकी भूलों का सही-सही पता चले। व्याकरण ही भाषा की रक्षा करता है। विद्वानों का मानना है कि व्याकरण भाषा रूपी नौका की पतवार के समान है। अब सवाल है कि भाषा पहले बनी या व्याकरण पहले बना? दरअसल भाषा ही पहले बनी और उसको नियमित करने के लिए व्याकरण बाद में बना। सबसे पहले आचार्य किशोरी दास वाजपेयी ने हिन्दी का स्वतन्त्र व्याकरण लिखा परन्तु उनकी कुछ मान्यताएं विवादास्पद हैं। अभी तक जितने भी हिन्दी-व्याकरण उपलब्ध हैं; उनमें पं० कामता प्रसाद गुरू का ही व्याकरण अत्यधिक मान्य है। इसी प्रसंग में मैं एक बात और स्पष्ट कर दूं कि स्वाधीनता के बाद जो नए-नए शब्द हिन्दी में पढ़े जा रहे हैं या जुट रहे हैं, वे किसी व्याकरण की कसौटी पर नहीं कसे जा सकते जैसेः भाषायी। क्या इसे व्याकरण की कसौटी पर कसा जा सकता है? उत्तर होगा—कभी नहीं। इसलिए कभी-कभी यह भी कबूल करना पड़ता है कि भाषा पूर्णतः व्याकरण के पीछे-पीछे नहीं चलती।

2. **हिन्दी भाषा का मानकीकरण:**— भाषा कई प्रकार की होती हैं। जैसे जनभाषा, गुप्तभाषा, मानकभाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा इत्यादि। मानक भाषा को तरह-तरह से स्पष्ट करने का यत्न विद्वानों ने किया है। रॉबिन्स के अनुसार महत्वपूर्ण लोगों की बोली को ही मानकभाषा का नाम दिया जा सकता है। हिन्दी हमारी मानकभाषा तो है ही किन्तु इसके मानकीकरण पर प्रकाश डालने के पूर्व "मानक" शब्द का अर्थ समझ लेना आवश्यक है क्योंकि "मानक" शब्द से ही बना है—मानकीकरण। "मानक" शब्द का अर्थ है—किसी वस्तु की श्रेष्ठता को परखने का सुनिर्धारित स्तर और "मानकीकरण" का अर्थ है—किसी चीज के निर्माण का ऐसा रूप स्थिर करना, जिससे उसकी अच्छाई या शुद्धता के सम्बन्ध में तनिक भी संदेह का स्थान न रह जाय।

हिन्दी भाषा के मानकीकरण का इतिहास काफ़ी लम्बा है। वस्तुतः इसके मानकीकरण का प्रश्न तो 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ही खड़ा हो गया था; लेकिन 20वीं सदी के आरम्भ होते ही इसमें और तीव्रता आ गई। डा० भोलानाथ तिवारी ने लिखा है—"इस समय तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी "सरस्वती" के सम्पादक बन चुके थे और इस पत्रिका के माध्यम से वे हिन्दी में एकरूपता लाने के लिए प्रयत्नशील थे। लोगों के वे लेख जो छपने के लिए आते थे; उन्हें वे भाषा तथा विरामचिन्हों आदि की दृष्टि से पूरी तरह सम्पादित करते थे। कभी-कभी तो उनको वे इतना बदल देते थे कि उन्हें पहचानना कठिन हो जाता था। "अतः प्रमाणित है कि हिन्दी भाषा का मानक रूप देने का सर्वप्रथम प्रयोग आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया और तत्पश्चात् हिन्दी के अन्य आचार्यों या विद्वानों ने।"

जो हो, लेकिन इस समय तक लिखित हिन्दी व्याकरण का अभाव तो था ही, और जैसा कि हमें ज्ञात है कि लिखित व्याकरण के बगैर, चाहे कोई भी भाषा हो, उसका मानकीकरण नहीं हो सकता। शायद इसीलिए पं० कामता प्रसाद गुरू ने "हिन्दी की हीनता" शीर्षक से एक लेख लिखा; जिसमें इस बात को रेखांकित किया गया था कि —"हिन्दी का न तो कोई सर्वमान्य व्याकरण है और न कोई शब्दकोश ही।" बताया जाता है कि जैसे ही उनका यह लेख "सरस्वती पत्रिका" में 1908 ई० में निकला, वैसे ही एक बड़ा और बहुमान्य "हिन्दी व्याकरण" लिखवाने का निश्चय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने किया और प्रसन्नता की बात है कि उसके इस कार्य में अच्छी सफलता भी मिली अर्थात् हिन्दी का व्याकरण निकला पर लिंग की दृष्टि से इस समय तक हिन्दी में अनेक रूपताएं भी अवश्य थीं। इसकी ओर पंडित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी का ध्यान सर्वप्रथम आकृष्ट हुआ। फलतः सन् 1919 ई० में 'हिन्दी लिंग विचार" नामक उनकी एक पुस्तक हिन्दी संसार के सामने उपस्थित हो गई। 1933-34 ई० में डा० धीरेन्द्र वर्मा ने भी अनेक ऐसे लेख लिखे जो हिन्दी के मानकीकरण की दृष्टि से बहुत उपयोगी साबित हुए।

आगे चलकर 1947 ई० के बाद हिन्दी के मानकीकरण हेतु "केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय", नई दिल्ली द्वारा कई महत्वपूर्ण कार्य किए गए। जैसे नागरी लिपि का मानकीकरण, हिन्दी वर्त्तनी का मानकीकरण तथा हिन्दी संख्यावाचक विशेषणों का मानकीकरण इत्यादि। लेकिन इस दिशा में सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान आचार्य किशोरी दास बाजपेयी, बाबू रामचन्द्र वर्मा, डा० बदरीनाथ कपूर, हरदेव बाहरी एवं डा० भोलानाथ तिवारी का रहा है। चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय का कहना है कि —"हिन्दी का सबसे पहला व्याकरण पं० कामता प्रसाद गुरू ने लिखा था, लेकिन आचार्य किशोरी दास अपने को प्रथम व्याकरण का निर्माता मानते थे।"[3] इस प्रकार उपरोक्त प्रयासों से हिन्दी-मानकीकरण के क्षेत्र में अवश्य प्रगति हुई परन्तु अभी तो धीरे-धीरे हिन्दी अपने मानक रूप को और प्राप्त करती जा रही है।

3. **हिन्दी भाषा का काल विभाजन:** विकास की दृष्टि से हिन्दी भाषा के काल को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(1) आदिकाल (769 ई०—1500 ई०)
(2) मध्यकाल (1500 ई०—1800 ई०)
(3) आधुनिककाल (1800ई०—आज तक)

1. **आदिकाल (769 ई०—1500 ई० तक):** यह हिन्दी भाषा का प्रारम्भिक युग है। इस काल की जो अध्ययन-सामग्री उपलब्ध है, वह मूलतः संदिग्ध है। फिर भी उसके अध्ययन से तत्कालीन भाषा के जो रूप उभरकर सामने आते हैं, वे दो प्रकार के हैं—अवहट् और देशी। कुछ विद्वानों के अनुसार अपभ्रंश तथा हिन्दी के बीच एक ऐसी भाषा प्रचलित थी, जिसका नाम था—अवहट् लेकिन इसे हिन्दी का ही पुराना रूप माना जाना चाहिए न कि एक अलग भाषा। महाकवि विद्यापति की रचनाएं अवहट् से संबंध रखती हैं और देशी भाषा के तो कई स्तर इस काल में दिखाई देते हैं। यथा-हिन्दवी, हिन्दी, डिंगल-पिंगल, मरुभाषा, अरबी-फारसी से परिपूर्ण अमीर खुसरो की भाषा एवं सिद्धों और नाथों की जनभाषा, आदि। अपभ्रंश तथा हिन्दी के विकास की दृष्टि से इस काल को सन्धिकाल या संक्रान्तिकाल भी कहा जा सकता है।

(2) **मध्यकाल (1500 ई०—1800 ई० तक):** इस काल में हिन्दी भाषा और साहित्य की आशातीत उन्नति हुई तथा जैसा कि बताया जाता है, इस युग में कुल मिलाकर हिन्दी भाषा के तीन रूप विकसित हुए—अवधी, ब्रजभाषा और खड़ीबोली। इस काल की भाषाओं में अवधी और ब्रजभाषा को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, क्योंकि हिन्दी भाषा के मध्यकाल में ही एक ओर अवधी का साहित्यिक भाषा के रूप में खूब विकास हुआ तो दूसरी ओर ब्रजभाषा का भी साहित्यिक भाषा के रूप में कम विकास नहीं हुआ। अतएव अब इसी प्रकरण में हम इन दोनों भाषाओं पर अलग-अलग प्रकाश डालेंगे।

(क) **अवधी का साहित्यिक भाषा के रूप में विकास:** अवधी बोली या उपभाषा का केन्द्र अयोध्या माना जाता है, और अयोध्या का ही विकसित रूप है—"अवध" तथा अवध से ही बना है—अवधी शब्द। लेकिन अवधी के उद्भव के संबंध में विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश विद्वान इसका संबंध अर्द्धमागधी अपभ्रंश से मानते हैं तो कुछ लोग इससे पाली की समानता के आधार पर, इसका विकास पालीभाषा से मानते हैं। डॉ० माधव अवधी का विकास अर्द्धमागधी से ही मानते हैं।

चाहे जो हो, लेकिन यह निश्चित रूप से फतेहपुर, रायबरेली, प्रतापगढ़, फैजाबाद, उन्नाव, लखनऊ, इलाहाबाद, कानपुर, जौनपुर, बलिया, मिर्जापुर तथा बाराबंकी यानी उत्तर प्रदेश के कई खण्डों में बोली जाती है। जहां तक उसके प्रसिद्ध कवियों का प्रश्न है तो उसमान, सब्बलसिंह, कुतुबन, मुल्ला दाऊद, जायसी, तुलसी, सहजोबाई तथा मलूकदास इत्यादि इसके प्रसिद्ध कवि हैं और इसके आज के लेखकों में रमईकाका एवं वंशीधर अत्यधिक प्रख्यात रचनाकार हैं। अवधी के तीन रूप हिन्दी भाषा के मध्यकाल में जो पाए जाते हैं, वे इस प्रकार हैं—जायसी, मंझन, आलम की ठेठअवधी; नरपति, गोवर्द्धनदास आदि की अपभ्रंश-संस्कृत की क्षीणपीण प्रभावयुक्त अवधी एवं तुलसी, लालदास जैसे रामभक्त कवियों की साहित्यिक अवधी। जितनी समन्वय की भावना तुलसी-साहित्य में दृष्टिगोचर होती है, उतनी किसी भी साहित्यकार के साहित्य में नहीं। डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—"उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, ग्राहस्थ्य और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, कथा और तत्वज्ञान का समन्वय, ब्राहम्ण और चाण्डाल का समन्वय, पांडित्य और अपांडित्य का समन्वय-रामचरित मानस शुरू से आखिर तक समन्वय का काव्य है।"[4] इसी समन्वय—भावना के कारण विश्व महाकवि तुलसी को लोक नायक कहा गया।

जहां तक जायसी की बात है तो उनकी पद्मावत में राजा रत्नसेन एवं रानी पद्मावती के लौकिक प्रेम के द्वारा अलौकिक प्रेम की व्यंजना की गई है। इनके बारे में डॉ० रामकुमार वर्मा क्या कहते हैं; जरा देखिए—"अभी तक के सूफी कवियों ने केवल कल्पना के आधार पर प्रेम कथा लिखकर अपने सिद्धांतों का प्रकाशन किया था, पर जायसी ने कल्पना के साथ-साथ ऐतिहासिक घटनाओं की श्रृंखला सजाकर अपनी कथा को सजीव कर दिया। यह ऐतिहासिक कथावस्तु चितौड़गढ़ के हिन्दु-आदर्शों के साथ थी, जिससे हिन्दु जनता को विशेष आकर्षण था। यही कारण था कि जायसी की कथा विशेष लोकप्रिय हो सकी।"[5] वस्तुतः रामकाव्य तथा प्रेम काव्य,

ये दोनों अवधी की अमूल्य निधि हैं, लेकिन यह भी सच है कि तुलसी के बाद अबधी की साहित्यिक धारा मंद पड़ गई।

(ख) ब्रजभाषा का साहित्यिक भाषा के रूप में विकासः इसका क्षेत्र ब्रजांचल रहा है और इसी आधार पर इसकी बोली ब्रजभाषा अथवा ब्रजी कही जाती है। इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। विशुद्ध ब्रजभाषा मथुरा, अलीगढ़ तथा आगरा जिलों में बोली जाती है। इसके बावजूद इसका क्षेत्र मैनुरी, एटा, बरेली, बदायूं, धौलपुर, गुड़गांव व भरतपुर तक फैला हुआ है। मध्ययुगीन अधिकांश साहित्य इसी भाषा में लिखे गए हैं। इसकी चर्चा करते हुए डॉ० सभापति मिश्रा का कहना है कि "भाषा के विचार से सूरदास प्रथम कवि हैं; जिन्होंने भाषा को साहित्यक रूप दिया। गोकुलनाथ कृत "चोरासी वैष्णवन की वार्त्ता" एवं "दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता" में प्रयुक्त साधारण ब्रजभाषा में साहित्यक समृद्धि का अभाव है। इसी समय सूरदास ने अपने गीतकाव्य में प्रौढ़ साहित्यिक ब्रजभाषा का प्रयोग किया। सूर-काव्य में अलंकारों एवं मुहावरों का सहज-स्वाभाविक प्रयोग मिलता है। गीति-शैली की समस्त विशेषताएं—वैयक्तिकता, भावात्मकता, संक्षिप्तता, भाषा की कोमलता आदि सूरकाव्य में मिलती हैं। सूरदास की रचना गीतिकाव्य में हुई पर उनका सम्पूर्ण गीतिकाव्य ब्रजभाषा तक ही सीमित रहा।"[6] अन्धे विश्व महाकवि सूर को ब्रजभाषा का बाल्मीकि कहा जाता है। दक्खिनी कवियों को छोड़कर हिन्दी भाषा के मध्यकाल के प्रायः सभी रचनाकारों की कलम खुलकर ब्रजभाषा में चली है। रत्नाकर, रसखान, देव, भूषण, मतिराम, नन्ददास, बिहारी, भारतेन्दु आदि प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकारों ने ब्रजभाषा के रूप को खूब सजाया-संवारा। लोक साहित्य की दृष्टि से यह एक सम्पन्न भाषा है। सारा कृष्णकाव्य इसी भाषा में लिखा गया; लेकिन रीतिकाल के अन्त में ब्रजभाषा का रिस्ता जनमानस से धीरे-धीरे टूटता गया और उसका स्थान खड़ीबोली लेती गई। जो हो, पर हिन्दीभाषा के मध्यकाल में ब्रजभाषा साहित्यिक भाषा के रूप में जितनी फली-फूली, उतनी हिन्दी भाषा और साहित्य के किसी भी काल में न फूल-फल सकी।

(3) आधुनिक काल (1800 ई०-आज तक): दरअसल हिन्दी भाषा के इतिहास में यह काल खड़ी बोली के परम उत्कर्ष का काल है। इसके आरम्भ में हिन्दी की तीन शौलियां प्रचलित थीं—ब्रजभाषा, खड़ी बोली एवं ब्रज और खड़ीबोली का मिश्रित रूप। लेकिन यहां तक आते-आते ब्रज और अवधी जनमानस से पूरी तरह कट गई तथा शैनः-शैनः काव्यभाषा एवं गद्भाषा के रूप में "खड़ीबोली" का विकास होता गया।

खड़ीबोली का साहित्यक भाषा के रूप में विकासः सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि खड़ी बोली क्या है? खड़ी बोली में खड़ी का अर्थ विवादास्पद है; फिर भी कोई एक निर्णय तो लेना ही होगा। हिन्दी भाषा के अब तक के अधिकतर विशेषज्ञों ने खड़ी का अर्थ—"खरी" अथवा "शुद्ध" माना है तो हमें भी इसे स्वीकारने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

खड़ी बोली जिसे कुछ लोग कौरवी भी कहते हैं; का उद्भव शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप से हुआ है तथा देहरादून का मैदानी भाग, सहारनपुर, मुजफ्फर नगर, मेरठ, दिल्ली का कुछ भाग, बिजनौर, रामपुर, मुरादाबाद और लखनऊ विशेष रूप से इस बोली के क्षेत्र हैं। हिन्दीभाषा का आधुनिक काल भाषाई चेतना की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण काल है। इसी काल में गद् साहित्य में खड़ीबोली का प्रयोग सर्वप्रथम किया गया तथा इस कार्य में सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, मुन्शी लल्लू लाल और पंडित सदल मिश्र का महत्वपूर्ण योगदान है। सदासुख लाल ने विष्णुपुराण के आधार पर "सुखसागर" की रचना की तो उर्दू के यशस्वी शायर इंशा अल्ला खाँ ने "अदयभान चरित" लिखा। 1803 ई० में भागवत के दशम स्कन्ध की कथा के आधार पर फोर्ट विलियम कॉलेज के मुन्शी लल्लू लाल द्वारा रचित "प्रेमसागर" भी हिन्दी का एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसी तरह नासिकेतोपाख्यान एवं अध्यात्म रामायण का अनुवाद पंडित सदल मिश्र द्वारा खड़ी बोली में किया गया।

खैर, इसी क्रम में राजा शिव प्रसाद अर्थात् "सितारे हिन्द" तथा राजा लक्ष्मण सिंह को भी आधुनिक काल के प्रारम्भिक लेखकों में भला कैसे खोया जा सकता? राजा शिवप्रसाद ने "बनारस अखबार" के माध्यम से खड़ी बोली गद्य को विकसित किया तो राजा लक्ष्मण सिंह ने हिन्दी-उर्दू को "दो न्यारी बोलियां" मानकर संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का समर्थन किया। जहां तक खड़ी बोली में काव्यरचना का प्रश्न है तो प्रायोगिक धरातल पर इसका सूत्रपात हिन्दी भाषा के आधुनिक काल में ही हुआ और अगर सच कहा जाय तो इसकी नींव डालने में भारतेन्दु तथा उनके मंडल के सहयोगी साहित्यकारों की विशिष्ट भूमिका रही है। तत्पश्चात् छायावादी, प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी साहित्यकारों की सुधि ताज़ी हो जाती है। चाहे दिनकर हों या निराला, चाहे नागार्जुन हों अथवा नीरज, सभी कवियों ने खड़ी बोली के द्वारा हिन्दी काव्य-संसार को सुशोभित किया। इसे चांदनी जगत बनाया। अभी के रचनाकारों ने तो खड़ी बोली की क्षमता को इतना विस्तारित किया है कि आज वह हिन्दी को बोलियों में अथवा उसकी उपभाषाओं में सर्वश्रेष्ठ मानी जा रही है और जब ऐसी बात है तो अब "खड़ीबोली" का प्रयोग हिन्दी या हिन्दीभाषा के अर्थ में एकदम सीधे किया जाना चाहिए न कि उपभाषा के अर्थ में।

खड़ीबोली या हिन्दी की गरिमा पर ग़ौर करते हुए डा० नरेन्द्र व्यास कहते हैं—"दिनोंदिन हिन्दी का प्रयोग-क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है। स्वतन्त्रता से पहले जहां हिन्दी मुख्यतः साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में ही व्यवहृत हो रही थी, वहां अब प्रशासन, वाणिज्य, विज्ञान, संचार माध्यम आदि के क्षेत्र में भी पर्याप्त विकसित हो रही है। देश के हिन्दीत्तरभाषी क्षेत्र में इसका प्रचार-प्रसार निरन्तर बढ़ रहा है। यही नहीं, विदेशों के अनेक विश्वविद्यालयों और शोधसंस्थानों में हिन्दीभाषा का अध्ययन-अध्यापन होने लगा है। वह दिन भी सम्भवतः दूर नहीं जब हिन्दी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की मान्यता प्राप्त भाषाओं में स्थान मिल जाएगा।" 7 अभी खड़ीबोली हिमालय से कन्याकुमारी तक एवं अरब सागर से बंगाल की खाड़ी तक व्याप्त है। यही एक ऐसी भाषा है जिसमें सबसे ज्यादा साहिका निर्माण हुआ है और हो भी रहा है।

4. भाषा और साहित्यः सार्थक शब्दों का उच्चारण ही बोली या भाषा है। इसके मुताबिक अनर्गल अथवा असम्बन्ध शब्दों के उच्चारण को हम भाषा नहीं कह सकते। व्यापक रूप में सभी प्रकार की ध्वनियों को हम शब्द कह सकते हैं, लेकिन भाषा विज्ञान के संसार में तो शब्द उसी को कहां जा सकता है, जिसका कोई अर्थ हो। अर्थहीन शब्द भाषा-निर्माण में सहायक नहीं होते। अतएव निःसंदेह कहा जा सकता है कि सार्थक शब्दों के माध्यम से ही भाषा रूपी अट्टालिका का निर्माण किया जा सकता है। संक्षेप में भाषा वही है जिसके द्वारा विचारों का आदान-प्रदान किया जा

सके। प्रकृति में भाव तो अनपढ़ होते हैं और भावों को समझने-समझाने हेतु भाषा की जरूरत होती है पर भाषा भी गढ़ी जाती है। शायद इसीलिए महादेवी बर्मा ने कहा भी कि—"भाषा भी गढ़ी जाती है किन्तु वह किसी कुम्भकार का घट-निर्माण नहीं, मिट्टी का अंकुर-निर्माण है।"

जहां तक साहित्य का प्रश्न है तो किसी भी साहित्य का सृजन किसी भाषा में ही होता है तथा भाषा और साहित्य में अन्योन्याश्रय संबंध है, उसी तरह जैसाकि व्यक्ति और समाज में, राज्य और राष्ट्र में, शेर और जंगल में, शब्द और अर्थ में, प्रेमी और प्रेयसी में। भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने विविध प्रकार से साहित्य को परिभाषित एवं विश्लेषित करने की कोशिश की है। वैसे हम अपने दैनिक जीवन में जो बोलते हैं, वह भी साहित्य के व्यापक अर्थ में साहित्य ही है। डॉ० राम खेलावन पाण्डेय का कथन है कि—"साहित्य सौंदर्यानुभूति की कलात्मक अभिव्यक्ति है।" इसकी विषयवस्तु का निरूपण करते हुए डा० नगेन्द्र कहते हैं—'मानव अपने अन्तरतम रूप में जो है, वही साहित्य का विषय है, जहां वह न नीतिवादी है और न बुद्धिबादी। वहां वह रागात्मक है और उसी से साहित्य का सीधा संबंध है।"[8] डॉ० सभापति मिश्रा का कहना है कि—"वस्तुतः मनुष्य के सार्थक एवं सर्वोत्तम विचारों की उत्तमोत्तम लिपिबद्ध अभिव्यकित का नाम ही साहित्य है।"

प्रत्येक काल के साहित्य में मानव जीवन का मूल्य दीखता है और इसीलिए कहा जाता है कि जिस काल का जैसा मानव समाज होता है, उस काल का साहित्य भी वैसा ही होता है। हमारे आचार्यों ने इसे रसमूलक माना है, तभी तो साहित्य से लोकोत्तर आनन्द की प्राप्ति होती है पर यदि किसी देश में अच्छे साहित्य का अभाव हो तो उस राष्ट्र का जीवित रहना भी दुर्लभ है। आज हमारे देश का चारित्रिक विकास रूक गया है—कर्त्तव्यहीनता एवं स्वार्थ लोलुपता सर्वत्र व्याप्त है, क्यों? इसके अनेक कारण अवश्य हैं किन्तु अभी के भारतीय साहित्यकार इसके लिए सबसे ज्यादा जिम्मेवार हैं। साहित्यकार देश का जगमगाता हुआ दीपक होता है और अगर इस दीपक की ही लौ मंद हो जाय तो अंधेरे में किसी को रौशनी कहां से मिलेगी? आज के भारतीय साहित्यकार अपने कर्त्तव्य का पालन ईमानदारी से नहीं कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में देश का सर्वांगीण विकास तथा सामूहिक चारित्रिक पुनरुत्थान कैसे हो सकता है? देश की हालत क्या होगी, कुछ कहा नहीं जा सकता।

5. **हिन्दीभाषा का वर्गीकरण:** अध्यन की सुविधा के लिए भारतीय प्रदेशों के आधार पर हिन्दीभाषा को मुख्यतः पांच भागों में विभक्त किया जा सकता है:—

(1) पूर्वी हिन्दी

(2) पश्चिमी हिन्दी

(3) बिहारी हिन्दी

(4) राजस्थानी हिन्दी

(5) पहाड़ी हिन्दी

(1) पूर्वी हिन्दी: दरअसल उत्तर प्रदेश में बोली जाने वाली हिन्दी को पूर्वी हिन्दी के नाम से अलंकृत किया गया है, लेकिन इसके अलावा मध्यप्रदेश के भी कुछ भागों में जो हिन्दी प्रचलित है, वस्तुतः उसका भी नाम पूर्वी हिन्दी ही है। इसके अन्तर्गत हिन्दी की तीन उपभाषाएं हमें मिलती हैं—अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी। इनमें अवधी की साहित्यिक महत्ता सर्वोपरि है, क्योंकि सूफी-साहित्य एवं तुलसी-साहित्य अवधी में ही निबद्ध हैं।

(2) पश्चिमी हिन्दी: पश्चिम में पंजाब और राजस्थान की सीमा से आरम्भ होकर पूर्व में मथुरा, आगरा, अलीगढ़ और इलाहाबाद तक जिस हिन्दी का प्रयोग होता है, उसी का नाम है—पश्चिमी हिन्दी। इतना ही नहीं बल्कि मद्रास, हैदराबाद और बम्बई में भी बोली जाने वाली हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी के नाम से ही विख्यात है। इसकी उपभाषाओं में जो पाँच मुख्य हैं, वे यों हैं—ब्रज, बुंदेली, कन्नौजी, कौरवी (खड़ीबोली) और हरियानवी।

(3) बिहारी हिन्दी: इस हिन्दी का क्षेत्र बिहार प्रदेश है। इसकी एक प्रमुख बोली (उपभाषा) है—भोजपुरी जो अधिकांशतः बिहार के पूर्वी-उत्तरी भागों में बोली जाती है। इसी प्रसंग में मगही, मैथिली और खोरठा को भी भूला नहीं जा सकता क्योंकि ये भी बिहारी हिन्दी की उपभाषाओं में मुख्य हैं। साहित्य-सृजन के संदर्भ में मैथिली की उपादेयता उल्लेखनीय है और भोजपुरी का उपयोग तो लोक-साहित्य रचना में हुआ ही है और अभी और अधिक हो रहा है। इसने संतों की वाणी भी मुखरित की है। खोरठा में भी अब साहित्य का निर्माण होने लगा है। शिवनाथ प्रामाणिक की पुस्तक—"दामुदरेक कोराज" खोरठा उपभाषा की प्रथम उपलब्ध महत्वपूर्ण कृति है। वंशीलाल "बंशी" ने भी खोरठा में काफी प्रशंसनीय कार्य किया है। इस दृष्टि से इनकी पुस्तक—"डीडांक डोआनी" को देखा जा सकता है।

(4) राजस्थानी हिन्दी: मुख्य रूप से यह राजस्थान की मिट्टी से संबंधित है; फिर भी मध्य प्रदेश के भी कुछ भूखंड इससे अछूते दिखाई नहीं देते। मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती तथा मालवी इसकी उपभाषाओं में अत्यधिक प्रमुख हैं। मीरा, दादूदयाल, चरणदास एवं हरिहर दास की वाणी राजस्थानी हिन्दी के माध्यम से ही विकसित हुई और इसमें गद्परम्परा का विकास भी पाया जाता है।

(5) पहाड़ी हिन्दी: इस हिन्दी का भी हिन्दी संसार में महत्वपूर्ण स्थान है। पर्वतीय क्षेत्रों में व्यवहृत होने वाली हिन्दी को हम पहाड़ी हिन्दी कहते हैं तथा इसकी मुख्य उपभाषाएं हैं—कुमायूँनी और गढ़वाली। गुमानी पंत तथा कृष्ण पान्डेय का लोक साहित्य कुमायूँनी का प्रसिद्ध साहित्य है।

इस तरह अभी हमने देखा कि चाहे कोई भी हिन्दी हो, उसका विकास अपनी विभिन्न बोलियों का विकास है पर हम दावा नहीं कर सकते कि इसके संबंध में हमारा दृष्टिकोण मौलिक एवं नवीन है; फिर भी इतना सही तो है ही कि इसके विभिन्न पार्श्वों को देखने-परखने की अपनी दृष्टि अवश्य रही है।

6. बोली और काव्यभाषा: आमतौर से बोली का अर्थ है—भाषा और भाषा का अर्थ है—बोली। कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दी भारत की बोली है तो कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके अनुसार हिन्दी भारत की भाषा है।

इसके बावजूद यह एक वाद-विवाद का विषय तो है ही क्योंकि जहां भाषा-उपभाषा का प्रश्न उठता है, वहां उपभाषा के अर्थ में बोली का ही प्रयोग होता है। चाहे पूर्वी हिन्दी हो, चाहे पश्चिमी, चाहे बिहारी हिन्दी हो, चाहे राजस्थानी, सबकी अपनी-अपनी उपभाषाएँ हैं। अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, पूर्बी हिन्दी की बोलियां हैं तथा मैथिली, मगही और भोजपुरी बिहारी हिन्दी की। भाषा विज्ञान की दृष्टि से प्रान्त/विस्तार के आधार पर

शेष पृष्ठ 18 पर

कार्यालयी भाषा हिन्दी का स्वरूप

—डा० किरन पाल सिंह

कार्यालयी भाषा के स्वरूप को समझने से पहले यह जानना आवश्यक प्रतीत होता है कि भाषा क्या है, और उसके सर्वमान्य रूप क्या हैं? प्रसिद्ध भाषाविद् डा० भोला नाथ तिवारी के अनुसार "भाषा, उच्चारण-अवयवों से उच्चारण के योग्य यादृच्छिक (arbitrary) ध्वनि-प्रतीकों (vocal symbol) की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में भावों और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं"। बोली क्रमिक विकास के अनुसार संकेत, राजभाषा आदि और जनभाषा से विकसित हुई। इस भाषा को आगे चलकर संपर्क-भाषा, मानक-भाषा, साहित्यिक भाषा, राजभाषा आदि में वर्गीकृत किया गया जिन्हें विभिन्न साहित्यकारों ने इस प्रकार से परिभाषित किया है—

संपर्क-भाषा:— "वह भाषा जो दो भिन्न-भाषा-भाषी अथवा एक भाषा की दो भिन्न उपभाषाओं के मध्य अथवा अनेक बोलियां बोलने वालों के मध्य सम्पर्क का माध्यम होती है जिसके माध्यम से भावों एवं विचारों में आदान-प्रदान किया जाता है," सम्पर्क-भाषा कहलाती है। भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में सबसे अधिक संख्या में बोली और समझी जाने वाली भाषा हिन्दी ही है जो सम्पर्क-भाषा का कार्य कर रही है। हिन्दी किसी प्रांत-विशेष या धर्म-विशेष की सीमाओं में आबद्ध न होकर सम्पूर्ण भारत में सम्पर्क-भाषा के रूप में स्वीकृत है। कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दी केवल हिन्दी भाषियों की ही नहीं वरन् हिन्दीतर भाषियों की भी एकमात्र सम्पर्क-भाषा है।

मानक भाषा:— मानक भाषा "किसी भाषा के उस रूप को कहते हैं जो उस भाषा के पूरे क्षेत्र में शुद्ध माना जाता है तथा उस प्रदेश का शिक्षित और शिष्ट समाज अपनी भाषा का आदर्श रूप मानता है और प्रायः सभी औपचारिक परिस्थितियों में, लेखन में, प्रशासन और शिक्षण के माध्यम के रूप में यथा साध्य उसी का प्रयोग करने का प्रयत्न करता है"।

साहित्यिक भाषा:— "किसी भाषा की वह विभाषा जो सर्वश्रेष्ठ समझकर साहित्यिक रचना के लिए प्रयुक्त की जाए तथा बोल चाल की अपेक्षा कुछ विशिष्ट हो, साहित्यिक भाषा कहलाती है"। भाषा का यह रूप परिष्कृत, परिमार्जित और अलंकृत होता है। इसमें एक सहज प्रवाह व शब्द-ग्रहण की असीम क्षमता होती है।

राजभाषा:— यह भाषा का नवीनतम उभरकर आने वाला रूप है। आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा के अनुसार सरकार के शासन, विधान, कार्यपालिका और न्यायपालिका क्षेत्रों में जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसे राजभाषा कहते हैं, और यही कार्यालयी भाषा भी कहलाती है।

राजभाषा के रूप में किसी सरल, समृद्ध और व्यापक आधार वाली स्वदेशी भाषा को ही अपनाया जाता है, परंतु कभी-कभी परिस्थिति-वश अपवाद के रूप में इस पद पर कोई विदेशी भाषा भी आरूढ़ हो जाती है। दुर्भाग्य से इस अपवाद को हमने अपने पराधीनता के दिनों में लगभग 400 वर्षों तक झेला है और यही कारण है कि राजभाषा हिन्दी के मार्ग में एक के बाद एक, कठिनाइयां आती चली गईं। स्वतंत्रतापूर्व भारत में बदलती शासन-पद्धतियों के कारण इस पर अरबी-फारसीयुक्त उर्दू तथा अंग्रेजी का प्रभाव पड़ता गया। यहां यह उल्लेखनीय है कि कुछ विद्वान् लोग उर्दू को एक भाषा का दर्जा देते हैं परंतु "भाषा-वैज्ञानिकों ने उर्दू को हिन्दी भाषा की एक विशिष्ट शैली माना है जिसकी लिपि फ़ारसी है और जिसमें अरबी-फ़ारसी के शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता है।

हमारे देश में सरकारी कामकाज की भाषा तथा आम बोल-चाल की भाषा में हमेशा से अन्तर रहा है। मुसलमानों के शासनकाल में राजकाज की भाषा अरबी-फ़ारसी शैली-प्रधान उर्दू थी तथा सामान्य बोल-चाल के रूप में विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं एवं बोलियों का चलन था। अंग्रेजों के शासन-काल में राजकाज की दो भाषाएं थीं—उच्चस्तर पर अंग्रेज़ी तथा निचले स्तर पर उर्दू-प्रधान हिन्दी का खड़ी बोली-रूप; परन्तु दोनों ही कालों में सम्पर्क-भाषा हिन्दी ही रहती चली आई। सम्पर्क-भाषा के साथ इन भाषाओं के शब्द भी प्रयोग में आते चले गए और हिन्दी की गोद में समा गए और कुछ इस तरह से हमारे जन-जीवन में घुलमिल गए कि अब इन्हें छोड़ना भी एक दुष्कर कार्य होगा।

व्यापक प्रयोग वाली सम्पर्क-भाषा हिन्दी के इसी रूप को स्वतंत्र भारत की सरकार ने राजभाषा के रूप में अपना लिया। अपने इसी शब्द-भण्डार के साथ देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने लगी। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात सरकार ने अनेक नए विभाग, निगम तथा वैज्ञानिक आधार वाले संस्थान स्थापित करने शुरु कर दिए। इस प्रकार के अनेक कार्यालयों के कार्यों को राजभाषा हिन्दी के द्वारा निष्पादित करने के लिए हिन्दी को इनके स्तर तक विकसित करना अनिवार्य हो गया। अतः इस स्तर पर अब हिन्दी में शब्द-निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया जाने लगा तो इस कार्य के लिए संश्लिष्ट प्रकृति वाली भाषा संस्कृत को आधार बनाया गया। संस्कृत को इस काम के लिए चुनने के कारणों में उसका समस्त आर्य-भाषाओं का आधार तथा उपसर्गों एवं प्रत्ययों के सहारे एक ही धातु से शब्द-निर्माण की अद्वितीय क्षमता का होना था। संस्कृत के साथ-साथ अंग्रेज़ी तथा उर्दू के बहुप्रचलित शब्दों को भी रख लिया गया। शब्द-निर्माण में हिंदी की प्रकृति के अनुसार प्रत्यय जोड़ने पर बल दिया गया। इस प्रकार राजभाषा हिन्दी में उर्दू तथा संस्कृत की मिली-जुली शब्दावली का प्रचलन हुआ। 'अपेक्षित काग़ज़पत्र, 'आवश्यक मसौदा,' 'सरकारी कार्यालय', 'मंजूरी देना', 'दौरा-कार्यक्रम' आदि अनेकों रूप भाषायी सहनशीलता तथा समिश्र शैली के रूप में विकास के उदाहरण हैं। यह प्रयुक्ति अब न तो हिन्दुओं की संस्कृत है और न ही मुसलमानों की अरबी-फ़ारसी-प्रधान उर्दू। यह दोनों का मिश्रित रूप है।

इस प्रकार सरकारी कार्यालयों में कार्यालयी भाषा हिन्दी का एक विशिष्ट रूप प्रयुक्ति के रूप में विकसित हो गया है। इसमें प्रयुक्त मसौदा, टिप्पणी, काग़ज़पत्र, स्पष्टीकरण, कार्यसूची, परिपत्र, कार्यालय-आदेश, बेबाक़ी-पत्र, अर्जित छुट्टी आदि अनेक तकनीकी शब्द केवल इसी प्रयुक्ति में रूढ़ हो गए हैं। इस प्रयुक्ति के बाहर इन शब्दों का प्रयोग अटपटा ही प्रतीत होता है।

हिन्दी के इस भाषा-रूप में हमें विशिष्ट शाब्दिक अन्विति के प्रयोग भी देखने को मिलते हैं। लिखित हिन्दी में प्रायः एक ही वाक्य में संस्कृत और उर्दू या संस्कृत और अंग्रेजी अथवा संस्कृत, उर्दू और अंग्रेज़ी शब्दों का साथ-साथ प्रयोग अटपटा लगता है, लेकिन कार्यालयी भाषा में ऐसे प्रयोग अस्वाभाविक नहीं लगते; जैसे—

(i) — मसौदा अनुमोदन के लिए पेश है।
(अरबी (संस्कृत) (फ़ारसी)

(ii) — आवश्यक मसौदा संलग्न फ़ाइल की पताका 'क' पर रखना है।
(संस्कृत) (अरबी) संस्कृत) (अंग्रेज़ी) (संस्कृत)

इन दोनों वाक्यों में से पहला (i) वाक्य उर्दू व संस्कृत तथा दूसरा (ii) वाक्य उर्दू, संस्कृत व अंग्रेज़ी शब्दों से मिलकर बना है। यद्यपि इन दोनों ही वाक्यों में अरबी व फ़ारसी के शब्द आए हैं फिर भी इन्हें उर्दू ही माना जाएगा क्योंकि उर्दू, जो स्वयं तुर्की का शब्द है, अरबी, फ़ारसी शब्दों पर ही टिकी हुइ है। प्रतिदिन दूरदर्शन व रेडियो पर उर्दू की ख़बरें आती हैं—उदाहरणार्थ—'मर्कज़ के वज़ीर दाख़िला ने मौक़ा-ए-वारिदात का मुआयना किया' (केन्द्र के गृह-मंत्री ने घटनास्थल का निरीक्षण किया) इस उर्दू वाक्य में केवल अरबी और हिन्दी का ही प्रयोग किया गया है, और यही उर्दू है। अंग्रेज़ी भाषा के कार्यालयी रुप में हमें कर्मवाच्य, व्यक्तिनिरपेक्ष-कथनीयता, कर्तव्यविहीना वाली संरचनाओं की प्रधानता मिलती है। इस भाषारूप में व्यक्ति की अपेक्षा 'पदनाम' प्रमुख होता है। यहां 'कर्त्ता' अपने ऊपर उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहता। सभी कार्य आदेश, अनुदेश, अनुमति, अनुमोदन, सहमति, स्वीकृति के आधार पर होते हैं। सभी अधिकारी अपने-अपने अधिकारों के क्षेत्र में ही काम करते हैं। कार्यालयी अंग्रेज़ी भाषा की इसी प्रकृति को कार्यालयी हिन्दी ने भी अपनी संरचना में सुरक्षित रखा है। व्यक्ति-सापेक्षा वाक्यों की तुलना में व्यक्ति-निरपेक्ष वाक्यों का प्रयोग बहुतायत में मिलता है। व्यक्ति-निरपेक्षता के साथ-साथ इसमें कर्मवाच्य की प्रधानता भी पायी जाती है; जैसे—

— चर्चा के अनुसार कार्रवाई की जाए।

— मंत्रालय का अनुमोदन प्राप्त किया जाए।

— इस विषय में अपेक्षित कार्रवाई की जा रही है।

— इस मामले में विशेष स्वीकृति दी जा सकती है।

— सूचित किया जाता है कि.....। आदि

उपर्युक्त उदाहरणों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि कार्यालयी हिन्दी की वाक्य-रचना सामान्य हिन्दी की वाक्य-रचना के भीतर रहकर भी चयन के सिद्धांत के आधार पर विशिष्ट है; अन्तर केवल इतना है कि कार्यालयी हिन्दी में उपर्युक्त प्रकार के वाक्य-सांचों की प्रधानता है जो कि इस प्रयुक्ति की प्रकृति के अनुसार स्वाभाविक है।

कार्यालयी हिन्दी का जो रूप आज हमारे सामने है वह अपने विकास के प्रथम चरण में अनुवाद के माध्यम से ही आया है। आज भी अनेकों वाक्य मिल जाते हैं जो कि मात्र अनुवाद भले ही हैं लेकिन प्रयोग की दृष्टि से काफ़ी अटपटे, बोझिल और कृत्रिम लगते हैं; जैसे—

1— Please discuss with relevant papers.
कृपया संगत कागज़-पत्रों के साथ चर्चा करें

2— Reference notes on prepage...
पिछले पृष्ठ की टिप्पणी के संदर्भ से...

पहले वाक्य के अनुवाद में अंग्रेज़ी और हिन्दी भाषा की प्रकृति को समझे बिना मात्र अनुवाद कर दिया गया है। अंग्रेज़ी भाषा में क्रिया में आदर, नम्रता आदि निहित नहीं होते। इसके लिए अलग से विशेषण लगाने की आवश्यकता पड़ती है, जबकि हिन्दी में क्रिया के सर्वनामों के अनुसार बदलने वाले रूप में नम्रता, आदर आदि निहित होते हैं। इस प्रकार 'डीअस्रा, जेपदीत' आदि शब्दों का अनुवाद हिन्दी की प्रकृति के अनुसार प्रतीत नहीं होता। अतः पहले वाक्य का हिन्दी-रूप 'संगत काग़ज़-पत्रों के साथ चर्चा करें' ही उपयुक्त तथा सही है।

दूसरे वाक्य के अनुवाद में 'संदर्भ' अंग्रेज़ी शब्द के 'Reference' के लिए ही रखा गया प्रतीत होता है, जबकि 'पिछले पृष्ठ की टिप्पणी से' में संदर्भ का बोध हो ही जाता है। अतः 'संदर्भ' शब्द यहां उचित नहीं है।

तकनीकी शब्दावली से भाषा कुछ बोझिल तो हो सकती है परन्तु बार-बार प्रयोग में आने से बोझिल तकनीकी शब्द भी भाषा में सहज ही फिट हो जाते हैं। भाषा अटपटी और बोझिल बनती है वाक्य-विन्यास की दुरूहता से। निविदाओं, नियुक्तियों आदि के विज्ञापनों की बोझिल भाषा अनुवादक के लिए भले ही व्यवस्थित एवं सहज लगे, लेकिन जिनके लिए वह विज्ञापन निकाला जा रहा है, उनकी समझ से तो वह परे ही होती है। यदि वाक्य छोटे हों, सहज हों तो उनमें तकनीकी शब्दों का बोझ कुछ कम खटकेगा।

कार्यालयी हिन्दी का स्वरूप अनुवाद-प्रधान होते हुए भी व्यवहार से निखरकर अपनी सही प्रकृति का उद्घाटन कर रहा है। अनुवाद परम्परा में जो हिन्दी का रूप उभरकर सामने आया है, उसमें विविध भाषाओं के शदों का समावेश है और सम्प्रेषण की दृष्टि से आज यह सही प्रतीत होता है; यथा—

1. Accepted and passed for payment.
स्वीकृत और अदायगी के लिए पास किया।
2. Budget provision exists.
बजट व्यवस्था मौजूद है।
3. File these papers.
ये काग़ज़ फ़ाइल किए जाएं।

अंग्रेज़ी के इन तीनों वाक्यों के अनुवाद में हिंदी के साथ अंग्रेज़ी, संस्कृत और अरबी के आम प्रचलित शब्दों को भी रखा गया है। यद्यपि भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह मानक हिन्दी-अनुवाद नहीं हैं, परंतु सरकारी कार्मिकों की समझ और कार्यालयों में व्यवहृत भाषा के अनुसार यह सही और सर्वमान्य प्रचलित रूप है। आज राजभाषा हिन्दी का यही वास्तविक रूप है जो लिखने और पढ़ने वाले, दोनों की ही समझ में

आसानी से आ रहा है। अनुवाद के अतिरिक्त स्थिति मसौदा, पत्र-लेखन आदि में भी स्वाभाविक रूप से दिखाई पड़ती है; उदाहरण के लिए—

— खरीदने का आर्डर जा चुका है।

— लम्बे अरसे से लम्बित आडिटपैराज को निपटाने की कृपा करें।

इस प्रकार आज कार्यालयी हिन्दी में अरबी, फ़ारसी तथा अंग्रेज़ी के इतने शब्दों का समावेश हो गया है कि चाहते हुए भी इनके व्यवहार को रोका नहीं जा सकता। इन भाषाओं के कुछ आम प्रचलित शब्द हैं—

अरबी:— दौरा, काग़ज़, नगद, मामला, मसौदा, काफ़ी, जिम्मेदारी, सलाह, अदायगी, नज़र, ज़रूरी, मौजूद, अरसा, गैर-कानूनी, दर्ज़, शिकायत आदि,

फ़ारसी:— पहल, दरोगा, गिरफ़्तार, तेज़, पेश निगरानी, दस्तावेज़, रूमाल, ख़रीदना, रेगिस्तान, रेज़गारी, शिकारी, नज़दीक, अरबी, हिन्दी, सरकार, कमोबेश आदि,

अंग्रेजी फ़ाइल, बुलैटिन, स्टाफ़, ड्यूटी, टिकट, कफ़र्यू, बैंक, चैक, पेंशन, रेल, बस, टैक्सी, पास, आर्डर, जेल, पेन, पेंसिल, फिट, आडिट, काफी, बजट, एकड़ आदि।

यदि ऐसे शब्दों के स्थान पर संस्कृत मूलाधार के हिन्दी-शब्दों का प्रयोग करें तो उच्चारण, लेखन और स्मरण, तीनों ही प्रकार से व्यावहारिकता में धारा प्रवाह टूटता हुआ नज़र आता है और भाषा भी क्लिष्ट हो जाती है, जैसे— एक्सप्रेस का द्रुतगामी, एजेंसी का अभिकरण, हाटलाइन का तात्कालिक संचार-संपर्क व्यवस्था, नगद का हाथ में तैयार रुपया-पैसा, मसौदे की हस्तलिखित सामग्री अथवा पांडुलिपि, शिकायत का उपालंभ, शिकारी का आखेटक, रूमाल का हस्त-पृक्षालन वस्त्र-खण्ड, कफ़र्यू का घरबंदी, कैपसूल की संपुटिका आदि।

इन सब बिंदुओं पर विचार करने के उपरांत केन्द्र-सरकार के राजभाषा-विभाग और वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने इस प्रकार के सर्वमान्य और सरल शब्दों के प्रयोग को मान्यता प्रदान की। ऐसे अनेक शब्दों ने आज न केवल हिन्दी के शब्द-भण्डार को बढ़ाया है वरन् राजभाषा के प्रयोग को भी सरल बनाया है।

कार्यालयी भाषा हिन्दी को यदि व्याकरणिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह दोषपूर्ण है। बर्तनी और वाक्य-रचना में अनेक त्रुटियां देखने को मिलती हैं। 'कृपया मुझे छुट्टी प्रदान करें, के स्थान पर प्रायः 'कृपया मुझे छुट्टी प्रदान करने की कृपा करें' और 'स्पष्टीकरण के लिए मंत्रालय को भेजें' के स्थान पर 'स्पष्टीकरण करने के लिए मंत्रालय को भेजें' लिखा जाता है जो कि हिन्दी-वाक्य रचना के अनुसार सही नहीं है। इसी प्रकार विदेशी-भाषा से आए शब्दों, विशेषरूप से अंग्रेज़ी भाषा के शब्दों को देवनागरी रूप देते समय विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। अंग्रेज़ी-शब्दों का उच्चारण बिल्कुल सही होना चाहिए क्योंकि अंग्रेज़ी-शब्दों का देवनागरीकरण उच्चारण पर ही अधिक निर्भर करता है। ये सब दोष कुछ तो असावधानी व अज्ञानता के कारण होते हैं और कुछ क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभाव और उच्चारण के कारण। भारत जैसे देश में जहां विविधता में एकरूपता के दर्शन होते हैं वहीं भाषा के मामले में एकरूपता में अनेकता मिलती है।

हिन्दी एक विकासशील भाषा है और किसी भी विकासशील भाषा के शब्दों में अनेकरूपता का होना स्वाभाविक है, विशेषतया भारत जैसे देश में जहां विभिन्न भाषा-भाषी कार्मिक एक ही कार्यालय में कार्यरत होते हैं। अतः भाषा का प्रयोग करते समय काल, स्थान और पात्र का ध्यान रखना अति आवश्यक है। समानार्थी शब्दों का प्रयोग सोच-समझकर करना चाहिए। सम्राट् और शाहंशाह, रानी और बेग़म, ईश्वर और अल्लाह समानार्थी हैं, एक ही हैं परंतु इनकी छवि अलग-अलग है, प्रयोग के रूप में अलग-अलग हैं।

हिन्दी जनभाषा है। "हिन्दी ने सदैव जनपदीय बोलियों और प्रादेशिक भाषाओं से आदान-प्रदान किया है। सम्भवतः जितनी ग्रहण-शक्ति हिन्दी की है शायद उतनी विश्व की अन्य किसी भाषा में न होगी। विदेशी शब्दों के ग्रहण में यह भाषा अग्रणी है"। भाषा परिवर्तनशील होती है। वह अटपटे, बोझिल और क्लिष्ट शब्दों को छोड़ती जाती है और नए सरल तथा प्रचलित शब्दों को ग्रहण करती जाती है। एक अच्छी भाषा में नए शब्दों को ग्रहण कर उन्हें अपनी प्रकृति के अनुरूप दालने तथा शब्दों को निर्मितकर उनको संचित करने की शक्ति होती है। हिन्दी भाषा में यह शक्ति विद्यमान् है। यह विदेशी भाषा के शब्दों को अपनी भाषा की ध्वन्यात्मक तथा व्याकरणात्मक विशेषताओं के अनुकूल परिवर्तन कर स्वीकार करती है, यथा—एकेडमी से अकादमी, आक्टोबर से अक्तूबर,वोल्टेज से बोल्टता, टेकनीक से तकनीक, नाइट्रोजन से नत्रजन, कंप्यूटराइज्ड से कंप्यूटरीकृत आदि।

आज राजभाषा हिन्दी जिस प्रकार से देशी-विदेशी भाषाओं के शब्दों को आत्मसात कर रही है वह स्वाभाविक ही है, क्योंकि हमारा देश बहुभाषा-भाषी है और केन्द्र-सरकार को हिन्दी के साथ-साथ सभी भारतीय भाषाओं का विकास करना है। यह एक ध्रुव सत्य है कि जितने लोगों को प्रशासन प्रभावित करता है उतने लोगों की भाषा-विविधता का प्रयोग शासन को मान्य करना होता है। इसीलिए प्रादेशिक क्षेत्र में भी भाषा, उपभाषा, बोली एवं स्थानीय शब्दावली आदि सभी को महत्व देना पड़ता है। प्रजातांत्रिक शासन की यह स्थिति अनोखी नहीं है। मुग़लों के शासन-काल में भी अनेक लोक-भाषाओं का प्रयोग होता था और जब अंग्रेज़ों का शासन आया तो उनके न्यायालयों में तरह-तरह के रूपों में लोग बयाने देते थे, जिन्हें रिकार्ड करके उनके अनुवाद के द्वारा मामले की छानबीन करने के बाद निर्णय दिया जाता था। भारत जैसे विशाल देश के प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक स्तरों पर तरह-तरह की भाषाओं का प्रयोग इतिहास और संस्कृति का यथार्थ है। इसका प्रधान कारण शासन का व्यापक विस्तार और जनता के भाषिक व्यवहार की विविधता ही माना जा सकता है।

इस स्तर पर कार्यालयी हिन्दी का मानक स्वरूप स्थापित करना असंभव नहीं तो एक कठिन कार्य अवश्य है। कार्यालयी हिन्दी के प्रयोक्ता सरकारी कर्मचारी अपने-अपने कार्य-क्षेत्रों में निपुण होते हैं जो अधिकांशतः अभी तक या तो अंग्रेज़ी माध्यम से कार्य कर रहे हैं अथवा अनुवाद के द्वारा विकसित एक विशेष सांचे में दली हिन्दी के द्वारा। इन कार्मिकों को धारा-प्रवाह हिन्दी बोलने अथवा लिखने का पूरा अभ्यास नहीं है। अतः इनसे यह आशा करना कि ये राजभाषा हिन्दी के मानक रूप का प्रयोग करें, कोई बुद्धिमत्ता नहीं कही जाएगी। फ़िलहाल इन्हें कामचलाऊ हिन्दी

का प्रशिक्षण दिया जाता है और यदि ये इतना भी ग्रहण कर लेते हैं तो यही एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

'हिन्दी को सम्पर्क और राजभाषा के रूप में अखिल भारतीय स्तर पर प्रयोग में लाने का तात्पर्य यह है कि मानक हिन्दी की संकल्पना को सामने रखते हुए केन्द्रवर्ती कार्यों में उसका प्रयोग हो किन्तु क्षेत्रीय विविधताएं भी स्वीकार्य हों और सार्वदेशिक मानकीकरण को सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रिया से उभरने को छोड़ दिया जाए। सम्पर्क-भाषा का रूप कामचलाऊ आपसी व्यवहार की हिन्दी का हो परंतु विशिष्ट प्रयोजनों के लिए जिस रूप की प्रयुक्तियां आज विकसित हो रही हैं, उनका प्रयोग हो। इस तरह अर्थमूलक सबल प्रेरक तत्व बनेगा और सभी क्षेत्रों के अखिल भारतीय स्तर पर आने के इच्छुक व्यक्तियों को हिन्दी सीखने के लिए प्रेरित करेगा'।

1. डा० भोलानाथ तिवारी—राजभाषा-विज्ञान कोश, पृ० 438
2. डा० हर्ष नन्दिनी भाटिया—हिन्दी; सम्पर्क-भाषा के रूप में (लेख); डा० भोला नाथ तिवारी व डा० कमल सिंह द्वारा संपादित—सम्पर्क भाषा हिन्दी, पृ० 86
3. डा० भोला नाथ तिवारी—मानक हिन्दी का स्वरूप, पृ० 12
4. शिवसागर मिश्र—हिन्दी हम सबकी, पृ० 16
5. दृष्टव्य—आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा, राष्ट्रभाषा हिन्दी; समस्याएं और समाधान, पृ० 46
6. दृष्टव्य—संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृ० 133, मूल संपादक-रामचन्द्र वर्मा
7. डा० सत्यव्रत—भारतीय राष्ट्रभाषा, सीमाएं तथा समस्याएं, पृ० 94

पृष्ठ 14 का शेष

चाहे कोई भी हिन्दी हो, उसे हम भाषा ही कहेंगे, जैसी पूर्वी हिन्दी भाषा, पश्चिमी हिन्दी भाषा, राजस्थानी हिन्दी भाषा इत्यादि और इनके अन्तर्गत की बोलियों को उपभाषा। लेकिन खेद का विषय है कि हिन्दी के कुछ इतिहासकार न मालूम क्यों पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी, बिहारी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी एवं पहाड़ी हिन्दी को हिन्दी प्रदेश की भाषा न मानकर, उपभाषा मानते हैं, जबकि ये सभी हिन्दी भाषा के मूलतः पांच भाग हैं और प्रत्येक भाग के अन्तर्गत तो कई उपभाषाएं हैं ही। अतः पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी, बिहारी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी और पहाड़ी हिन्दी को भाषा न मानकर, उपभाषा मान लेना, एक बड़ी विचित्र सी-बात लगती है। डा० माधव सोनटक्के का "हिन्दी साहित्य का इतिहास" तो इस बात का प्रमाण है।[9] ऐसा लगता है कि हिन्दी **भाषा एवं साहित्य** के जितने भी ऐसे इतिहासकार हैं, वे न तो हिन्दी भाषा के वर्गीकरण को ठीक से समझ पाए हैं और न तो ठीक से समझ सके हैं, भाषा और उपभाषा के मौलिक अन्तर को ही।

खैर, जहां तक बोली और काव्यभाषा में अन्तर का प्रश्न है तो इनमें फर्क तो है ही। यदि हम यहां बोली का अर्थ भाषा मान लें तो साहित्य सृजन की दृष्टि से बोली या भाषा के दो भेद हो सकते हैं—गद्भाषा एवं काव्यभाषा। गद्भाषा का इस्तेमाल आम जनता भी करती है किन्तु काव्य भाषा में तो सिर्फ कवि ही बोलता है। बोली में गाने की धुन नहीं होती लेकिन काव्यभाषा गेय एवं मधुर होती है। बोली से बुद्धि का पता लगता है पर काव्यभाषा से भावनाओं का। बोली में वर्णों एवं मात्राओं की गणना, नहीं की जाती लेकिन काव्यभाषा में वर्णों एवं मात्राओं की गणना होती है। बोली को व्याकरण की कसौटी पर हम कसते हैं, परन्तु काव्यभाषा को व्याकरण एवं काव्यांग दोनों की कसौटी पर। बोली का स्मरण, सरल नहीं लेकिन काव्यभाषा का स्मरण बोली की अपेक्षा सरलतर है। शायद इसीलिए प्रत्येक जाति का साहित्य पहले काव्यरूप में अवतरित होता है। बोली सिर्फ श्रवण का विषय है किन्तु कविता श्रवण का भी विषय है तथा पठन-पाठन का भी।

संदर्भ-सूची:

1. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास
2. मानक हिन्दी का स्वरूप, पृष्ठ-53
3. हिन्दी भाषा का वर्तमान रूप, पृष्ठ-2
4. हिन्दी साहित्य की भूमिका: डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-85
5. डा० रामकुमार वर्मा कृत हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-308
6. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिपरक इतिहास, पृष्ठ-149
7. हिन्दी भाषा का वर्तमान रूप, पृष्ठ-01
8. डा० नगेन्द्र कृत 'आस्था के चरण,' पृष्ठ-210
9. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिपरक इतिहास पृष्ठ-25
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-12

भारतीय भाषा के भविष्य के लिए जनधर्म

—डी॰ के॰ पणिक्कर

हमारा प्यारा भारत एक बहुभाषी, बहुजाति एवं बहुधर्मी देश है। इस विविधता में एकता इसकी विशिष्टता है। इस एकता का एहसास करने वाले अनेक तत्व हैं। इन तत्वों में से प्रमुख हैं—भाषा, भारत की अनगिनत भाषाएं एवं बोलियां, हम भारतीयों की बपौती है, विरासत है, विराट संपत्ति है और इन सबसे बढ़कर, हमारी सांस्कृतिक धरोहर है। इनमें से 18 भाषाओं को हमारे देश के संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल किया गया है, क्योंकि ये भाषाएं हमारी आन-बान-शान हैं। हमारी सांस्कृतिक संपत्ति इन भाषाओं में लबालब भरी हुई हैं।

हमारे देश के संविधान-निर्माता मनीषियों ने सूझ-बूझ के साथ विचार-विमर्श करके देवनागरी लिपि में लिखी हिंदी भाषा को देश की राजभाषा का दर्जा देकर गौरवान्वित किया है। साथ ही, हर प्रांत में ज्यादातर नागरिकों वारा बोली-समझी जानेवाली भाषा को, संबंधित प्रांतों की राजभाषा का दर्जा देकर गौरवान्वित किया है। स्पष्ट है कि संघ की राजभाषा हिंदी और प्रांतों की राजभाषाएं एक सिक्के के दो पहलू हैं। इन दोनों का साथ-साथ विकास, प्रचार, प्रसार व प्रयोग की ज़िम्मेदारी सरकार को सुपुर्द की गई है। इस बड़ी भारी ज़िम्मेदारी को जहां तक हो सके, निभाने के लिए सरकार सदा-सर्वदा प्रयत्नशील है। जनता-जर्नादन को सरकार की भाषा सेवा एवं भाषा धर्म के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। सिर्फ कृतज्ञता से एक बड़ा भारी उत्तरदायित्व आधा-अधूरा रह जाता है। हर देशवासी को इस अवसर पर यह सोचना चाहिए कि उन्होंने सरकार के इस प्रयत्न को सफल बनाने के लिए क्या किया है। हर भाषा-प्रेमी को इस महत्वपूर्ण मामले के बारे में गंभीरता से सोचना चाहिए। तदनंतर निजी प्रयत्न से देशवासियों को अर्थात् अपने भाई-बहनों को इस महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कर्तव्य को यथासंभव निभाने के लिए आह्वान करके, उन्हें इस वास्ते सचेत, सजग एवं सक्रिय करना चाहिए।

अंग्रेज चले गए, लेकिन अंग्रेजी वे छोड़कर चले गए। उसके मायाजाल में अब भी हमारे देशवासी फंसे पड़े हैं। वे मोहनिद्रा में हैं। उन सोच में पड़े निरीह देशवासियों को देशप्रेम एवं भाषाप्रेम के सिंहनाद जैसा शंखनाद करके जगाना, हर देश-प्रेमी एवं राष्ट्र-प्रेमी नागरिक का परम पवित्र कर्तव्य है।

संघ सरकार की राजभाषा नीति से सब लोग भली-भांति अवगत हैं। हमारे देश में, प्रशासन के माध्यम के रूप में अब तक चली आ रही अंग्रेज़ी भाषा की जगह हमें, संवैधानिक एवं सांविधिक मान्यता प्राप्त जन भाषा हिंदी को धीरे-धीरे, लेकिन स्थायी रूप से, कदम-कदम प्रति-स्थापित करना सरकार की राजभाषा नीति का सार-संक्षेप है। इस प्रक्रिया से संबंधित किसी भी व्यक्ति को रत्ती भर भी तकलीफ दिए बिना, यह काम संपन्न करने की योजना बनाकर सरकार उसे कार्यरूप दे रही है। इसमें सहयोग देना ही, अपेक्षित जनधर्म है।

हमारे संविधान में संघ की राजभाषा संबंधी समग्र व्यवस्था है। इस व्यवस्था को लागू करने में सरकार दत्तचित्त है, तो भी सबको साथ लेकर चलने के महान उद्देश्य के तहत उदार नीति अपनायी गई है। वर्ष 1963 में, संविधान में निहित राजभाषा को कार्यरूप देने के लिए, देश के संसद ने राजभाषा अधिनियम पारित किया। तदनुसार हिन्दी, हमारे देश की राजभाषा है और अंग्रेजी सह-राजभाषा है। प्रशासनिक माध्यम की दृष्टि से हमारा देश संक्रमणकाल से गुज़र रहा है। इस संक्रमण काल में, प्रशासन आवश्यकतानुसार द्विभाषिक स्थिति से गुज़रेगा। अर्थात प्रशासन की लिखा-पढी हिन्दी में या अंग्रेजी में की जा सकती है। उसके साथ, यह व्यवस्था है कि चौदह प्रकार के खास दस्तावेज, पूरे देश में अनिवार्य रूप से हिन्दी-अंग्रेजी में द्विभाषी रूप में जारी किए जायेंगे। इन दस्तावेजों पर हस्ताक्षरकर्ता अधिकारियों को इसकी द्विभाषिकता को सुनिश्चित करने की बड़ी भारी जिम्मेदारी दी गई है। प्रसन्नता की बात है कि तमिलनाडु सहित सभी प्रांतों में स्थित केन्द्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों निगमों, कंपनियों आदि-आदि में इस सांविधिक अपेक्षा का अनुपालन किया जा रहा है। लेकिन इस प्रसंग में जनधर्म भूला-बिसरा लगता है, क्योंकि इन विनिर्दिष्ट कागज़ातों की मांग हिन्दी में उतनी नही, जितनी होनी चाहिए जनधर्म को पूरा कर लेने के लिए जनता को इसकी जानकारी ज़रूरी है। अतः इन द्विभाषी विनिर्दिष्ट कागज़ातों की सूची नीचे दी जा ही है।

1. अधिसूचना, 2. संकल्प, 3. आदेश, 4. सामान्य आदेश जिसमें परिपत्र, सूचना, नोटिस आदि भी शामिल है, 5. संसद में पेश किए जाने वाले कागज़ात, 6. प्रेस विज्ञाप्ति/प्रेस टिप्पणी, 7. लाइसेंस, 8. परमिट, 9. टेंडर, 10. टेंडर नोटिस, 11. प्रतिवेदन, 12. नियम, 13. करार, 14.निविदा प्रारूप।

जनधर्म, इस प्रसंग में, यह है कि सरकारी संस्थानों से उपर्युक्त प्रकार के पत्रादि द्विभाषी रूप में ही प्राप्त करें। अकेले अंग्रेजी में ऐसे कागज़ात जारी करना कानूनन गलत है। अतः हिन्दी-अंग्रेजी में इसकी उपलब्धता पर ज़ोर देकर, हिन्दी के प्रगामी प्रयोग पर जनता-जनार्दन अपना सहयोग प्रदान कर सकते हैं। ऐसा करना देशहित में है, देशवासियों के हित में है और देश भाषा के हित में है।

जी हां, देश के ज्यादातर लोग हिन्दी जानते हैं। लेकिन कुछ लोगों को अब भी हिन्दी मालूम नहीं। उनको ध्यान में रखकर इस संक्रमण-काल में हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी में भी इन संसूचनाओं को जारी करना/कराना राष्ट्रीय कर्तव्य है। मेरी राय में केवल कानून के बल पर, कोई भी काम पूरा का पूरा सफल नहीं होगा। इस संपूर्ण सफलता के लिए सरकार और जनता का प्रयत्न एक दूसरे का पूरक होना चाहिए।

राजभाषा अधिनियम के द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए वर्ष 1976 में भारत सरकार ने राजभाषा नियम बनाकर, प्रशासन में राजभाषा

हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए कार्यों को स्पष्ट दिशा-निर्देश दिया। इसके द्वारा हर सरकारी संस्थान के अध्यक्ष को राजभाषा संबंधी आदेशों, अनुदेशों, और निदेशों को ईमानदारी से अमल करने की जिम्मेदारी दी गई। इसके लिए वे सरकार और समाज के प्रति जवाबदेह भी हैं।

उपर्युक्त राजभाषा नियम के तहत सरकारी संस्थानों में प्रयुक्त स्टेशनरी की सभी सामग्री द्विभाषी होनी चाहिए, ऐसा न होने पर, जनता-जनार्दन संबंधित अधिकारियों का ध्यान, तत्काल इस नियम उल्लंघन पर दिलाकर स्थिति कायदे-कानून कर सकती है। इस वास्ते प्रेरणा प्रदान करना जन-जन का काम है।

इतना ही नहीं, हर सरकारी कर्मचारी अधिकारी अपनी-अपनी योग्यतानुसार कार्यालयी कार्य हिन्दी में कर सकते हैं। प्रायः यह गलतफहमी पायी जाती है कि अंग्रेजी का होना, सरकारी कर्मचारी वृंद के लिए अति आवश्यक है। असल में, कहीं भी, ऐसा उल्लेख नही है।

इससे बढ़कर उक्त राजभाषा नियम में यह भी व्यवस्था है कि हिन्दी में लिखित और किसी भी भाषा में लिखित एवं हिन्दी में हस्ताक्षरित आवेदन, अभ्यावेदन, अपील, आदि का अपेक्षित उत्तर हिन्दी में दिया जाना चाहिए। इस सहायक एवं सुविधाजनक व्यवस्था के रहते हुए भी हिन्दी भाषी एवं हिन्दी प्रेमी नागरिक अपने-अपने पत्राचार केन्द्र सरकारी संस्थानों के साथ अंग्रेजी में करते/कराते हैं और वह भी कभी-कभी गलत अंग्रेजी में। मैं इस दुःखद स्थिति का मूक साक्षी बने रहना नहीं चाहता। हिन्दी भाषी एवं हिन्दी प्रेमी जनता-जनार्दन से मेरा अनुरोध है कि मुसीबतों का मुकाबला करते हुए भी वे सब सरकार के साथ हिन्दी में पत्राचार करके अपना-अपना जनधर्म निभाने की मेहरबानी करें। भारतेंदु हरिश्चंद्र की वाणी देशवासियों को जब-तब मुखरित होकर सुनाई पड़े, 'निज भाषा उन्नति अहे, सब उन्नति को मूल'।

राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग के अब तक के निष्पादन की समीक्षा से पता चलता है कि राजभाषा संबंधी नियमों, आदेशों व निदेशों की सही जानकारी न होने के कारण ही, राजभाषा कार्यान्वयन अपेक्षित गति नहीं पकड़ रहा है। इसमें तेज़ी लाना जनधर्म है। जन-जन को जगह-जगह पर इसका प्रचार-प्रसार करना चाहिए, ताकि सभी संबंधित, तत्संबंधी कानूनों से भली-भांति अवगत होकर कायदे कानून जन भाषा हिंदी में काम करने लगे। मतलब यह है कि समूचे प्रबंधन वर्ग को राजभाषा नियम की सही जानकारी चाहिए। उनको राजभाषा संबंधी प्रावधानों को गंभीरता से लेना चाहिए। उम्मीद है कि प्रबंधन-वर्ग जनवाणी की अनसुनी नहीं करेंगे। अर्थात् प्रबंधन वर्ग, जनता द्वारा प्रदत्त पदों पर आसीन होकर, भाषा संबंधी अपने दायित्वों को भली-भांति पहचानकर उस पर ठीक-ठीक आचरण करेंगे, क्योंकि यह जनादेश है। स्मरण रहे, जनादेश की अवहेलना करना, कर्तव्य की अवहेलना है, क्योंकि हमारे देश में जनतंत्र चल रहा है। चेतावनी है कि जन विरोधी रवैया खतरे से खाली नहीं। अतः हिंदी को राष्ट्रीय स्तर पर समुचित दर्जा दिलाना, उसको हाथी के दिखावे के दांत की हालत से बचा लेना, सौतेला बर्ताव से उसे बचा लेना, उसकी गरिमा और महिमा को बढ़ाने सचेष्ट एवं सक्रिय होना, रोज़मर्रा के कार्य में हिंदी का इस्तेमाल बढ़ाना, हिंदी प्रचार के वास्ते समर्पण एवं सद्भाव से काम करना, उसे अपने जीवन का प्रमुख उद्देश्य बना लेना और इस प्रकार सभी देशवासियों को हिंदी की कड़ी में सहजता एवं सरलता से पिरोकर राष्ट्रीय एकता को मज़बूत करके, राष्ट्र को मशहूर बनाना राजभाषा, संपर्क भाषा एवं राष्ट्र भाषा हिंदी के प्रसंग में सबसे बड़ा जनधर्म है। यह एक बड़ी चुनौती है। अंग्रेज़ी की अहमियत के संकट से निपटने, जन सेवक तैयार हो जाए। प्रबंधन वर्ग के लोगों को स्पष्ट शब्दों में समझा दीजिए कि जनभाषा हिंदी में काम करना, राष्ट्रीय स्वाभिमान है। इस लक्ष्य प्राप्ति के लिए संकल्प करके पहल करना हर देशवासी का कर्तव्य है, चाहें वह शासक हो या शासित क्योंकि शासक और शासित के बीच में भाषा की दीवार का होना जनतंत्र के हित में नहीं। अंग्रेज़ियत की गलत मानसिकता को बदलने का समय आ गया है, इसके परिणामस्वरूप आशातीत प्रगति हिंदी के प्रगामी प्रयोग में परिलक्षित होने लगेगी। वह दिन दूर नहीं, जबकि देश का प्रशासन देश की राजभाषा हिंदी में और राज्य सरकारों का काम राज्य की भाषाओं में संपन्न हो। प्रशासन का भाषाई माध्यम में परिवर्तन लाने के लिए सरकार के प्रयत्न को सफल बनाने की ज़िम्मेदारी जनता पर है। उसके लिए अत्यंत आवश्यक है कि जनता के सदस्य पत्रादि सरकार को दें या सरकार से लें तो हिंदी में ही लें। अपनी भाषा में कारोबार कर पाने के जन्म सिद्ध अधिकार पर, मौके पर मुस्तैदी से ज़ोर दें और अवांछित उल्लंघन से स्वयं बच लें और दूसरों को भी बचा दें। अंग्रेजी के प्रयोग पर शनै-शनै प्रतिबंध लगाकर ही, हिंदी के प्रयोग में अपेक्षित प्रगति लायी जा सकती है। याद रखें कि हमारी राजभाषा हिंदी, विश्व की किसी भी अन्य भाषा से, किसी भी रूप में कम सक्षम नहीं है। किसी ने ठीक ही कहा है कि तैरना, तैरने से ही आता है, तैराकी पर पुस्तक पढ़ने से नहीं। जी हां, ठीक ऐसे ही, हिंदी में कार्यालयीन काम करना शुरु कीजिए। इसमें कोई प्रतिबंध नहीं। शब्दों के लिए अटकिए नहीं, शैली के लिए रुकिए नहीं, आप जैसे बोलते हैं, वैसे लिखिए, हां हिंदी में लिखिए। बस हो गया काम। सरकारी हिंदी का रूप वही होगा जो हम भारतवासी इस्तेमाल करके प्रचुर प्रचार में लायेंगे। यह, संक्षेम में, हम सबका जनधर्म है।

यह मानी-जानी बात है कि परिवर्तन में ही प्रगति है। यह कंप्यूटर का ज़माना है। यदि कंप्यूटर में हिंदी का प्रवेश अब नहीं हो पाया तो कुछ वर्षों के बाद कार्यालयों में हिंदी का नामोनिशान तक नहीं रहेगा। मेरा मतलब यह है कि कंप्यूटरीकरण, हिंदीकरण में बाधक नहीं, साधक होना चाहिए। सरकार ने यह घोषणा की है कि सरकारी संस्थानों में प्रयुक्त सभी कंप्यूटरों में हिंदी में काम करने की सुविधा होनी चाहिए। नहीं तो उसे नियम का उल्लंघन माना जायेगा। राजभाषा विभाग ने केन्द्रीय सरकारी संस्थानों के संदर्भ में कंप्यूटर संबंधी भाषा नीति की घोषणा करते हुए स्पष्ट कर दिया है कि किसी भी कंप्यूटर को तभी द्विभाषी माना जायेगा, जब उसमें शब्द संसाधन के साथ-साथ डाटा संसाधन की सुविधा भी, हिंदी-अंग्रेज़ी में अर्थात् द्विभाषिक रूप में उपलब्ध हो। इस शर्त को पूरा कर लेना मुख्यतः सरकारी ड्यूटी है, तो भी इसमें भी जनता का सहयोग ज़रूरी है।

"शैक्षिक अस्मिता और भाषा"

—डा० रामगोपाल सोनी

भारत एक बहुभाषा देश है। यहां अनेक समृद्ध भाषाएं हैं। प्रत्येक भाषा क्षेत्र की अपनी एक समृद्ध संस्कृति है। भाषाओं और बोलियों के माध्यम से इन क्षेत्रों का लोक जीवन एवं लोक संस्कृति अभिव्यक्त होती है। भाषा संस्कृति की देन है और उसकी अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से होती है। भाषा केवल संस्कृति की रक्षा ही नहीं करती अपितु उसे अगली पीढ़ी के लिए संक्रमित भी करती है। मातृभाषा भाषा का सबसे सरलतम रूप है जिसे कोई भी बच्चा बिना प्रयास के सीख लेता है। हम उठते बैठते, चलते फिरते अपनी भाषा से घिरे रहते हैं। छोटा बच्चा अपनी मातृभाषा में ही सोचता है, कल्पनाएं करता है और स्वप्न देखता है। मृातभाषा बच्चे के जीवन का अभिन्न अंग बन जाती है। भाषा बच्चे के जीवन की अमूल्य निधि बन जाती है। भाषा बच्चे के हृदय की धड़कन बन उसे जीवन देती है। बालक के विकास का मूलाधार मातृभाषा है। मातृभाषा के द्वारा ही बालक के व्यक्तित्व का विकास, नागरिकता के गुणों का पोषण, जीविकोपार्जन की क्षमता, सौंदर्यानुभूति की क्षमंता, सांस्कृतिक चेतना और सृजनात्मक शक्ति का विकास होता है। भाषा को वंश परम्परा से प्राप्त नहीं किया जा सकता अपितु उसे अर्जित किया जाता है। सामाजिक संदर्भों में ही हम मातृभाषा का ज्ञान प्राप्त करते हैं। मातृभाषा का संबंध समाज-संस्कृति, मानव मन, मस्तिष्क तथा भाषा-विशेष की भाषा-व्यवस्था से होता है। अतः भाषा का अध्ययन मनोविज्ञान, समाज शास्त्र और भाषाविज्ञान की पृष्ठभूमि में ही किया जाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मातृभाषा समस्त मानसिक क्रियाओं, मनोभावों और मनोवेगों की अभिव्यक्ति का साधन है। मातृभाषा के माध्यम से ही समस्त मानसिक क्रियायें घटित होती हैं। मातृभाषा हमारी संकल्पनाओं का भी आधार है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से भाषा सामाजिक संगठन, सामाजिक मान्यताओं और सामाजिक व्यवहार को व्यक्त करती है। सामाजिक संदर्भों में भाषायी प्रयोग, भाषायी दृष्टिकोण, उसके प्रयोगकर्त्ता के व्यवहार को प्रतिबिम्बित करती है। जैसे विभिन्न सामाजिक संदर्भों में हम भाषा को विभिन्न रूपों में प्रयुक्त करते हैं। जैसे आइए पधारिए, आइए बैठिए, आ बैठ का प्रयोग हम विभिन्न संदर्भों में करते हैं। इसी प्रकार तू तुम, आप का प्रयोग भी हम विभिन्न स्थितियों में करते हैं। भाषा के द्वारा ही सामाजिक संगठन होता है और सामाजिक विकास भी भाषा के माध्यम से होता है। भाषा वैज्ञानिक का दृष्टिकोण वैज्ञानिक रहता है। वह भाषा की ध्वनियों और संरचना पर विचार करता है। भाषाविज्ञान के अनुसार भाषा यादृच्छिक वाक् प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा मानव-समुदाय आपस में व्यवहार करता है। भाषा समाज सापेक्ष होती है और समस्त मानवीय और सामाजिक गुणों का विकास भाषा के द्वारा होता है। प्रसिद्ध भाषा शास्त्री रॉबर्ट लैडो ने कहा है "भाषा का गहन सम्बंध मानव अनुभूतियों तथा क्रियाओं से है।" मातृभाषा व्यक्ति के लिए माता के समान ही वंदनीय तथा आत्मीय होती है। किसी ने ठीक ही कहा है "मातृभाषा सामाजिक दृष्टि से निर्धारित व्यक्ति की वह आत्मीय भाषा है जो व्यक्ति की अस्मिता को किसी भाषायी समुदाय की सामाजिक परम्परा और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से संबद्ध करती है।"

मातृभाषा के परिप्रेक्ष्य में यदि हम शिक्षा के माध्यम पर दृष्टि डालें तो एक गहरा विरोधाभास देखने को मिलता है। हमने अपने देश में अंग्रेजी की शिक्षा अनिवार्य कर दी है जो बच्चों पर एक अनावश्यक बोझ है। अंग्रेजी की अनिवार्य शिक्षा ने हमारे देश के करोड़ों बच्चों को दिमागी तौर पर पंगु तथा अपाहिज बना दिया है। त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत अंग्रेजी का अध्ययन अनिवार्य है। इस प्रकार भारतीय बच्चों पर अंग्रेजी थोपी जा रही है। अंग्रेजी भाषा की संरचना हमारी भाषा से भिन्न है, इसलिए भारतीय विद्यार्थियों को अंग्रेजी सीखने में अतिरिक्त प्रयास करना पड़ता है। भाषा का अध्ययन करते समय हम उस भाषा-क्षेत्र की संस्कृति से भी परिचय प्राप्त करते हैं। अंग्रेजी की कक्षा में बच्चा चुपचाप बैठा रहता है क्योंकि अंग्रजी पर उसका प्रभुत्व नहीं है, उसकी अभिव्यक्ति खंडित रहती है, उसकी अभिव्यक्ति का दायरा बहुत सीमित रहता है। अपने मनोभावों और अनुभूतियों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने में अक्षम रहता है। इसलिए अंग्रेजी अध्यापक की कक्षा में एक सन्नाटा रहता है, अंग्रेजी अध्यापक यह समझता है कि उसका बड़ा दबदबा है। इसके विपरीत हिन्दी या मातृभाषाओं की कक्षा में बालक मुखर रहते हैं। वे अपनी कठिनाइयां पूछ सकते हैं। देश में केवल दो प्रतिशत लोगों की मातृभाषा अंग्रेजी है और तीन प्रतिशत छात्र अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। 97 प्रतिशत छात्रों पर जबरदस्ती अंग्रेजी थोपी जा रही है। हमने विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम या अनिवार्य बनाकर अपने बच्चों को अपने देश में विदेशी बना दिया है। हमारे बच्चे अपने को बौना महसूस कर रहे हैं। यह जाल हमारा बनाया हुआ है और हम इसमें छटपटा रहे हैं इसे काटकर बाहर आना हमारे लिए कठिन है। महाभारत में एक उदाहरण मिलता है कि रेशम का कीड़ा अपने मुंह से निकले हुए रेशम के तार में इतना मोहांध हो जाता है कि उसे अपने चारों ओर लपेटने लगता है और अंत में उसी में बंधकर मर जाता है। हमारी भी यही स्थिति है। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने के कारण हमारे छात्र विदेशी चिंतन पद्धति, विदेशी आचार-विचार और संस्कृति में रंग गए हैं। वे अपने गौरवमय अतीत तथा समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा से कट गए हैं। ब्रिटिश शासन काल में अंग्रेजी शिक्षा देने का उद्देश्य ब्रिटिश राज्य की जड़े मजबूत करना था। भारत में अंग्रेजी शिक्षा देने के उद्देश्य का वर्णन करते हुए लॉर्ड मैकाले ने कहा था "भारत में मेरा अंग्रेजी शिक्षा देने का यह उद्देश्य है कि जो भारतीय विद्यार्थी स्कूलों और कालेजों से पढ़कर निकलें वे शक्ल सूरत से तो भारतीय रहें परंतु बौद्धिक दृष्टि से अंग्रेजी तथा अंग्रेजीयत के भक्त बन जायें।" मैकाले की भविष्यवाणी सच हुई, मैकाले के मानस-पुत्र मैकाले की शिक्षा-प्रणाली को आज भी चला रहे हैं। उसमें आमूल-चूल परिवर्तन

लाने में हम आज भी असमर्थ हैं। आज भी हमारी शिक्षा-संस्थाएं काले अंग्रेजों को पैदा करने के कारखाने हैं। अंग्रेजी भाषा में प्रभुत्व प्राप्त करने के प्रयास में भारतीय विद्यार्थी अपनी शक्ति का अपव्यय कर रहे हैं। अंग्रेजी ने उनमें एक हीन भावना भर दी है। देश में शिक्षा का प्रचार प्रसार बढ़ा है। इस समय देश में करीब 200 विश्वविद्यालय हैं पर शिक्षा में कोई गुणात्मक सुधार नहीं हुआ। हम अच्छे वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजीनियर तथा प्रशासक पैदा करने में असफल हैं। अंग्रेजी के माध्यम से विद्यार्थी अधकचरा ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं, उनमें पांडित्य तथा गहराई का अभाव है। हमारे देश में प्रतिभाओं की कमी नहीं है पर अंग्रेजी के ज्ञान के अभाव में वे गुमनामी का जीवन बिताने के लिए अभिशप्त हैं। महात्मा गांधी ने इस बात की ओर संकेत करते हुए कहा था "विदेशी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने के कारण हमारे देश के बच्चे अपने देश में ही विदेशी हो गए हैं।" महात्मा गांधी हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के विकास के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। वे मातृभाषा के कट्टर समर्थक थे। मातृभाषा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए गांधी जी ने कहा था "मनुष्य के मानसिक विकास के लिए मातृभाषा उतनी ही आवश्यक है जितना कि बच्चे के विकास के लिए माता का दूध। बालक पहला पाठ अपनी माता से ही पढ़ता है इसलिए उसके मानसिक विकास के लिए उसके ऊपर दूसरी भाषा लादना मैं मातृभूमि के विरुद्ध समझता हूं।"

परन्तु हमारे देश के शासनकर्त्ता गांधी जी की बात को अनसुना कर अंग्रेजी के पीछे दौड़ रहे हैं। यह दौड़ आत्मघाती है। एक अंग्रेज विद्वान डब्ल्यू०बी० यीटस ने तो यहां तक कहा है "भारत में अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा प्रणाली चलाकर ब्रिटेन ने भारत का सबसे बड़ा नुकसान किया है, उसने भव्य लोगों की आत्माओं में हीनता की भावना भरकर उन्हें नकलची बना दिया है।" कान्वेंट और पब्लिक स्कूलों ने इस देश में एक अपसंस्कृति को जन्म दिया है जिससे इस देश में एक फूहड़, निकम्मा, खोखला और नकलची वर्ग पैदा किया है जो अंग्रेजों की नकल करने में अपना गौरव समझता है। यह वर्ग अपने देश की आम जनता से कटा हुआ है और आम जनता को नीची दृष्टि से देखता है। अंग्रेजी माध्यम से पढ़कर निकले बच्चे अपने माता-पिता को भी नीची निगाह से देखते हैं। अंग्रेजी दां लोग बड़प्पन के झूठे अहं में डूबे अपने देश की मुख्यधारा से कटे हुए हैं। वे अंग्रेजी के बल पर ऊंचे पदों को प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं और समृद्धि तथा सम्पन्नता का जीवन व्यतीत करते हैं। हिन्दी माध्यम या अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र छोटी सी नौकरी प्राप्त कर पाते हैं और कुंठा तथा दरिद्रता में जीते हैं। अंग्रेजी ने हमारे देश में अमीरी और गरीबी की गहरी खाई खोद दी है। अंग्रेजी शिक्षा ने समाज में विषमता का पोषण किया है। हम समानता लाने की बात करते हैं पर जब तक सब बच्चों को समान शिक्षा नहीं दी जाएगी तब तक समानता नहीं आ सकती। समाज में शिक्षा के माध्यम से ही समानता लाई जा सकती है। शिक्षा समाज परिवर्तन का सशक्त माध्यम है। देशी भाषाओं से शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्रों में प्रतिभा की कमी नहीं है। एक सर्वेक्षण से पता चला है कि पब्लिक स्कूलों से पढ़कर निकले हुए छात्र अच्छे व्यापारी, विक्रेता, प्रशासक और प्रबंधक बनते हैं पर उनमें बहुत कम छात्र प्रसिद्ध दार्शनिक, चिंतक, विचारक, लेखक तथा वैज्ञानिक बन पाते हैं। उसका एक मात्र कारण यह है कि अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र बहिर्मुखी रहते हैं इसलिए सत्ता में पहुंचने के मार्गों को वे सरलता से ढूंढ लेते हैं परन्तु भारतीय भाषाओं में शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र अंतर्मुखी हैं, इसलिए चिंतन के क्षेत्र में उनकी पकड़ गहरी रहती है। जिस भाषा के सहारे बच्चा अपने सामाजिक परिवेश के अनुभवों को व्यक्त करता है यदि स्कूली भाषा उससे भिन्न है तो सीखने की प्रक्रिया में बाधा पड़ती है। इसके विपरीत यदि शैक्षिक भाषा अनुभवों को व्यक्त करने वाली भाषा के समीप है तब बच्चे के लिए शिक्षा ग्रहण करना सहज और सरल होता है। यदि शैक्षिक भाषा अनुभवसिद्ध भाषा से अलग है तब शिक्षा प्राप्त करने वाली भाषा पर उसकी पकड़ कमज़ोर होती है और ज्ञान प्राप्त करने में बाधा पड़ती है। जैसे अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने वाले भारतीय छात्र। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार निम्नवर्ग तथा गरीब घरों में पलने वाले बच्चे सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े होते हैं। उनके पिछड़ेपन का कारण उनका घरेलू वातावरण है। उनकी भाषा खंडित अपूर्ण तथा अर्थहीन होती है। अमेरिका के एक भाषा वैज्ञानिक ने नीग्रो बच्चों का सर्वेक्षण किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि नीग्रो बच्चों की भाषा अपूर्ण एवं खंडित है क्योंकि नीग्रो बच्चों के पास भाषा को विभिन्न अवसरों पर प्रयुक्त करने के अवसर कम रहते हैं। इसलिए सही और अर्थपूर्ण वाक्य बोलने मे वे असमर्थ रहते हैं। पदार्थों मे निहित संकल्पना को नीग्रो बच्चे पकड़ नहीं पाते, जैसे चॉकलेट कहने से मीठे पदार्थ का बोध वे नहीं कर पाते। उनके विचार खंडित तथा तर्कहीन रहते हैं इसलिए उनके व्यक्तित्व का संतुलित विकास नहीं हो पाता। भारतीय विद्यार्थियों पर भी यही बात लागू होती है। निम्नवर्ग तथा मध्यवर्ग के बच्चों की शैक्षिक असफलता का कारण उनकी भाषा है। शिक्षा की असफलता का कारण उनकी भाषा है, इसलिए शैक्षिक प्रगति का कारण भाषा है।

भाषा-शिक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य है विषय वस्तु को समझना और उसे अनुभव सिद्ध कर अभिव्यक्त करना। बच्चा भाषा के माध्यम से कल्पना की उड़ाने भरता है, संकल्पनाओं का निर्माण करता है और अपनी जिज्ञासा की पूर्ति करता है। भाषा के माध्यम से ही बच्चा अपने विचारों का संप्रेषण करता है। भाषा कोई अमूर्त एवं वायवीय संकल्पना नहीं है बल्कि वह सामाजिक संदर्भों एवं सामाजिक मूल्यों से जुड़ी होती है। मातृभाषा में शिक्षा देने का अर्थ है अपनी संस्कृति और समाज से जोड़ना। मातृभाषा व्यक्ति की शैक्षिक अस्मिता को पुष्ट करती है और उसे समाज से जोड़ती है। बालक जितनी सहजता, सरलता, स्पष्टता और प्रभावी ढंग से अपने विचारों और भावों को मातृभाषा के द्वारा व्यक्त कर सकता है उतना अन्य भाषा में नहीं क्योंकि मातृभाषा बच्चे के संवेगात्मक अनुभवों से जुड़ी होती है। अंग्रेजी एक विदेशी भाषा है, वह हमारे संवेगात्मक अनुभवों से कभी नहीं जुड़ सकती, वह हमारी कामकाजी भाषा है। अंग्रेजी हमारे सामाजिक परिवेश को कभी व्यक्त नहीं कर सकती। भारतीय भाषाओं में रिश्ते-नाते के लिए अनेक शब्द हैं पर अंग्रेजी में इनका नितांत अभाव है क्योंकि वहाँ रिश्ते औपचारिक हैं। अंग्रेजी में केवल अंकल और आंटी शब्द हैं पर हमारी भाषाओं में चाचा, मामा, फूफा और चाची, काकी, मामी और बुआ शब्द हैं। पर दुर्भाग्य की बात यह है कि हमने अंग्रेजी को अतिरिक्त सम्मान दे रखा है। वह सिंहासन पर बैठने वाली रानी है। जो अंग्रेजी बोलता या लिखता है वह सभ्य, शिक्षित और विद्वान समझा जाता है। अंग्रेजी ने वर्गभेद को बढ़ावा दिया है। अंग्रेजी भाषा ने हमारे बच्चों को हमारी सामाजिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत से दूर कर दिया है। वे अपनी अस्मिता को खोकर निष्प्रभ हो गए हैं। अंग्रेजी ने हमारे बच्चों

शेष पृष्ठ 25 पर

गीत काव्य का भविष्य

—राज कुमार सैनी

गीत काव्य के भविष्य की चर्चा करने से पहले गीत के भूत और वर्तमान की चर्चा करना ज़रूरी लग रहा है।

गीत का संबंध सामान्यतः राग से जोड़ा जाता है। लेकिन यह तो अर्द्धसत्य है। अर्द्धसत्य यह भी है कि गीत का संबंध विराग से भी है।

राग को हमारे यहां पंच कंचुकि में शुमार किया गया है। ये पांच हैं—राग, विद्या, काल, कला और नियति! आणव या पाशव स्थिति से मुक्त होने के लिए इनसे मुक्त होना अपेक्षित है, ऐसा भी कहा गया है।

लेकिन गीत सच्चे वैरागियों का भी प्रतिपाद्य रहा है। इसीलिए हमारे भक्त कवियों ने राग भरे महान गीतों की रचना की तो संत कवियों ने विराग भरे महान गीतों की रचना की। सूर और कबीर ने राग और विराग भरे गीतिकाव्य की रचना की। 'बूझत स्याम कौन तू गोरी' राग भरी गीति-रचना है तो 'जा दिन मन पंछी उरि जै हैं' विराग भरी गीति-रचना है। अतः रागियों, अनुरागियों और वैरागियों सभी के लिए गीत काव्य प्रासंगिक है। मीरा के गीतों में और महादेवी वर्मा के गीतों में भी राग-विराग भरे स्वर ध्वनित-प्रतिध्वनित होते हैं। हिंदी का छायावादी काव्य भक्तों और संतों के काव्य की ही तरह राग-विराग भरे गीतों का कीमती ज़खीरा है। निराला हिंदी के आधुनिक महान गीतकार हैं। उनके गीत-काव्य में भी राग-विराग भरे स्वर हैं। शायद इसीलिए डा० राम विलास शर्मा ने निराला की श्रेष्ठ कविताओं और गीतों के संकलन का जब संपादन किया तो उसका नाम 'राग-विराग' ही रखना उचित समझा। स्वयं महाकवि निराला ने संभवतः 'मतवाला' के मुखपृष्ठ के लिए ये पंक्तियां लिखते समय प्रकारान्तर से अपने गीतों की ओर ही संकेत किया होगाः

'अमिय गरल शशि सीकर रविकर
राग-विराग भरा प्याला।
पीते हैं जो साधक उनका
प्यारा है यह 'मतवाला'।

उर्दू के महान कवि ग़ालिब (जो स्वयं को हिंदवी का शायर कहते थे) ने भी राग और विराग भरा गीत-काव्य रचा है। यहां प्रसंगवश कह दूं कि गज़ल को भी मैं एक तरह का गीत मानकर ही चल रहा हूं। ग़ालिब की गज़लों में एक शेर राग-भरा होता है दूसरा विराग-भरा। उदाहरण के लिए एक ही ग़ज़ल का एक शेर—

'वह चीज़ जिसके लिए हमको हो बहिश्त अज़ीज
सिवाय बादः ए गुलफाम-ए मुश्कबू क्या है!'

यह शेर राग भरा है। अब इसी ग़ज़ल का दूसरा शेर देखिए—

'जला है जिस्म जहां दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख, जुस्तजू क्या है।

इस शेर में विराग ही विराग है। यही नहीं ग़ालिब के एक ही शेर में कहीं-कहीं राग और विराग दोनों का द्वंद्व व्यंजित होता हैः

'ईमां मुझे रोके है तो खींचे है मुझे कुफ्र
काबा मेरे पीछे है कलीसा मेरे आगे'

निष्कर्ष यह कि गीत काव्य का प्रतिपाद्य राग और विराग दोनों हैं।

गीत संस्कृत-शब्द है। गै + क्त — यानि भूतकालिक कर्मणि कृदन्त है यह! इसका अर्थ हुआ—गाया हुआ! अलापा हुआ। जिसे गाया जा सके अयनम पर (वीणा पर) वही गीत हैं। युरोप में Lyric शब्द यूनानी Lyre लाइअर अथवा Lyra लाइअरा से बना है। लाइअर अथवा लाइअरा का भी अर्थ वीणा है। जो वीणा पर गाया जा सकता है, वह गीत है।

गीतों की शुरुआत हमारे यहां वैदिक ऋचाओं से हुई होगी। मिश्र के पिरामिड पाठ (Text) वहां के पहले शोकगीत (Elegy) रहे होंगे। भारत में चारों वेदों में गीत-काव्य का श्रेष्ठ रूप मिलता है। सामवेद और गीत का संबंध सर्वविदित है। गीत के पाठ का प्राचीनतम रूप भी हमारे यहां वेद-पाठ ही रहा होगा। ऋचाएं अलापी जा सकती हैं, अतः वे गीतिकाएं ही हैं। गीतिका का अर्थ है छोटा गीत। कालान्तर में एक गीतिमय छन्द भी गीतिका ही कहलाया। लगभग सभी प्रकार के छन्द गाए जा सकते हैं। अतः वे गीत के ही विविध आकार-प्रकार हैं। कवित्त, सवैया आदि छन्द भी गीतिकाएं हैं। इसी प्रकार सानेट और गज़ल भी गीत के ही प्रकार माने जाने चाहिएं। रूबाई, चतुष्पदी, मुक्तक, कतअः आदि को गीतिकाएं माना जाना चाहिए!

संस्कृत के महाकवि जयदेव संस्कृत के अन्तिम महान कवि हैं। वे भारतीय साहित्य के महानतम गीतकारों में से हैं। जयदेव बंगला, उड़िया और मिथिला के भी बड़े गीतकार माने जाते रहे हैं। डा० सुनीति कुमार चटर्जी की मान्यता है कि जयदेव का 'गीत गोविन्द' संस्कृत का श्रेष्ठ गीत काव्य है।

युरोप में भी श्रेष्ठ गीत-काव्य की रचना हुई है। फ्रेन्च भाषा में महाकवि बादलेअ, मलार्मे, वर्लेन, रिम्बो, रिल्के आदि ने महान गीतों की रचना की है।

अंग्रेजी में शेक्सपियर के सानेट्स गीत काव्य ही कहलाएंगे। महान कवि कीट्स, शैले, बायरन, कालरेज, वर्डस्वर्थ, टेनीसन, जान क्लेअर, बर्न्स, थामस मूर, थामस ग्रे आदि ने अलग-अलग ढंग के श्रेष्ठ गीत रचे हैं। थामस-ग्रे का एक शोक गीत तो विश्व भर में प्रसिद्ध है; जो सर्वश्रेष्ठ शोकगीत समझा जाता है।

स्पेनिश के महान गीतकारों में कैम्पाना, डी अनुनजिओ, उन गैरैट्टी, मान्टेल और क्वासीमोदो के नाम उल्लेखनीय रहेंगे।

आधुनिक भारत में बंगाल के महान कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के गीतों से कौन अपरिचित है? तमिल के सुब्रह्मण्य भारती ने राष्ट्रभक्ति के गीतों की सृष्टि की है जो आज भी बड़े चाव के साथ गाए जाते हैं। इसी परम्परा में मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, निराला और दिनकर के राष्ट्रगीत आज भी हिन्दी भाषी जनता के कंठहार बने हुए हैं। दत्तात्रेय कोंडो घाटे (दत्त कवि) तथा मोरपंत मराठी के प्रसिद्ध गीतकार माने जाते हैं।

हिन्दी साहित्य का आदि, मध्य और आधुनिक काल गीतकारों से संपन्न है। विद्यापति हिन्दी के अतिरिक्त बंगला के भी गीतकार माने जाते हैं। मैथिली का यह महान गायक एक तरह से हिन्दी का जयदेव है।

'सर विनु सरसिज, सरसिज विनु सर
की सरसजि विनू सूरे
योवन विन तन, तन विनु यौवन
की यौवन पिय दूरे।'

सूर, कबीर, मीरा, घनानन्द, रसखान, शेख, आलम हिन्दी के श्रेष्ठ गीतकार हैं। तुलसीदास ने भी मनमोहक और सुन्दर गीत लिखे हैं। निराला का गीतकाव्य गोस्वामी तुलसीदास के इस गीत को सुन कर ही प्रस्फुटित हुआ था—

'राम चन्द्र कृपालु भजमन हरण भवभय दारुणम'

कहते हैं कि यह गीत निराला जी ने अपनी पत्नी (श्रीमती मनोहरा देवी) से हारमोनियम पर सुना था।

भक्तों और संतों के हिन्दी गीति-काव्य की ही तरह छायावादी युग का हिन्दी गीतिकाव्य उच्च कोटि का है। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, निराला, महादेवी, दिनकर, बच्चन, नरेंद्र शर्मा, त्रिलोचन, शील, नागार्जुन, धर्मवीर भारती, अज्ञेय, गिरिजा कुमार माथुर, ठाकुर प्रसाद सिंह, जानकी वल्लभ शास्त्री, शम्भुनाथ सिंह, नेपाली, नीरज, शैलेन्द्र, दुष्यन्त, भरत व्यास, बलबीर सिंह 'रंग' आदि ने अपने-अपने ढंग से गीत-काव्य की श्रीवृद्धि की है। निराला और त्रिलोचन समकालीन गीति-काव्य के पुरोधा हैं। निराला आधुनिक गीत काव्य के सर्वोत्तम प्रतिमान हैं।

हिन्दी की उपभाषाओं में भी श्रेष्ठ गीतकारों की परम्परा है। अवधी भाषा में विरहा गाने वाले कई महत्वपूर्ण गीतकार हुए हैं। राहुल सांकृत्यायन ने भोजपुरी के उत्कृष्ट गीतकार लोकनायक बिसराम तथा बुन्देलखंडी के कविवर ईसुरी के गीति-काव्य का विशेषोल्लेख किया है। हरियाणा में भी एक श्रेष्ठ गीतकार लखमीचन्द हुआ है जो हरियाणवी जनता को अत्यंत प्रिय है। उसकी रागनियां आज भी वहां के सहृदयों का कंठहार बनी हुई हैं।

उर्दू में मीर, ज़ौक, ग़ालिब, ज़फर, दाग़, इकबाल, फैज़ अहमद फैज़, फ़िराक, मजाज़, नरेश कुमार शाद, अहमद फराज़ और परवीन शाकिर जैसे ग़ज़लकारों की एक कतार है जिसमें उर्दू में उच्च कोटि का गीति काव्य रचा है।

यह हुआ गीतिकाव्य का भूतकाल, जो विश्व-साहित्य और विश्व-संस्कृति की मूल्यवान धरोहर है।

अब हिन्दी के समकालीन गीति-काव्य की ओर, यानि; हिन्दी गीत-काव्य के वर्तमान की चर्चा करें।

हिन्दी गीति-काव्य का वर्तमान उतना समृद्ध नहीं है जितना उसका अतीत। कहना ही होगा कि यह सचमुच उतना आशामय, उतना संभावनापूर्ण नहीं है जैसा कि अतीत का गीतिकाव्य। हिन्दी गीति-काव्य का अतीत तो उसके स्वर्णयुगों की एक श्रृंखला था लेकिन उसका वर्तमान तो गीति-काव्य का रजत युग भी नहीं कहा जा सकता। ले दे कर कुछ गिने चुने नाम हैं जो अत्यंत संकोच के साथ ही लिए जा सकते हैं—पत्र-पत्रिकाओं के गीतकारों में रमेश रंजक, नचिकेता, शांति सुमन, शेरजंग गर्ग, कुलदीप सलिल, सुलतान अहमद, राम कुमार कृषक, माधव मधुकर, लक्ष्मी शंकर वाजपेयी, कांति मोहन, चंचल चौहान आदि। और यदि अन्यथा न लें तो इस सूची में अपना नाम भी इधर अथवा उधर रख लूं।

मंच के कवियों में रमानाथ अवस्थी, मधुर शास्त्री, बाल कवि बैरागी, कुंवर बेचैन, धनन्जय सिंह आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

कुल मिला कर यही कहा जा सकता है कि भविष्य का आधार वर्तमान होता है, और गीत काव्य का वर्तमान कुल मिलाकर यही है कि औसत-दर्जे का ही गीत-काव्य लिखा जा रहा है।

इस निराशाजनक स्थिति के कारण हमारे समय की नियति में और परिस्थितियों के कुचक्र में भी खोजे जा सकते हैं। तथापि कुछ कारण ऐसे भी हैं जिनके लिए हमारे समकालीन गीतकार स्वयं उत्तरदायी हैं।

मेरी राय में हमारे समकालीन गीतकार दो कारणों से उत्तरदायी हैं। एक कारण है गलेबाज़ी के नुस्खे, जिन्हें वे कवि-सम्मेलनों या कवि गोष्ठियों में आज़माते हैं। दूसरा कारण है घिसी-पिटी और पिटी-पिटाई तुक धर्मिता! विडम्बना यह है कि जो गीतकार गलेबाज़ी और घिसी-पिटी तुकधर्मिता के सहारे सृजन-धर्मिता की क्षतिपूर्ति करते चलते हैं वे ही प्रायः यह गुहार लगाते सुनाई देते हैं कि 'गीत मर रहा है!'

तो गीत के लिए सबसे बड़ा खतरा यही है कि उसे गलेबाज़ी और तुकधर्मिता की पिटी-पिटाई जकड़ बन्दियों से जूझना पड़ रहा है। गीतकारों को सेचना होगा कि निराला के 'बादल राग' और 'सरोज-स्मृति' जैसे गीतों से क्या-क्या सीखा जाए! यदि समकालीन गीतकार नए समाज और व्यक्ति के जीवन में बदलते हुए संश्लिष्ट और जटिल यथार्थ से आंखें मूंदते हैं, जन-संघर्षों से आंखें चुराते हैं, सृजन-धर्मी लेखकों की सोहबत करने से कतराते हैं, कवि-सम्मेलनों और कवि-गोष्ठियों में सिर्फ जमने और पिघलने के लिए लालायित, आतुर और तत्पर रहते हैं तो गीति-काव्य का भविष्य निश्चय ही अन्धकारमय और निराशाजनक है। तथापि इस तनाव भरे युग में और आगे भी जितनी जरूरत गीतिकाव्य की है उतनी शायद पहले कभी महसूस नहीं की गई होगी। तो यह चुनौती भरा जोखिम है। यदि गीत की नई-नई संभावनाओं की तलाश होगी, नवोन्मेष-शालिनी दृष्टि और विवेक के साथ जन-संघर्षों से ऊष्मा ग्रहण की जाएगी तो गीति-काव्य का भविष्य आलोकित हो उठेगा। अतः गीतकारों के लिए यह चुनौती है कि वे समयोचित विवेक और संविवेक के साथ ज्ञानात्मक संवेदन और संवेदनात्मक ज्ञान संबंधी अपनी परिधि का विस्तार करें। अपने अन्तर्जगत और बहिर्जगत के बीच एक साथ संवेदन-ज्ञानात्मक और ज्ञान-संवेदनात्मक संवाद करने के लिए कृतसंकल्प हों। सांस्कृतिक, साहित्यिक और कलात्मक पिछड़ेपन से अपना पिंड छुड़ाएं। इन्द्रिय-बोध के स्थान पर सौन्दर्यबोध को विकसित और समुन्नत करें। देह की न्ज्ञाय व्यक्तित्व और

गुणों पर दृष्टि डालें! ग़ालिब और निराला जैसे गीति काव्य के महान रचनाकारों की रचनाओं से कुछ न कुछ सीखते रहें और उर्दू और हिन्दी की मिली-जुली गंगा-जमुनी शैली को अपनाएं तो मेरा विश्वास है कि हमारे समकालीन गीतकारों की साहित्य-साधना रंग लाएगी और गीत का भविष्य आशाजनक और संभावनापूर्ण होता जाएगा।

अब अंत में गीत-विरोधी रचनाकारों/आलोचकों से भी मुखातिब होकर यह कहना चाहता हूं कि पश्चिम में नए ढंग के प्रयोगवादी और आधुनिकतावादी रचनाकारों ने भी गीत लिखे हैं। एज़रा पाउंड से ले कर टी०एस० इलियट, डाइलन थामस, डब्ल्यू० एच० ऑडेन, एलेन टेट, जान क्रो रैन्सम तक सभी आधुनिकतावादियों ने गीतों की रचना की है। हिन्दी में अज्ञेय, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, भवानी प्रसाद मिश्र, रघुबीर सहाय ने गीत-लेखन में रुचि दिखाई। अतः गीत से गुरेज़ करना या परहेज़ करना युक्तियुक्त नहीं है। उधर गीतकारों को भी मुक्त छन्द और ब्लैंक वर्स (Blank Verse) तथा मुक्त धंद (Fee Verse) की कविताएं पढ़नी चाहिए और उनमें से भी अपने लिए नई संभावनाओं की तलाश कर अपने गीतों की रचना करते समय उनका सृजनात्मक इस्तेमाल करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

निष्कर्ष यह है कि गीत और अगीत को एक दूसरे के विरुद्ध प्रतिस्थापित (Counter pose) करने की बजाए एक दूसरे से संवाद कर पाने में सक्षम होना है। इस प्रक्रिया में गीत और अगीत दोनों एक दूसरे से लाभान्वित होंगे और दोनों का भविष्य संभावनापूर्ण होगा।

पृष्ठ 22 का शेष

में हीन भावना भर दी है। देश और समाज के लिए यह घातक है। अंग्रेजी के अधिपत्य से मुक्त होना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है। एक विद्वान ने ठीक ही कहा है "भाषा का आंदोलन मनुष्य मात्र की मुक्ति का आंदोलन है।" जब हम अपने बच्चों को अपनी भाषाओं में शिक्षा देंगे तब बच्चों के मन में अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति सम्मान का भाव पैदा होगा। हमारा सम्पूर्ण प्राचीन साहित्य संस्कृत में है। संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण हमारे बच्चे अपने गरिमामय अतीत से अनभिज्ञ हैं। संस्कृत विश्व की सबसे अधिक समृद्ध और वैज्ञानिक भाषा है। हमारा सम्पूर्ण ज्ञान इसी भाषा में सुरक्षित है। अपनी भाषाओं के माध्यम से शिक्षा-ग्रहण करने से बच्चों की ग्रहण-शक्ति का विकास होगा और उनकी सृजनात्मक शक्ति सक्रिय होगी। रूस, जर्मनी, फ्रांस, जापान आदि देशों ने अपनी भाषाओं के माध्यम से इतनी वैज्ञानिक प्रगति की है। अंग्रेजी के पक्षधर दलील देते हैं कि अंग्रेजी ज्ञान की खिड़की है और उसके बिना अन्य देशों से कट जाएंगें। परन्तु यह अर्धसत्य है। दुनिया के तमाम देशों के लोग अंग्रेजी नहीं जानते पर वे किसी से पीछे नहीं हैं। रूसी भाषा में विज्ञान के ग्रंथ, जर्मनी में कला और दर्शन तथा फ्रैंच में कला, साहित्य का विपुल भंडार है। जब इस देश के अध्यापक, प्राध्यापक, वैज्ञानिक, लेखक, विचारक इस बात का दृढ़ निश्चय कर लेंगे कि हमें हिंदी माध्यम से शिक्षा देनी है तब हर विषय की पुस्तकों का प्रणयन हो जाएगा। कोई भी भाषा प्रयोग से विकसित और समृद्ध होती है। यदि हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दी जाने लगे तो कुछ दिनों में हिन्दी समृद्ध भाषा बन जाएगी। शिक्षा के माध्यम के अलावा जब हिन्दी का प्रयोग सरकारी काम काज में होने लगेगा तब अंग्रेज़ी के पांव उखड़ जाएंगे और भारतीय भाषा समादृत होंगी। फारसी और अंग्रेजी भाषा राज्याश्रय के कारण ही समृद्ध हुई और यहां के जनमानस पर छा गईं।

जब हमारी भाषायी अस्मिता जागृत होगी, तब देश की सम्पूर्ण शिक्षा संस्थाएं हिन्दी का प्रयोग करने लगेंगी, तब जनमानस में एक नई चेतना पैदा होगी। जिस दिन हम अंग्रेजी के जुए को उठाकर फेंक देंगे, उस दिन सच्चे प्रजातंत्र की स्थापना होगी और हमारे बच्चे मौलिक चिंतन की सामर्थ्य प्राप्त करेंगे। अंग्रेजी से अनुवादित हिन्दी कृत्रिम और निर्जीव भाषा है। हमें अपनी भाषा को सजीव और प्राणवान बनाना है। प्राणवान और जीवंत भाषा ही हमारी अस्मिता को व्यक्त कर सकती है और सच्चे अर्थों में हम शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। भाषायी अस्मिता ही शिक्षा की अस्मिता है।

जब तक इस देश का राज काज अपनी भाषा में नहीं चलेगा, तब तक हम यह नहीं कह सकते कि देश में स्वराज्य है।

—मोरारजी देसाई

कहते हैं अगले ज़माने में कोई "मीर" भी था

—डॉ॰ परमानन्द पांचाल

[डॉ॰ परमानन्द पांचाल भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय श्री ज्ञानी जैल सिंह के विशेष कार्य अधिकारी (भाषाएं) पद पर कार्य कर चुके हैं। आप हिंदी के सुपरिचित लेखक हैं, दक्षिणी हिंदी के विशेषज्ञ हैं और भारत सरकार की राजभाषा सेवा के निदेशक भी रहे हैं। संप्रति आप हिंदी की प्रतिष्ठित पत्रिका 'नागरी संगम' के संपादक हैं। हमारे विशेष आग्रह पर आपने उर्दू के महान कवि मीर तकी मीर के बारे में यह लेख तैयार किया है।.....संपादक]

मिर्ज़ा "ग़ालिब" का स्थान निस्सन्देह उर्दू साहित्य में बहुत ऊंचा माना जाता है, किन्तु देखा जाए तो उनसे भी ऊंचा स्थान शायद मीर तकी "मीर" का ही है। उर्दू के प्रायः सभी शीर्षस्थ कवियों ने "मीर" के काव्य की प्रशंसा ही नहीं की है, बल्कि उससे प्रेरणा भी ली है। "ग़ालिब" और "ज़ौक", नासिख, और "आतिश" तथा "सौदा" जैसे उर्दू के चोटी के कवियों और आचार्यों ने भी "मीर" को अपना उस्ताद माना था। स्वयं "ग़ालिब" ने कहा था—

"रेखता के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो "ग़ालिब"
कहते हैं अगले ज़माने में कोई 'मीर' भी था।"

लाख सर मारने पर भी बहादुरशाह जफ़र के उस्ताद "ज़ोक़" मीर के स्तर को नहीं प्राप्त कर सके—और उन्होंने स्वीकार किया—

"न हुआ प, न हुआ "मीर" का अन्दाज़ नसीब,
"ज़ोक यारों ने बहुत ज़ोर ग़ज़ल में मारा।"

"नासिख भी 'मीर' के लिए लिखते है कि जिस को मीर की कला में विश्वास नहीं वह स्वयं अज्ञानी है—

"आप बेबहरा[1] है जो मौतकिदे[2] "मीर" नहीं"

अर्थात् जो मीर पर विश्वास नहीं करते वे अनभिज्ञ हैं।

एक बहुत बड़े कवि और आचार्य मिर्ज़ारफ़ी अहमद 'सौदा' (1714-1781) का कहना है।

"सौदा तू इस ग़ज़ल को ग़ज़ल दर ग़ज़ल ही लिख,
होना है तुझ को "मीर" से उस्ताद की तरफ"

"मीर की शैली ने "जलाल" लखनवी को भी प्रभावित किया है, कहने को "जलाल" आप भी कहते हैं वही तर्ज़ लेकिन सखुन-ए-"मीर तक़ी मीर" की क्या बात?

प्रसिद्ध शायर "रिंद" को देखिए क्या कहते हैं?

"तेरा कलाम कितना मुशाबा[3] है मीर से
आशिक है "रिंद" हम तो इस बोलचाल के"

"मीर" कवि ही नहीं, कवियों के लिए एक आदर्श भी थे। उर्दू के सभी कवि, चाहे वे आरम्भिक काल के हों या वर्तमान युग के हों, मीर के काव्य से सदा कुछ न कुछ प्रेरणा लेते रहे हैं। उर्दू साहित्य में वर्तमान युग के प्रवर्तक मौ॰ अल्ताफ हुसैन "हाली"— भी उनका अनुसरण करने का लोभ संवरण नहीं कर कर पाए और कहा—

"हाली सखुन में "शैफ्ता" से मुस्तफीद[4] हैं
ग़ालिब का मौतकिद है, मुकल्लिद[5] है 'मीर' का"

'अकबर' इलाहबादी लिखते हैं:—

"मैं हूँ क्या चीज़ जो इस तर्ज़ पे जाऊं "अकबर"
'नासिख' व 'ज़ोक' भी जब चल न सके "मीर" के साथ"।

आज के प्रसिद्ध कवि "हसरत" मोहानी भी मीर से बहुत प्रभावित है, किन्तु क्या वे "मीर" जैसा दर्द अपने शेरों में ला सकते है?—

"शेर मेरे भी हैं पुर दर्द लेकिन "हसरत"
मीर का शेवाए-गुफ्तार[6] कहां से लांऊ?

'मीर' को यदि आज की शैली में श्रद्धांजलि दी जाए, तो वे निस्सन्देह अपने आप में एक संस्था थे। यह बात नहीं है कि अन्य कवियों ने ही उनकी प्रशंसा की है, उन्हें स्वयं भी अपने महत्व का अहसास था, वे कहते हैं—

"सारे आलम पे हूं छाया हुआ
मुस्तनद[7] है मेरा फर्माया हुआ।"

बताइए अपने लिए "फर्माया हुआ" कहने का साहस सिवाय 'मीर' के कौन कर सकता था? और फिर अपने फर्माए हुए को प्रामाणिक बताना सब की हिम्मत भी तो नहीं है। वे कहते है:—

रेखता रुतबे को पहुंचाया हुआ उसका है,
मौतकिद कौन नहीं मीर की उस्तादी का

यदि 'मीर' को उर्दू साहित्य के वास्तविक जन्मदाता के रूप में माना जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी। यद्यपि 'वली' को उर्दू का प्रथम कवि माना जाता है, किन्तु उनकी भाषा पर 'दक्खिनी' का पूर्ण प्रभाव है। वली, दक्खिनी (हिन्दी) के अन्तिम कवियों में थे। किन्तु मीर से पहले की "उर्दू" भाषा क्या थी? केवल—

(1) अज्ञानी (2) यकीन रखना (3) मिलता जुलता (4) लाभान्वित (5) नकल करने वाला (6) बातचीत का ढंग (7) प्रामाणिक

"एक बात लचर सी बजुबान 'दकिनी' थी"

'मीर' ने इसी भाषा को मांजा और उर्दू साहित्य में अपना स्थान अद्वितीय बना लिया। उनके काव्य की ख्याति उत्तर में ही नहीं थी, बल्कि सारे दकन में थी। उन्होंने कहा भी था—

"है धूम मेरे शेर की सारे दकन के बीच"

मीर ही एक मात्र ऐसे कवि थे, जिन्हें अपनी ख्याति के अक्षुण्ण बने रहने का पूरा भान था। क्या कोई अन्य कवि यह कहने का दावा कर सकता है:—

"जाने का नहीं शोर सखुन[8] का मेरे हरगिज़
ता हशर[9] जहाँ में, मेरा दीवान रहेगा"।

हो भी क्यों न, मीर जनता के कवि थे, जनता की संवेदना जनता की भाषा में लिखते थे। उन्होंने कहा भी है,

'शेर मेरे हैं सब खवास[10] पसन्द
पर, मुझे गुफ्तगों अवाम[11] से है"

मीर की सारी आयु मुसीबतें झेलते कटी। इन्हीं कष्टों ने मीर के काव्य को चमकदार कुन्दन बना दिया था। वे फक्कड़ और वेलोस कवि थे और निश्चिन्त रहते थे—

'होगा किसी दीवार के साये तले मीर
क्या काम मुहब्बत से उस आराम तलब को।

इन का जन्म 1722 ई० में आगरा में हुआ था। आगरे से रोज़गार की तलाश में दिल्ली आए। दिल्ली में मारे-मारे फिरते रहे। यह समय लूट पाट का था। दिल्ली उजड़ रही थी। नादिर शाह ने दिल्ली को खूब लूटा था। नौकरी नहीं मिली। दर-दर भटकते रहे। रोटी की तलाश में अपनी सब प्रतिष्ठा और सम्मान खो बैठे। एक स्थान पर अपनी इस बेबसी का उन्होंने बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है:—

"दर पर हर एक दनी[12] के समाजत[13] मेरी गई,
नालायकों से मिलते लियाकत मेरी गई।

क्या मुफ्त हाय शानों शराफ्त मेरी गई,
ऐसा फिराया नान ने ताकत मेरी गई।"

कल्पना कीजिए कि ऐसे प्रतिभावान व्यक्ति के दिल पर क्या गुजरती होगी, जिसकी कला का मूल्यांकन करने वाला कोई न हो, जिसको रोटी के टुकड़ों के लिए दर बदर ठोकरे खानी पड़ती हो।

खैर, मीर ने दिल्ली भी छोड़ दी और किसी न किसी से किराया मांग कर लखनऊ पहुंचे। जैसा यात्रियों का नियम था, एक सराय में उतरे। ज्ञात हुआ कि आज यहां एक कवि सम्मेलन (मुशायरा) है। 'मीर' भी वहां पहुंच गए। लखनऊ शहर के बांके टेढ़े, नज़ाकत-पसन्द लोग उन्हे देखकर हंसने लगे। मीर बेचारे परदेशी, ज़माने के सताए हुए, एक कोने में बैठ गए। अब शमा[14] सामने आई तो फिर सबकी दृष्टि उन पर पड़ी लोगों ने व्यंग से पूछा, आप का वतन कहां है? मीर ने तुरन्त ही यह 'कतआः' पढ़ाः—

क्या बूदो बाश पूछो हो पूरब के साकिनों,
हम को ग़रीब जान के, हंस-हंस पुकार के,

दिल्ली जो एक शहर था आलम से इन्तखाब
रहते थे मुंतखिब[15] ही जहां रोज़गार के,

"उसको फलक[16] ने लूट कर वीरान कर दिया
हम रहने वाले है उसी उजड़े दयार[17] के"

उनको लखनऊ का रहना रास न आया। वहां उनकी योग्यता का क़दरदान कौन था? वे सदा ही इस बात से दुःखी रहते थे। उनको इसकी बड़ी शिकायत भी थी। उन्होंने किस-किस अदा से कहे, किन्तु क्या कोई उन्हें समझा?

"किस-किस अदा से रेख्ते मैंने कहे, वले;
समझा न कोई मेरी जुबां इस दयार में।
या रब शहर अपना यहां छुड़ाया तूने,

वीराने में मुझ को ला बिठाया तूने
मैं, और कहां यह लखनऊ की "खलकत"[18]?

ऐ, वाए क्या किया खुदाया तूने"

ज़रा गौर कीजिए "लखनऊ की खल्कत शब्दों" पर, वहां के असंस्कृत लोगों पर, कितना करारा व्यंग्य है।

मीर की नाजुक मिजाज़ी को देखकर लोग उन्हें बद-दिमाग (अभद्र) की संज्ञा देने लगे थे। स्वयं मीर को भी इस बात का बोध था। उसने कहा भी था—

हालत यह है कि मुझ को ग़मों से नहीं फ़राग़[19]
दिल सोजिशे-दुरूनी से जलता है ज्यूंचिराग
सीना तमाम चाक है, सारा जिगर है दाग
है मजलिसों में नाम मेरा 'मीरे बेदिमाग़'
अज़ बसके कम दिमागी ने पाया है इश्तहार

करूणा के सम्राट मीर का एक बहुत ही मार्मिक शेर है जिसमें वह कहता है कि मैं अब अपना लालच का हाथ किसके आगे फैलाऊं। वह तो सराहने रखे-रखे सो गया है। देखिए—

आगे किस के क्या करें दस्ते तमा[20] दराज़
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे।

आखिर, वे इस क्षण भंगुर संसार से इस प्रकार बिदा हो गए, मानो यह कह रहे हों—

अब तो जाते हैं मैंकदे[21] से "मीर"
फिर मिलेंगे अगर खुदा लाया।
किन्तु वे फिर कभी न मिल पाए और

उनका यह नश्वर शरीर लखनऊ की ही खाक में मिल गया। आज उनकी कब्र से चिह्न मिट चुके हैं। उन्हें इसका कुछ पूर्व एहसास भी था। उन्होंने कहा था,

---

(8) काव्य (9) प्रलय (10) खास लोग (11) आम लोग
(12) पाजी, कमीना (13) विनती (14) मोमबत्ती
(15) चुने हुए (16) आकाश (17) देश (18) भीड़, जनता
19[19] छुटकारा [20] लालच

मत तुरबते[22] "मीर" को मिटाओ,
रहने दो ग़रीब का निशान तो।

मीर के काव्य में भारतीय तत्व

मीर के काव्य में दर्द है, यथार्थ है, हृदय की पुकार है, उसका काव्य जनता के बीच रहकर जनता के लिए लिखा गया था। किसी बादशाह व नवाब के संरक्षण में नहीं। मीर जिस भूमि पर पल कर जवान हुए थे, उसी भूमि को उन्होंने अपने काव्य का क्षेत्र बनाया, वहीं के लोगों के दुःख-दर्द में सम्मिलित हुए और अपने दुखःदर्द को वाणी दी। यही कारण है कि उनके काव्य में भारतीय तत्व विद्यमान हैं।

मीर की शायरी का आरम्भ उस समय हुआ जब कि उर्दू घुटनों चल रही थी। साहित्य में नए-नए प्रयोग किए जा रहे थे और हिंदुई (हिन्दी) तथा 'दक्खनी' भाषा से भारतीय तत्वों को निकालकर, उस नई उर्दू का निर्माण किया जा रहा था, जो अपनी मूल भाषा से बहुत दूर जा रही थी। "हजरत बू अली क्लंदर", "अमीर खसरो, जासयी, रहीम, खान खाना, कुली कुतुबशाह, मुल्लावजही, इब्राहीम आदिलशाह, जैसे साहित्यिकों द्वारा अपनाए गए मार्ग से वह दूर हटती जा रही थी। ख्वाजा अहमद "फारूकी" के शब्दों में".....मीर ने भाषा को संवारने के शोक में "नासिख" की तरह हिंदुस्तानियत से बिलकुल संबंध विच्छेद नहीं किया" "....उनके काव्य को यदि ध्यान से देखा जाए तो ज्ञात होगा कि उसने हिन्दी शब्द, हिन्दी उपमाओं तथा उत्प्रेक्षाओं को बनाए रखा है।" यों तो ग़ालिब, नासिख, ज़ौक, सौदा और यहां तक कि इक़बाल और जिगर के काव्य में भी भारतीय तत्वों का समावेश, किन्तु उर्दू के अधिकांश कवियों की प्रवृत्ति भारत भूमि पर पैर रखे हुए, अरब और ईरान की हवा में सांस लेने की रही है। यह बात सभी कवियों के लिए सत्य नहीं है। "नज़ीर अकबरबादी" जैसे कवियों ने उस दौर में भी इस प्रवृत्ति के विरुद्ध आवाज़ उठाई थी। मीर के काव्य में भी हमें भारतीयता के दर्शन होते हैं। उन्होंने भी "नज़ीर" की ही भांति होली, मेले तथा भारतीय त्यौहारों के विषय में लिखा है। हिन्दी के प्रचलित शब्दों का धड़ल्ले से प्रयोग किया है।

"मीर" की काव्य-रचना लगभग हो हज़ार विस्तृत पृष्ठों पर फैली हुई है। "मीर" के दस प्रतिशत ऐसे शेर होंगे, जिनकी भाषा आज कुछ बदल गयी है। "मीर" ने लगभग सात हज़ार ऐसे शेर छोड़े हैं, जो कहे तो गये थे अब से पौने दो सौ वर्ष पहले, लेकिन प्रतीत होता है कि अभी-अभी कहे गये हैं। जहां त्यक्त शैली का "मीर" ने प्रयोग किया है, वहां तो उन्होंने जादू ही कर दिया है। जैसे, इस शेर में———

वह सूरतें इलाही किस देस बस्तियां हैं
अब जिनके देखने को आंखें तरसतियां हैं।

फ़िराख गोरख पुरी ने कहा है कि "मीर" के उत्तम शेर जादू का असर रखते हैं। ऐसी रचनाओं में उनका स्वर जीवन का स्वर बन जाता है। इन रचनाओं में जैसी घुलावट है, जैसी चुमकार है, जो करूणा है, जो मानवता है, विनम्रता है, जो स्वाभाविकता है, और जो हृदय विदीर्ण करने वाली मृदुलता और तीव्रता का संगम है, उसका उदाहरण कहीं और नहीं मिलता। "मीर" की ये रचनाएं "सूर" और "रसखान" की याद दिलाती हैं। हम भारतीय संस्कृति का विश्वविद्यालय "मीर" की इन रचनाओं को कह सकते हैं। ऐसी रचनाओं का हर शेर उर्दू शायरी की निधि का बहुमूल्य रत्न है। देखिए———

इधर से अब्र उठकर जो गया है,
हमारी खाक पर भी रो गया है।
* * *
सिरहाने "मीर" के आहिस्ता बोलो
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।"

"मीर" ने अपने काव्य में रावण, राम, लंका, उजड़े नगर के दिए, हिंदुस्तान की बरसात, पपीहे, दीवाली, होली आदि का उल्लेख किया है देखिए:—

"आतिश[23] इश्क ने रावण को जला के मारा,
गरचे[24] लंका सा था इस देव का घर पानी में।"
* * * *
"अजब नहीं है न जाने जो मीर चाह की रीत,
सुना नहीं है मगर यह कि जोगी किसे मीत।"

इसके कुछ अन्य उदाहरण भी देखिए----

"कुछ ठौर भी थी इसकी, कुछ इसका ठिकाना भी था।"
* * * *
"इस समय में देखने हम को बहुत आया करो"
* * * *
"सुबहे पीरी शाम होने आई मीर,
तू न चेता यां बहुत दिन कम रहा।"
* * * *
"चितवन के कब ढब थे ऐसे"

"मुखड़े से किसके तूने ऐ मीर दिल लगाया"

मीर, भारतीय सम्मानसूचक शब्द "जी" लिखने का लोभ भी संवरण नहीं कर सके:—

" मीर जी" इस तरह से आते हैं,
जैसे कुंजर कहीं को जाते हैं।"

"लाए थे जाकर अभी तो इस गली में से पुकार,
चुपके-चुपके मीर जी, तुम उठके अब किधर चले?"

डॉ० फ़ारुकी के शब्दों में "मीर का कलाम फ़ारसी की कार्बन कापी नहीं है, उसने जो लिखा है अपने आसपास के वातावरण, रहन-सहन और विचारों से प्रभावित होकर लिखा है। अपनी आपबीती का वे किस प्रकार चित्रण करते हैं:—

"तब थे सिपाही, अब हैं जोगी, आह जवानी यों काटी,
ऐसी थोड़ी रात में हमने क्या-क्या स्वांग बनाए हैं।"

—दिल के लुट जाने को उसने नगर के लुट जाने से उपमा दी है———

शेष पृष्ठ 31 पर

[21] मदिरालय, [22] कब्र

[23] प्रेम की अग्नि, [24] यद्यपि

बूदें रचतीं जल-कथा

—देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'

लम्हा-लम्हा ज़िंदगी, कतरा-कतरा प्यास
मिले ख्वाब में भी हमें, टूटे हुए गिलास 1.

छाँव छरहरी नीम की, बिछी खरहरी खाट
भरी दुपहरी जेठ की, गहरी नींद निचाट 2.

मेघ बरसता सिंधु पर, मरु की बुझी न प्यास
ये अनहोनी देख कर, पर्वत हुआ उदास 3.

देख-देख हैरान हूं, शतदल की तक़दीर
गंगाजल तज, पी रहा, क्यों पोखर का नीर 4.

खुली समय की मुट्ठियाँ, झरा उम्र का रेत
दुख के ध्यान उगा रहे, आँसू डूबे खेत 5.

हाथ उठा कर शून्य में, करता-सा कुछ ध्यान
भोले मुख पर शिशु लिये, ऋषियों-सी मुस्कान 6.

गाँव छोड़ वह शहर में, आयी पति के पास
गरल उपेक्षा का पिये, झेल रही सौ त्रास 7.

काँटों पर चलते हुए, ये मखमल के पाँव
ले आये बरसात को, अंगारों के गाँव 8.

क्षण आये यात्रान्त के, जैसे-जैसे पास
वह पथ के हर मोड़ पर, रहने लगा उदास 9.

जुगनू जिनसे खेलते, कर मुट्ठी में बन्द
बदरीली इस शाम ने, बुने मूँगिया छन्द 10.

पंख लगा कर मोम के, लपटों का आकाश
नाप न पाये तुम अगर, तो क्यों हुए हताश 11.

मेरी बौनी अस्मिता, ओ विस्तृत आकाश
तुम्हें बाँधने के लिए, खोल रही भुज-पाश 12.

देखा जब हमने तुम्हें, पहली-पहली बार
तब से सपनों में खिले, लाल-लाल कचनार 13.

मैंने उसको प्यार के, शब्द लिखे क्या चार
उसने मेरे पत्र को, बना दिया अखबार 14.

पत्थर में जिसने दिया, इतना हुनर तराश
कल उसकी ही दार पर लटकी पायी लाश 15.

बैठे हुए कपोत दो, डाल चोंच-में-चोंच
बधिक! न तेरी दृष्टि की, नोंचे इन्हें खरोंच 16.

जब-जब जुगनू बाँचते, कुहरे की तहरीर
रहे बेधते रौशनी, अन्धकार के तीर 17.

नदी किनारे पर बसा, मेरा कच्चा गाँव
जिसको जीभर रोंदते रहे बाढ़ के पाँव 18.

अन्धकार में दूर तक, जाती है आवाज़
सुन न सका कोई मगर, खामोशी का साज 19.

लहर थपेड़े मारती, आँख तरेरे ज्वार
नाव डूब जाये भले, तिनका होगा पार 20.

रात कहीं पर देर तक, बरसा झर-झर मेह
कम्पित हुई पलाश की, पँखुरी-पँखुरी देह 21.

बीत गये वे गीत-क्षण, समय हुआ विपरीत
साने-बाँसुरी छेड़ती, लोहे का संगीत 22.

ओ मेरे आकाश के अस्तंगत नक्षत्र
भेज रहा हूं मैं तुम्हें, अब यह अंतिम पत्र 23.

अश्रु-धूम-युव दो नयन, भरा पसीना माथ
आटे में उसके सने, याद आ रहे हाथ 24.

हो न जाय हम से कहीं, कोई भोली भूल
आँचल में तुमने भरे, हरसिंगार के फूल 25.

पुरवा के अब खनकते, पायल, बाजूबन्द
अगिन-बाँसुरी पर खिले, हिम के सौ-सौ छन्द 26.

बँधी रही उस गरुड़ के, पाँवों में शहतीर
उड़ने की हर पंख में, होती नहीं लकीर 27.

कौन दिशा जलधर गये, नभ से नाता तोड़
प्यासी धरती के अधर, अंतिम बूँद निचोड़ 28.

मैं ने तो माँगी बुझे-नक्षत्रों की धूल
तुम ने साँसों में भरे, इन्द्र धनुष के फूल 29.

बाढ़ और बरसात ने, ऐसा किया घिराव
सड़कें नदियाँ हो गयीं, पाँव बन गये नाव 30.

राजाजी के शहर में पीने मिला न नीर
बहा डूबने के लिए पथ पर जलधि गँभीर 31.

घुटनों-घुटनों तक घिरा, जल-ही-जल सब ओर
दूर-दूर तक भूमि का, मिलता ओर-न-छोर 32.

यों छत पर हो कर खड़ी, मत तू केश बिखेर
कहीं शाम से पूर्व ही, हो न जाय अन्धेर 33.

जल में रूप निहारती, गोरी यों शरमाय
रीते कंचन-कलश को, झुके, भरे, ढलकाय 34.

हाथ उठा कर टेरतीं, लहरें, रोक न, तीर
नापूँगा मैं जलधि को, है कितना गम्भीर 35.

बूँदें रचतीं जल-कथा, पत्तों पर मासूम
हरसिंगार की टहनियाँ, रहीं हवा में झूम 36.

शेष पृष्ठ 31 पर

"भइया बटोरिया रे".....

— मधुकर सिंह

गांव-डगर लांघता बटोही पहुंच जाता है जंगल के उस सन्नाटे की ओर, जिस ओर से कोई विराहिजीर स्वर लहरी उसके मानस को झकझोरती है। बटोही उस ओर बढ़ने लगता है, जहां छिहुली वृक्ष के नीचे विरहविदग्ध हिरनी अश्रुपूरित जैसे उसी के बार में खड़ी है। उसे देखते ही हिरनी बिफर पड़ती है;

"बरिस महिनवाके निशि अधिरतिया से
दिन पर दिन पियराला के बटोहिया
हमरो अभागिन के फूटन करमवां रे
सहि नाही जाता ई कलेश रे बटोहिया

पइती कटरिया आपन जिया हातितो से

मेटि सइते बार हो वियोग रे बटोहिया....,
(माह पर माह, वर्ष पर वर्ष व्यतीत होते चेले गए हैं,
दिन पर दिन पियराती चली जा रही हूं ए बटोही।
मुझ अभागिन के भाग्य ही फूटे हैं। अब मुझसे और अधिक
कलेश नहीं सहा जा रहा है। कटार पाती तो स्वयं को ही
पूछ लेती, जिससे जिन्दगी भर के लिए वियोग मिट जाता।
हैरान है बटोही। आखिर माजरा क्या है। कैसा वियोग।...

कैसा कलेश...उसे तो वरदान प्राप्त है कि सृष्टि के प्राणियों से जुड़े हुए हर भेद की उसे जानकारी रहेगी। परन्तु यह कैसी विडम्बना है कि हिरनी के क्लेश से वह अभी तक अनभिज्ञ है। यही सोचता हुआ बनवासियों के गांव पहुंचता है तो नारियों के समूह से यह सोहर उसे स्पष्ट सुनाई पड़ते हैं:—

"छापक पेड़ छिहुलिया कि पतवन गहवर हो।
ए ललना, ताहि तर बाढ़ हिरनिया
कि मन अति बेदिल हो .....
चरत-चरत हिरना, हिरनी से पूछेला हो
क्या तोरा चरहा चुराग
कि पानी बिना मुरझाई हो
नाही मोर चरहा चुराग, ना पानी बिनु मुरझई हो,
ए हिरना, काल्हि हुई राजा के छठिया
तोहे मारि उरिहन हो...."

छिहुली वृक्ष के छतनार पांव में विफरती हिरनी व्याप जाती है बटोही के मन-मस्तिष्क में। वह बड़ी मनबेदिल और उदास है। कही से चरता हुआ आकर हिरन उससे पूछता है, ए हिरनी। क्या तुम्हें कही चारागाह नहीं मिला कि भूख प्यास लगी है जो चेहरा मुर्झाया हुआ है। हिरनी कहती है, नहीं कही चारागाह की कमी है, भूख पानी के बिना मन मुर्झाया है। कल राजा दशरथ के घर छठी है। उसमें तुम भोज के लिए मारे जाओगे.....।

सोहर की एक-एक पंक्ति बटोही को बेधती है। हिरनी की आंखों से जो आंसुओं की धार फूटती है, उसी छोर को पकड़कर बटोही उद्विगन चला जा रहा है, नहीं नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए.... एक अबोध जीव पर इतना भारी जुल्म। राम की छठी का उत्सव राजा दशरथ मासूम हिरनी का बलि देकर नहीं मना सकते। कौशल्या रानी तो तो कोमल हृदय की नारी है। हिरनी उनके सामने कराहेगी तो वह ऐसा नहीं होने देंगी। लेकिन इस सोहर गीत में है कि राजा के फरमान को कोई नहीं बदलवा सकता। हिरना भोज के लिए मारा ही जायेगा। हिरनी गुहारा लेकर महल में कौशल्या रानी के पास जाती है। सोहर में आगे की बात इस प्रकार है—

"मचिया कौशल्या रानी,
हिरनी अरज करे हो,
ए रानी, मसुआ न सीझिहें रसोइया,
सलड़िया हमका दैहि हेहू हो
पेड़वा च टंगनी खलड़िया,
न हेरि पैरि देखतीं नू हों
ए रानी देखि-देखि जिअरा जुड़इवी,
मनवा हिरना जौअत हो...."

हिरनी महल में मचिमा पर बैठी कौशल्या रानी से अरज करती है कि हे रानी, टीक है आप हिरना के मांस का रसोई बनाइए, लेकिन उसकी खलड़ी (चमड़ी) मुझे दे दीजिए। वृक्ष पर खलड़िया टांग दूंगी। जंगल में उसे घूम-घूम कर फिर निहारती रहूंगी, और अपनी छाती जुड़ाती रहूंगी। इसी निशानी के सहारे अपनी जिन्दगी काट लूंगी।

बटोही समझता है, कौशल्या रानी की माया फटेगी और उसकी शक्ल अरज-गरज मान लेंगी। परन्तु झटका लगता है बटोही को जब वे कहती हैं,

"जादू हिरनी, जादू घर आपन,
खलड़िया नाहीं देबई हो
ए हिरनी खलड़ी से खजड़ी बनइवो
रामजी मोर खेलिहन हो"

जा ए हिरनी, तू अपने घर जा। खलड़िया तुम्हे नहीं दूंगी। मै तो खलड़ी की खजड़ी मढ़वाऊंगी। इसी खजड़ी को बजाबजाकर रामजी खेलेंगे।

हिरनी लौटकर जंगल में आ जाती है। राम जब-जब खलड़ी की खंजड़ी बजाते हैं तब-तब आवाज जंगल में पहुंच कर हाहाकार मचा देती है और दिया की याद हिरनी को टीसती रहती है।

जब-जब बाजई संजड़िया,
शब्दद सुनि अनकही हो,

राजभाषा भारती

एक ललना, छिहुलो तरदाड़ हिरिनवा,
हिरना को विसुरेली हो....."

बटोही घर-घर में बैचैनी से पूछता रहता है, यह सोहर कब से गाती हो। घर-घर कर औरतें बताती हैं, सदियों से पहले से तब क्या राजा रानी का संस्कार कभी नहीं बदलता। इन्हें दया-माया नहीं आती। बस, हिरनी एक ही बात पूछती है बटोही से,

"भैया बटोहिया रे, केहि मोर हरिहें कलेश".....

पृष्ठ 28 का शेष

"उसके गए पै दिल की खराबी न पूछिए,
जैसे किसी का नगर हो लुटा हुआ।"

* * * *

"दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके,
पछताओगे, सुनो हो यह बस्ती उजाड़ के।"

प्रेम' भी तो दो ही अक्षरों से बना है, किन्तु उसका विस्तार तो देखो:

अंछर है तो इश्क के दो ही,
लेकिन है विस्तार बहुत।

इसके अतिरिक्त मीर ने जोग, तजना, संसार, दोष, पर्वत, विश्राम, सुमरण, भस्म, अचरज, अहंकार, सांझ, समय, निदान, अंधाधुंध, शमकहानी, चोट्टे, स्वभाव, पाख (पक्ष), अंगदान, अनमना। अनूठा, पवन, तनिक, ठौर, जतन, रिझवार, चाव, रोम-रोम, सराहना, सखी, सन्मुख, सूर (शूर), काका, कपि, गांती, गढ़ बंधन, गढ़ी, लोथ, निपट, निबल, निदान, निरास, उलोचना, विचलना, उलझाव, बास आदि हज़ारों शब्दों का प्रयोग किया है।

मीर ने अपने को धार्मिक संकीर्णता से ऊपर उठा लिया था। उसने सब ओर दृष्टि डाल कर देखा था, किन्तु कुछ नहीं पाया। उसने जाना कि संसार तो नश्वर है:

"सैर की हमने हर कहीं प्यारे,
फिर जो देखा तो कुछ नहीं प्यारे।"

अपने धर्म, कारोबार आदि के विषय में पूछने वाले को वे बस यही कहते:—

"मजहब से मेरे क्या तुझे, मेरा दयार और।"
मैं और, यार और, मेरा कारोबार और।"

"दैर" और "काबे" में उसे कोई अंतर नहीं दिखाई देता,

किस को कहते हैं नहीं मैं जानता इस्लामों व कुफर,
"दैर" हो या "काबा" मतलब मुझको तेरे दर से है।

मीर के संसार को स्याह व सफेद से कुछ, सरोकार नहीं है। वे तो सुबह से शाम और शाम से सुबह पूरा करते हैं:

"यां के सफ़ेदोस्याह में हम को दखल जो है सो इतना है,
रात को रो-रो सुबह किया, और दिन को ज्यों-त्यों शाम कियां"

मीर की यह महत्ता, स्वयं मीर को भी प्रकट हो चुकी थी। वह स्थायी साहित्य की विशेषताओं से परिचित थे। अपने काव्य में इन्ही विशेषताओं के कारण उन्होंने कह भी दिया था——

"पढ़ते फिरेंगे गलियों में, इन रेख्तों को लोग,
मद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियाँ।"

"मीर" के ही शब्दों में हम तो बस मीर के लिए इतना कर सकते हैं:—

"मत सहल हमें जानों, फिरता है फलक बरसों
तब खाक के परदे से इंसान निकलते हैं।"

पृष्ठ 29 का शेष

मेघों से छन कर बहे, शीतल मन्द समीर
छेड़े तन, मन, प्राण को, चुभते सौ-सौ तीर 37.

सूरज फिर यों उग रहा, प्रात, नदी के तीर
लहर-लहर से जूझती, लपटों की शहतीर 38.

अस्ताचल से फिसलता, शाम ढले का सूर्य
लगता मरकत-शैल पर, पिघल रहा वैदूर्य 39.

ये कदम्ब की छाँव में, छेड़े वंशी कौन
जिसके स्वर से सिहरता, मोरपंखिया मौन 40.

संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास—3

रामायण, महाभारत एवं पुराण साहित्य

—डा॰ शशि तिवारी

वैदिक वाङ्मय के अनन्तर संस्कृत में प्रणीत साहित्य को सामान्य रूप से लौकिक साहित्य कहा जाता है। लौकिक साहित्य का प्रथम ग्रन्थ श्री वाल्मीकिकृत रामायण है। रामायण और महाभारत का लौकिक संस्कृत साहित्य पर व्यापक प्रभाव रहा है इसलिए इनको "उपजीव्य काव्य" कहते हैं। इन दोनों से ही समस्त भारतीय साहित्य की परम्परा का प्रारम्भ माना जाता है।

अथर्ववेद में चारों वेदों के नामोल्लेख के बाद इतिहास, पुराण, गाथा और नाराशंसी का उल्लेख हुआ है (अथर्व॰ 15/6-8, 11)। प्रतीत होता है कि वैदिक तत्वों को सुबोध और सुरूचिपूर्ण बनाने के लिए कुछ कथाएं आविष्कृत की गई। महाभारत में कहा गया है कि इतिहास और पुराण से वेदार्थ का स्पष्टीकरण एवं व्याख्यान किया जाना चाहिए—

"इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।

यद्यपि अथर्ववेद में इन चारों शब्दों का प्रयोग पारिभाषिक अर्थ में हुआ है, तथापि इनको ही बाद में कुछ भिन्न अभिप्राय में ग्रहण किया गया है। रामायण और महाभारत को "इतिहास-पुराण" (एपिक्स) माना गया और "पुराण" नाम से प्रचलित अनेक पुराण-ग्रन्थों को "पुराण साहित्य" के अन्तर्गत रखा गया। वैदिक काल में संहिताओं के अतिरिक्त ऐसे कई आख्यानों के संग्रह थे, जिनमें देवताओं, राक्षसों, नागों, ऋषियों और राजाओं की कथाएं संकलित थीं। इनका संग्रह काल-क्रम से बढ़ता ही गया। ये कथाएं गद्य और पद्य दोनों में थीं। ये रामायण, महाभारत, पुराण और जातक कथाओं आदि में मिलती हैं। कह सकते हैं कि रामायण और महाभारत जब लिपिबद्ध हुए, उससे बहुत पहले से लोग रामचरित और कौरव-पाण्डव-युद्ध आदि को गाते रहे होंगे। इन स्तुतियों और गीतों के प्रचारक "सूत" कहलाते थे। इन सूतों के अतिरिक्त एक ऐसा वर्ग भी था जो इन स्तुतियों को यादकर जगह-जगह पर जाकर लोगों को सुनाता था, इनको "कुशीलव" कहते थे। इन्हीं सूतों और कुशीलवों द्वारा गायी जाने वाली स्तुतियों का संग्रह करके किसी महान् कवि ने "रामायण" और "महाभारत" का रूप दिया। इन आर्ष उपजीव्य काव्यों की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में इस प्रकार की धारणा प्रचलित अवश्य है, और इस संबंध में प्रमाण भी मिलते हैं कि रामायण और महाभारत की कथाएं कई शताब्दियों तक समाज में प्रचारित रहने के बाद ही लिपिबद्ध ग्रन्थों के रूप में आई हैं, तथापि पारम्परिक मत में इनके रचयिता श्री वाल्मीकि और श्री वेदव्यास माने जाते हैं। पुराणों के संकलन कर्ता भी "व्यास" कहे जाते हैं।

1. रामायण

रामायण को संस्कृत साहित्य का आदि महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। यह आदिकवि महर्षि वाल्मीकि की वह अमर कृति है, जिसने भारतीय धर्म, संस्कृति, चिन्तन और समाज को प्रारम्भ से ही प्रभावित किया है। रामायण से पूर्व लौकिक छन्द का अवतार ही नहीं हुआ था। तमसा नदी के तट पर व्याध के बाण से बिधे हुए क्रौञ्च के लिए विलाप करने वाली क्रौञ्ची का करुण शब्द जब ऋषि वाल्मीकि ने सुना तो उनके मुख से अकस्मात् एक श्लोक निकल पड़ा—

"या निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाखतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

महर्षि की करुणामयी बाणी सुनकर ब्रह्मा स्वयं उपस्थित हुए और उन्होंने ऋषि को रामचरित लिखने की प्रेरणा दी। इसीलिए इस श्लोक को प्रथम लौकिक छन्द माना जाता है और कहा जाता है कि महर्षि का शोक ही "श्लोक" में बदल गया।

रामायण में मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र का जीवनचरित काव्यात्मक शैली में वर्णित है। इसमें सात काण्ड हैं-बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड और उत्तरकाण्ड। इसमें लगभग 28 हजार श्लोक हैं, इसीलिए
इसको 'चतुर्विंशति साहस्री संहिता' भी कहते हैं। यह मुख्य रूप से अनुष्टुप श्लोकों में है। रामायण की कथा इतनी प्रसिद्ध है कि उसका वर्णन यहां अनावश्यक है। रामायण के बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड को कुछ विद्वान् सम्पूर्णतः या अंशतः बाद का या प्रक्षिप्त मानते हैं। यहां घटनाक्रम अनेक ब्राह्मणग्रन्थों में वर्णित पौराणिक एवं दन्तकथाओं के समावेश से अवरुद्ध सा हो जाता है। जैसे प्रथम काण्ड में ऋष्यश्रृंग, वशिष्ठ, विश्वामित्र, मेनका, रम्भा, वामनावतार और समुद्रमन्थन आदि की कथाएं हैं। इसी प्रकार उत्तरकाण्ड में हमें वे कथाएं मिलती हैं जो महाभारत और पुराणों में विद्यमान हैं।

रामायण के मुख्यतया तीन संस्करण हैं:—जिनका प्रसार भारत के भिन्न-भिन्न भागों में है—दक्षिणात्य, बंगीय और पश्चिमोत्तरीय। ये संस्करण पाठ, क्रम और उद्धरण आदि में अन्तर से सम्पन्न हैं। रामायण में पाठ-भेद आदि का प्रधान कारण यही है कि यह प्रारम्भ में अपने लिखित रूप में नहीं थी। स्तुतिपाठक अपनी सुविधा से सुनाते समय कतिपय परिवर्तन

करते रहे होंगे। लोकप्रियता के कारण रामायण में प्रक्षिप्त भी जुड़ते रहे होंगे। अन्ततः लेखबद्ध होने पर ही रामायण का नियत रूप निर्धारित हो सका। इस प्रकार रामायण के दो रूपों को सामने रहना होगा—एक तो मौलिक रामायण जो वाल्मीकि की प्रक्षेपरहित प्रमाणित रचना है और दूसरी वर्तमान प्रचलित रामायण, जिसमें अनेक प्रक्षिप्त अंश हैं। रामायण के रचनाकाल का विचार इन दोनों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। अधिकांश विद्वानों के विचार में प्रचलित रामायण का रूप द्वितीय शताब्दी ईस्वी के बाद का नहीं है। मूल रामायण की रचना के विषय में उल्लेखनीय है कि उसमें बौद्ध धर्म का संकेत नहीं है: कोसल की राजधानी अयोध्या है, न कि साकेत और राम को अवतार नहीं माना गया है, अतः उसकी रचना बुद्ध से पूर्व अर्थात् पांचवी शताब्दी ईस्वी पूर्व में हो चुकी थी। रामायण का अधिकांश सामाजिक चित्रण पांचवी शताब्दी ईस्वी पूर्व का प्रतीत होता है। अनेक विद्वान् प्रमाणों के आधार पर इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि मूल रामायण 500-600 ई॰ पूर्व के बाद की रचना नहीं है।

रामायण में महाकाव्य के सभी लक्षण पाए जाते हैं—विषय की उदात्तता, घटनाओं की विचित्रता और भाषा की सौष्ठवता। इसमें भाव और भाषा के प्रायः सभी गुण चरमोत्कर्ष पर हैं। भाषा सरल, ललित, प्रांजल और परिष्कृत है, जो शैली वैदर्भी है। इसमें करुण, श्रृंगार और वीर रस की प्रधानता है, यद्यपि यथास्थान सभी रसों का परिपाक हुआ है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास कवि के प्रिय अलंकार हैं। वाल्मीकि बाह्यप्रकृति और अन्तः प्रकृति के वर्णन में परम निपुण और समर्थ हैं। इसके प्रकृति वर्णन अनुपम हैं—नदी, सरोवर, नगर, सेना, युद्ध, चन्द्रोदय, ऋतु, वाटिका आदि के विविध वर्ग कवि की वर्णनकुशलता के प्रमाण हैं। रामायण के अनेक श्लोक या श्लोकांश सुभाषित के रूप में सुप्रसिद्ध और लोकप्रिय हैं। रामायण नैतिक आदर्शों, उदात्त भावनाओं और श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों का आकर ग्रन्थरत्न हैं। इसमें तत्कालीन भारतीय जनजीवन के सभी पक्षों पर प्रकाश डालने वाली सामग्री मिलती है। रामायण का सर्वाधिक महत्व संस्कृति की दृष्टि से है। यही कारण है कि इसके आधार पर भारतीय साहित्य में अनेक काव्यों, पाटकों, चम्पूओं और रामायणों की रचनाएं हुई हैं। रामायण के कथानक ने भारतीय संगीत और कलाओं को भी प्रभावित किया है। आज भारत से बाहर के देशों में भी वाल्मीकि रामायण का प्रचार एवं प्रसार दिखाई देता है।

2. महाभारत

लौकिक संस्कृति साहित्य में रामायण के पश्चात् महाभारत का स्थान है। विश्व के संपूर्ण साहित्य में महाभारत सर्वाधिक पृथुल रचना है। यह वह राष्ट्रीय विश्वकोष है, जिसे एक साथ महाकाव्य, इतिहास और धर्मग्रन्थ होने का गौरव प्राप्त है। तत्कालीन भारतीय समाज, धर्म, संस्कृति, राजनीति और दर्शन से सम्बद्ध व्यापक सामग्री इसमें उपलब्ध होती है। इसके कुछ पर्व या अध्याय इतने महत्वपूर्ण हैं कि उनको भारतीय समाज की 'आचार-संहिता' माना जा सकता है। श्रीमद्भगवदगीता नामक प्रस्थानत्रयी का एक प्रसिद्ध व श्रेष्ठ ग्रन्थ महाभारत का ही अंश है। महाभारत ज्ञान के स्तर पर वेद और लोक का अभूतपूर्व समन्वय प्रस्तुत करता है इसीलिए इसको 'पंचम वेद' भी कहते हैं। महाभारतकार की यह आकांक्षा रही है कि उस समय का कोई भी उल्लेखनीय विषय इसमें छूट न जाए। इसीलिए कहा गया है—

'धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र चन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।'

—(आदि पर्व 62/53)

महाभारत भी रामायण के समान उपजीव्य काव्य है। महाभारत के आख्यानों का आश्रय लेकर कालान्तर के कवियों ने अनेक काव्य, नाटक, कथा, गद्यकाव्य आदि की रचना की है।

महाभारत के रचियता परम्परा से व्यास मुनि ('वेदव्यास या कृष्ण द्वैपायन') माने जाते हैं। ये शरीर का वर्ण काला होने के कारण 'कृष्ण' और द्वीप में उत्पन्न होने के कारण 'द्वैयायन' कहलाए हैं। सम्पूर्ण वेदमंत्रसमूह को उन्होंने यज्ञ में उपयोग की दृष्टि से चार संहिताओं में विभक्त किया था, इसलिए वे 'व्यास' कहलाए हैं। भारतीय विश्वास के अनुसार व्यास कौरव-पाण्डवों के समकालीन ही नहीं थे अपितु सत्यवती के पुत्र और धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर के नियुक्त जन्मदाता भी थे। महाभारत से ज्ञात होता है कि व्यास कौरवों और पाण्डवों के जीवन की सभी प्रमुख घटनाओं से साक्षात् परिचित रहे। महाभारत। (आदि 56/32) के अनुसार तीन वर्षों के अथक और सतत परिश्रम के पश्चात् व्यास ने महाभारत ग्रन्थ की रचना की थी। वर्तमान महाभारत में एक लाख श्लोक प्राप्त होते हैं। इसीलिए इसको 'शतसाहस्री संहिता' कहते हैं। यह अठारह पर्वों में विभाजित हैं जिसकी प्रमुख घटना कौरव-पाण्डव-इतिहास और महाभारत-युद्ध है। इन अठारह पर्वों के नाम क्रमशः है—आदिपर्व, सभापर्व, वनपर्व, विराट्पर्व, उद्योगपर्व, भीष्मपर्व, द्रोणपर्व, कर्णपर्व, शल्यपर्व, सौप्ति पर्व, स्त्रीपर्व, शान्तिपर्व, अनुशासन पर्व, आश्वमेधिक पर्व, महाप्रस्थानिक पर्व, स्वर्गारोहण पर्व। महाभारत का पर्वानुसार मुख्य कथानक इस प्रकार है—

(1) आदिपर्व— चंद्रवंश का इतिहास, कोरव-पाण्डवों की उत्पत्ति।
(2) सभापर्व— द्यूक्रीड़ा।
(3) वनपर्व— पाण्डवों का बनवास।
(4) विराटपर्व— पाण्डवों का अज्ञातवास।
(5) उद्योगपर्व— श्रीकृष्ण द्वारा सन्धि का प्रयत्न।
(6) भीष्मपर्व— अर्जुन को गीतां का उपदेश, युद्ध-प्रारम्भ, भीष्म का आहत होकर शय्या पर गिरना।
(7) द्रोणपर्व— अभिमन्यु और द्रोण का वध।
(8) कर्णपर्व— कर्ण का युद्ध और वध।
(9) शल्यपर्व— शल्य का युद्ध और वध।
(10) सौप्तिक पर्व— सोते पाण्डव-पुत्रों का अश्वत्थामा द्वारा वध।
(11) स्त्रीपर्व— शोकाकुल स्त्रियों का विलाप।
(12) शान्तिपर्व— युधिष्ठिर के राजधर्म और मोक्ष संबंधी सैकड़ों प्रश्नों का भीष्म द्वारा उत्तर।
(13) अनुशासन पर्व— धर्म और नीति की कथाएं, भीष्म का स्वर्गारोहण।

(14) आश्वमेधिक पर्व— युधिष्ठिर का अश्वमेघ अनुष्ठान।

(15) आश्रमवासिक पर्व— घृतराष्ट्र आदि का वानप्रस्थ-आश्रम में प्रवेश।

(16) मौसलपर्व— यादवों का पारस्परिक संघर्ष और नाश।

(17) महाप्रस्थानिक पर्व— पाण्डवों की हिमालय यात्रा।

(18) स्वर्गारोहण पर्व— पाण्डवों का स्वर्गारोहण।

महाभारत के आज चार संस्करण प्राप्त होते हैं—कलकत्ता संस्करण, बम्बई संस्करण, मद्रास संस्करण और पूना संस्करण। इनमें पूना-संस्करण सर्वाधिक प्रमाणिक माना जाता है।

महाभारत के अनुशीलन से ज्ञात होता है इसका बृहत् स्वरूप प्रारम्भ से ही नहीं रहा है। प्रारम्भ में इसका रूप संक्षिप्त रहा है। समय के साथ उसमें परिवर्तन और परिवर्धन होते गए और विस्तार प्राप्त होने पर वर्तमान रूप स्थिर हुआ। अधिकांश पाश्चात्य और प्राच्य विद्वान् इस ग्रन्थ के विकास के क्रम के तीन सोपान मानते हैं—

(1) जय— महाभारत का प्रथम मौलिक रूप 'जय' नाम से विख्यात था। व्यास मुनि ने यह कथा अपने शिष्य वैशम्पायन को सुनाई थी। इसमें 8000 श्लोक थे। पाण्डवों की विजय घोषित करने के कारण इसका नाम 'जय' था।

(2) भारत—विकासक्रम के दूसरे चरण में यह ग्रन्थ "भारत" कहलाया। इसे वैशम्पायन ने अर्जुन के प्रपौत्र जनमेजय को सर्पसत्र में सुनाया था। जनमजेय ने इस यज्ञ में वैशम्पायन से राजधर्मादि विषयक अनेक प्रश्न पूछे थे। इन सबके उत्तर मूलग्रन्थ में सम्मिलित किए गए और श्लोक संख्या बढ़कर 24000 हो गई।

(3) महाभारत-तृतीय चरण में यह ग्रन्थ "महाभारत" हो गया। सर्पसत्र में लोमहर्षण के पुत्र सौति ने वैशम्पायन से भारत-कथा सुनी थी। नैमिषारण्य में शौनक आदि ऋषियों ने बारह वर्ष का यज्ञ किया, वहां सौति ने सम्पूर्ण महाभारत सुनाया था और प्रश्नोत्तर आख्यान आदि जोड़कर इसको एक बृहत् संग्रह का रूप दिया था—इसलिए यह अब एक लाख श्लोकों की संहिता हो गई।

(4) कुछ विद्वान् महाभारत की प्रगति के दो ही चरण मानते हैं। भारत और महाभारत। वे 'जय' को भारत का ही रूप मानते हैं। महाभारत के बृहत् स्वरूप का आधार अनेक उपाख्यानों और आख्यानों के अतिरिक्त परिशिष्ट भाग का "हरिवंश" भी है। इसके कतिपय प्रसिद्ध उपाख्यान हैं—शकुन्तलोपाख्यान, मत्स्योपाख्यान, रामोपाख्यान, नलोपाख्यान, सावित्री उपाख्यान और शिवि उपाख्यान। "हरिवंश" में श्रीकृष्ण के पूर्वजों का वर्णन और कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का चित्रण है। इसका महत्व एक स्वतंत्र ग्रन्थ के रूप में भी स्वीकार किया जाता है। भीष्म-पर्व की श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन को श्रीकृष्ण ने ज्ञान और कर्मयोग का उपदेश दिया।

रामायण के समान महाभारत के भी अनेक प्रक्षिप्त अंश उपलब्ध होते हैं। कई स्थानों पर परस्पर विरुद्ध उक्तियां मिलती हैं और भाषा, शैली तथा छन्द की दृष्टि से भी भिन्न-भिन्न भागों में अन्तर दिखाई देता है। स्पष्ट ही महाभारत एक हाथ द्वारा अथवा एक समय में लिखा गया ग्रन्थ नहीं है। इसका प्रमाण यह है कि इसके प्रथम दो अध्यायों में जो विषयसूची दी गई है, वह आगे वाले अंशों से मेल नहीं खाती है। इन्हीं कई कारणों से महाभारत का काल-निर्धारण एक जटिल प्रश्न है। रचनाकाल को लेकर विद्वानों द्वारा स्थापित सभी मत अनुमानों पर अवलम्बित हैं। कुछ सीमा तक पूर्वसीमा और अपरसीमा निश्चित की जा सकती है। डा० कपिलदेव द्विवेदी के मत में "महाभारत का मूल रूप कम के कम 500 ई० पू० में तैयार हो चुका था और उसका परिवर्धित एक लाख श्लोकों वाला रूप प्रथम शताब्दी ई० में पूर्ण हो चुका था। महाभारत में पांचवीं-छठी शताब्दी ई० तक परिवर्तन और परिवर्धन होते रहे हैं।"

महाभारत की शैली पांचाली है। भाषा सरल, सरस, रोचक और प्रवाहपूर्ण है। भाव और रस के अनुसार भाषा का वैविध्य दिखाई देता है। इसमें मुख्य रूप से अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग हुआ है। वीर, अद्भुत और शान्त रसों की प्रमुखता है। अलंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास के सुन्दर प्रयोग प्राप्त होते हैं। दर्शन, अध्यात्म, राजनीति और नीति को विषय बनाने वाली इनकी अनेक सूक्तियां महाभारत के अर्थ-गौरव को सिद्ध करती हैं और संस्कृतज्ञों में युगों-युगों से प्रचलित हैं।

महाभारत का महत्व कर्म दृष्टियां से है। सबसे बढ़कर इसका सांस्कृतिक महत्व है। श्रीमत्भगवत्गीता का सन्निवेश भी इसके महत्व का एक प्रमुख कारण है। गीता भारतीयों के लिए एक 'आचार-संहिता' एवं धर्म और दर्शन का ग्रन्थ है। महाभारत के महत्व पर डा० कपिलदेव द्विवेदी ने लिखा है, "इसमें विभिन्न संस्कृतियों का सम्मिश्रण, राष्ट्रीय भावना का उदय, आसुरी-प्रवृतियों के दमन का प्रयास, भौगौलिक अनेकता में एकता, जीवन दर्शन की व्यावहारिक, दृष्टि से व्याख्या, अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता, महिलाओं में अवलम्बन के परित्याग की प्रवृत्ति, राजनीति-कूट नीति-छद्मनीति-दण्डनीति और अनीति का व्यावहारिक प्रदर्शन, राजधर्म का सर्वांगीण निरूपण, आख्यान-साहित्य का अक्षय कोष, नीतिशास्त्र की बहूमूल्य नीधि एवं चतुर्वग की सभी समस्याओं का समाधान है। इसमें विरूपता में एकरूपता, अनेकता में एकता, विश्रृंखलता में समन्वय, व्यवहार में आदर्श, अशान्ति में शान्ति, प्रेय में श्रेय और धमार्थ में मोक्ष का समन्वय है।"

रामायण की भांति ही महाभारत भी भारतीय जनजीवन और साहित्य को हजारों वर्षों से प्रभावित कर रहा है। यह भारतीय संस्कृति का अनुपम प्रकाश-स्तम्भ है।

3. पुराण

'पुराण' शब्द का वास्तविक अर्थ है— प्राचीन अथवा पुराना। पुराण नामके ग्रन्थों को यह नाम दो कारणों से दिया गया है— (1) अत्यंत प्राचीनतम होने से (2) प्राचीन-कथाओं का संकलन-रूप होने से। महाभारत में प्राचीन आख्यानों को पुराण कहा गया है—'पुराणमाख्यानं पुराणम्।' वायुपुराण में 'पुराण' शब्द के दो अर्थ दिए गए हैं (1) पुराण वह है जो प्राचीन समय में सजीव था तथा (2) प्राचीन परम्परा का कथन करने वाले ग्रन्थ पुराण हैं। इन सभी व्युत्पतियों से सिद्ध होता है कि पुराण वह आख्यान-संग्रह हैं, जो प्राचीन हैं। प्राचीनता की दृष्टि से पुराण की जड़ें वैदिक साहित्य में हैं। कई वैदिक गाथाएं पुनः पुराणों में प्रकट हुई हैं। अथर्ववेद ने चारों वेदों के साथ पुराण का संकेत किया है।

पद्मपुराण के अनुसार पूर्वतत्व के चिन्तन में संलग्न को 'पुराण' कहते हैं। सायणाचार्य के विचार में पुराण वे हैं जो संसार की उत्पत्ति और

विकासक्रम के बोधक हैं। विष्णु पुराण में पुराण-लक्षण करते हुए उसके पांच प्रतिपाद्य बताए गए हैं:—

'सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो ऽ मन्तवंन्तराणि च।

वंशानुचरितं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम्।।

अर्थात् (1) सर्ग— सृष्टि की उत्पत्ति।

(2) प्रतिसर्ग— सृष्टि का विस्तार, लय और पुनः सृष्टि।

(3) वंश— देवों और ऋषियों की सृष्टि से आदि वंशावलियां।

(4) मन्वन्तर— विभिन्न मनुओं का समय, संख्या व घटनाएं।

(5) वंशानुचरित— सूर्यवंशी और चंद्रवंशी राजाओं का इतिहास।

पुराण के प्रतिपाद्यविषय के रूप में कहे गए उपर्युक्त पंचलक्षण केवल विष्णुपुराण पर पूर्णतया घटित होते हैं। अन्य पुराणों में इन पांच विषयों के अतिरिक्त भी कई दूसरे विषयों का प्रतिपादन किया गया है। स्तुति, उपवास, तीर्थ, व्रत, शरीर-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, काव्यशास्त्र, व्याकरण आदि अन्य विषय पुराणों में उपलब्ध होते हैं। पुराण स्वरूपतः सांप्रदायिक माने जा सकते हैं, जो विष्णु, शिव, सूर्य, शक्ति आदि किसी एक या दूसरे देवता की उपासना हेतु समर्पित हैं। इनमें दर्शन-विषयक प्रभूत सामग्री प्राप्त होती है। विशेषकर सांख्य, वेदान्त और योग दर्शन को लेकर। वर्णाश्रक, संस्कार, उत्सव, अनुष्ठान आदि से सम्बद्ध विवेचन भी पुराणों में मिलता है। कई पुराणों ने ऐतिहासिक घटनाओं और राजवंशों का उल्लेख किया है। शिशुनाग, नन्द, मौर्य, शुंग, आन्ध एवं गुप्त वंश और शक, कुशण, हूण आभीर आदि के आश्रमणों के वर्णन कुछ पुराणों में हैं। इससे पुराणों के रचनाकाल के निर्धारण में सहायता मिलती है। गौतम धर्मसूत्र, आपस्तम्भ धर्मसूत्र और महाभारत में पुराणों का उल्लेख हुआ है। अतः पुराणों की पूर्वसीमा 600 ई० पूर्व के लगभग हैं तो अपर सीमा 500 ई० के लगभग। हर्ष इसके बाद के राजाओं का उल्लेख पुराणों में नहीं हुआ है। निश्चय ही पुराणों के रचनाकाल का विस्तार कई शताब्दियों में रहा है।

परम्परागत रूप में "व्यास" को पुराणों का संकलनकर्ता माना जाता है। अठारह महापुराण हैं और अठारह ही उपपुराण भी है। इनमें नाम इस प्रकार हैं:-

महापुराण- मत्स्य, मार्कण्डेय, भविष्य, भागवत, ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्म, वामन, बराह, विष्णु, वायु, अग्नि, नारद, पद्म, लिंग, गरुड, कूर्म, स्कन्द।

गरुड पुराण के अनुसार अठारह उपपुराणों के नाम इस प्रकार हैं:-

सनत्कुमार, नारसिंह, स्कान्द, शिवधर्म, आश्चर्य, नारदीय, कापिल, वामन, औशनस, ब्रह्माण्ड, वारुण, कालिका, माहेश्वर, साम्ब सौर पाराशर, मारीच, भार्गव।

देवीभागवतपुराण में उपर्युक्त स्कान्द, वामन, ब्रह्माण्ड, मारीच और भार्गव के स्थान पर क्रमशः शिव, मानव, आदित्य, भागवत और वासिष्ठ नाम दिए गए हैं। महापुराण और उपपुराण के नाम, संख्या आदि के विषय में पर्याप्त मतभेद हैं। महापुराणों की संक्षिप्त रूपरेखा इस प्रकार है:—

(1) मत्स्यपुराण— इस पुराण का ऐतिहासिक महत्व अधिक है। इसमें आन्ध्र राजाओं की प्रामाणिक वंशावलियां प्राप्त हैं। इसमें दक्षिण भारत की मूर्तिकला, वास्तुकला एवं स्थापत्य कला का सुन्दर वर्णन है। इसमें पर्वों, तीर्थों तथा वैष्णवों और शैवों की विधियों का सुन्दर विवरण है।

(2) मार्कण्डेपुराण— इस पुराण में अग्नि, इन्द्र, सूर्य तथा ब्रह्मा देवताओं को प्रधान स्थान दिया गया है। इसी पुराण में 'देवी माहात्म्य' है, जिसमें आद्य शक्ति दुर्गा देवी की महिमा का स्तवन है।

(3) भविष्यपुराण— इस पुराण में अनेक भविष्यवाणियां दी गई हैं। इसमें चारों वर्णों के कर्तव्य, व्रत और धर्मादि वर्णित हैं। सूर्य, नागदेव और अग्नि की पूजा का उल्लेख इसमें हुआ है। इसका सृष्टि-विषयक प्रकरण मनु के धर्मशास्त्र के आधार पर लिखा गया है। भविष्य पुराण का परिशिष्ट भाग 'भविष्योत्तर पुराण' है।

(4) भागवतपुराण— यह सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय पुराण है। वैष्णवों के लिए यह 'पंचमवेद' ही है। इसमें बारह स्कन्धों में अठारह हजार श्लोक हैं। इस पुराण की अनेक टीकाएं लिखी गई हैं। इसमें विष्णु के अवतारों का विस्तृत वर्णन है। दसवें स्कन्ध में कृष्ण की विभिन्न लीलाएं चित्रित हैं। गम्भीर दार्शनिक चित्रण इस पुराण की विशेषता है। यह पुराण प्रौढ़ और परिष्कृत शैली में लिखा हुआ है। इसमें वैदिक और लौकिक संस्कृत का समन्वय दिखाई देता है।

(5) ब्रह्माण्डपुराण— यह पुराण स्तोत्रों, उपख्यानों एवं माहात्म्यों का एक विशाल संग्रह है। इसमें सात खण्डों में 'अध्यात्म रामायण' दी गई है जिसमें शिव-पार्वती के वार्तालाप में रामभक्ति और अद्वैतभावना को ही मोक्ष प्राप्ति का उपाय कहा गया है।

(6) ब्रह्मवैवर्तपुराण— इसमें चार खण्ड और अठारह हजार श्लोक हैं। चार खण्ड हैं—ब्रह्मखण्ड, प्रकृति खण्ड, गणेशखण्ड और कृष्णजन्म खण्ड। इस पुराण में राधाकृष्ण की शक्ति के रूप में उपस्थिति हुई हैं। यहां सृष्टि को ब्रह्मा का विवर्त माना गया है।

(7) ब्रह्मपुराण— प्राचीन माने जाने के कारण सभी पुराणों में इसका उल्लेख हुआ है। इसीलिए इसको 'आदिपुराण' भी कहते हैं। इसमें उड़ीसा के पवित्र तीर्थों का वर्णन हुआ है। इसमें सूर्य और शिव में अभेद स्थापित किया गया है। इसका एक परिशिष्ट 'सौर पुराण' कहलाता है।

(8) वामनपुराण— इसमें 95 अध्याय और दस हजार श्लोक हैं। विष्णु के बामनअवतार का वर्णन इसमें हुआ है। साथ ही इस पुराण में शिव-पार्वती के विवाह का वर्णन तथा लिंग-पूजा का प्रतिपादन भी है।

(9) वाराहपुराण— यह एक वैष्णव पुराण है, जिसमें विष्णु के वराह अवतार का वर्णन है इसमें 218 अध्याय और 24000 श्लोक हैं। शिव और दुर्गा से सम्बद्ध कुछ आख्यान भी इसमें हैं। इसमें मथुरा माहात्म्य और नचिकेतोपाख्यान भी मिलता है।

(10) विष्णुपुराण— प्राचीन और प्रामाणिक होने से इस पुराण का महत्व सर्वाधिक है। इस पुराण में विभिन्न अवतारों के माध्यम से विष्णु की उपासना वर्णित है। यही एक पुराण है जिसमें पुराण के सभी लक्षण घटते हैं। इसमें मौर्य राजाओं की प्रामाणिक वंशावलियां दी गई हैं। शंकराचार्य ने केवल इसी पुराण से उद्धरण दिए हैं। इसका ऐतिहासिक, साहित्यिक और दार्शनिक महत्व सबसे बढ़कर है।

(11) वायुपुराण— इसे शिवपुराण भी कहते हैं। गुप्त साम्राज्य का वर्णन होने से इस पुराण का ऐतिहासिक महत्व है। इसमें 112 अध्याय और दस सहस्र श्लोक हैं। इसमें शिव की स्तुति प्रमुख है। इसमें विष्णु संबंधी दो अध्याय भी हैं। इसमें संगीत शास्त्र पर भी एक अध्याय है।

(12) अग्निपुराण— उपयोगिता की दृष्टि से यह पुराण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह भारतीय साहित्य एवं संस्कृति का एक अद्भुत विश्वकोष है। लेखक ने अत्यंत प्रयत्नपूर्वक लगभग सभी विधाओं का संकलन इसमें किया है। इसमें काव्यशास्त्र, नाट्यशास्त्र, अर्थशास्त्र, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, वैदिक कर्मकाण्ड आदि विविध विषयों का वर्णन इस पुराण में है। इसमें रामायण, महाभारत, आदि ग्रन्थों का सार भी दिया गया है।

(13) नारद पुराण— इसको बृहन्नारदीय पुराण भी कहा जाता है। यह वैष्णव पुराण है। इसमें अठारह हजार से अधिक श्लोक हैं। पुराणों के वास्तविक प्रतिपाद्य विषयों के स्थान पर इसमें वर्णाश्रम धर्म, श्राद्ध, प्रायश्चित, विष्णुभक्ति आदि से मोक्षप्राप्ति वर्णित है।

(14) पद्मपुराण— इस पुराण में पांच खण्ड हैं—सृष्टि, भूमि स्वर्ग, पाताल, तथा उत्तरखण्ड। वैष्णव पुराण होकर भी यह ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के एकत्व की भावना का प्रतिपादक है। इसमें अनेक आख्यान हैं। रामोपाख्यान और शकुन्तलोपाख्यान इसमें है। सम्भवतः कालिदास अपने रघुवंशम् और अभिज्ञानशाकुन्तलम् के लिए इसके ऋणी हैं।

(15) लिंगपुराण— इस पुराण में शिव के अट्ठाईस अवतारों का वर्णन है। इसमें ग्यारह हजार श्लोक हैं। इसमें शिवलिंग की पूजा का महात्म्य वर्णित है। यह कर्मकाण्डप्रधान पुराण है।

(16) गरुड़पुराण— यह एक वैष्णव पुराण है। इसमें अठारह हजार श्लोक माने जाते हैं। इसमें पुराणों से साक्षात् सम्बद्ध कोई विषय नहीं है। इसमें विष्णुभक्ति, व्रत, प्रायश्चित, ज्योतिष, व्याकरण, ओषधिशास्त्र, नीति आदि का वर्णन है। मृत्यु, आत्मा, कर्म, पुनर्जन्म, मुक्ति, यममार्ग, प्रेतगति आदि का बहुविध वर्णन इसमें उपलब्ध होता है।

(17) कूर्मपुराण— यह पुराण पूर्णरूप से उपलब्ध नहीं होता है। इसमें पहले ब्राह्मी, भागवती, सौरी तथा वैष्णवी— चार संहिताएं थीं; जिनमें अब केवल ब्राह्मी संहिता प्राप्त है। इसमें छह हजार श्लोक हैं। इसमें विष्णु के कूर्मावतार का वर्णन है साथ ही शिव के अवतारों का वर्णन है। 'ईश्वरगीता' और 'व्यासगीता' इसी पुराण में हैं।

(18) स्कन्दपुराण— इसमें पांच संहिताएं हैं— सनत्कुमारीय, ब्राह्मी, वैष्णवी, शंकर या अगस्त्य और सौर। इसके अतिरिक्त 'काशीखण्ड' भी है जिसमें 50 अध्याय हैं। इस खण्ड में वाराणसी और उसके समीपवर्ती मन्दिरों का विस्तृत विवरण है। प्रसिद्ध 'गंगासहस्रनाम' भी इसी काशीखण्ड में है। स्कन्दपुराण में 81000 श्लोक हैं। यह सबसे विशालकाय पुराण है। यह मुख्यतया शिवभक्ति का पुराण है। भारत के सभी तीर्थों का वर्णन इसमें है। इसलिए इसका भौगोलिक महत्व है। इस पुराण की शैव 'ब्रह्मगीता' और वेदान्ती 'सूतगीता' प्रसिद्ध हैं।

पुराणसाहित्य का महत्व अनेक दृष्टियों से आंका जाता है। वेदों और पुराणों का घनिष्ठ संबंध दिखाई देता है। संस्कार विहीन व्यक्ति पारम्परिक मत में वेदाध्ययन के अधिकारी नहीं हैं। उनको ही उपदेश देने के लिए पौराणिक ज्ञान की उपयोगिता है। इसीलिए वेदों के समान ही पुराणों को प्रामाणिक माना जाता है। पुराण सनातन हिंदू धर्म के प्राणभूत हैं। पंचदेव—शिव, विष्णु, शक्ति, सूर्य और गणेश की उपासना—पद्धति इन पुराणों से ज्ञात होती है। भारतीय तीर्थ, व्रत, उपवास, प्रायश्चित आदि के परिज्ञान के लिए इनका महत्व है। इस प्रकार पुराणों का सर्वाधिक महत्व धर्म की दृष्टि से है।

पुराण इतिहास और भूगोल के प्रामाणिक व प्राचीन विश्वकोष है। राजा परीक्षित से लेकर पद्मनन्द तक का अज्ञात इतिहास पुराणों में मिलता है। मौर्य, आन्ध्र व गुप्त नरेशों की वंशावलियों का वर्णन पुराणों में है। इनके अन्त में आभीर, गर्दभ, शक, यवन, तुषार, हूण आदि राजवंशों की वंशावलियां भी मिलती हैं। इस प्रकार पुराणों का ऐतिहासिक महत्व कम नहीं है। द्वीपों, भुवनों, तीर्थों, समुद्रों, नदियों, पर्वतों आदि के विवरणों से पुराणों का भौगोलिक महत्व स्वीकार किया जाता है।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से पुराण अत्याधिक उपादेय हैं। इसमें वर्णाश्रम धर्म, संस्कार, पंच महायज्ञ, राजधर्म, प्रजाधर्म, नीति, परिवार से सम्बद्ध महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध हैं।

काव्यशास्त्र, नाट्यशास्त्र, अर्थशास्त्र, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष, दर्शन, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र, समाजशास्त्र आदि से सम्बद्ध विषयों के विवेचन से पुराणों का शास्त्रीय महत्व प्रतिपादित होता है। रामायण और महाभारत की भांति पुराण भी परवर्ती कवियों और नाटककारों के लिए उपजीव्य रहे हैं। पुराणों की रचना कहने के लिए तो अल्पबुद्धि मनुष्यों के लिए ही की गई थी, तथापि अपने बहुविध महत्व के कारण पुराणों को भारतीय शिक्षा पद्धति में वह विशेष स्थान प्राप्त हुआ है जिसके कारण स्वीकार किया जाता है कि वेदों का पण्डित होकर भी पुराणों के अध्ययन के बिना कोई मनुष्य चतुर नहीं समझा जा सकता है—

सो विद्याच्चतुरो वेदान्, सांगोपांगोपनिषदो द्विजः।
न चेत्पुराणं संविद्यात्रैव सः स्यात्विचक्षणः।।

"चूंकि भारतीय एक होकर एक समन्वित संस्कृति का विकास करना चाहते हैं, इसलिए सभी भारतीयों का यह परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे हिन्दी को अपनी भाषा समझकर अपनाएँ"

-डा0 बाबासाहब अम्बेदकर

"गांधी जी के अंतिम दिन"

—डॉ॰ रामदास 'नादार'

गांधी जी अभी-अभी व्रत से निवृत्त हुए थे। व्रत के कारण वे काफी कमजोर हो गए थे। इसलिए हिंगोरानी उन्हें स्वास्थ्य लाभ के लिए समुद्र किनारे अपने निवास स्थान पर बम्बई में ले आए थे। उन्हें पूर्ण विश्राम के लिए अलग रखा गया था और किसी को उनसे मिलने नहीं दिया जाता था। एक दिन हिंगोरानी ने देखा कि बापू अपने बिस्तर पर बैठे किसी गहरी सोच में डूबे हैं। उनकी अथेली सोच की मुद्रा में उनकी गाल पर थी और ऐसे लगता था जैसे वे किसी गहरी समस्या से दो चार हो। हिंगोरानी उनके पास जा खड़े हुए किन्तु उन्हें किसी की उपस्थिति का आभास तक न हुआ। कुछ देर हिंगोरानी उनके पास चुपचाप खड़े उन्हें निहारते रहे। आखिर बापू से पूछ ही लिया कि बापू आज आप किस सोच में डूबे हैं।

बापू एक दम चौंके और हिंगोरानी से कहने लगे, "हिंगोरानी यदि मैं मरण व्रत में मर जाता तो लोग मेरे बारे में क्या सोचते? हिंगोरानी बोले" आप शहीद समझे जाते"।

इस पर बापू की भवे तन गई और तनिक क्रुद्ध हो कर कहने लगे "नानसेन्स व्रत के कारण मर जाना क्या शहीद होना है? मेरे हारोस्कोप में तो लिखा है कि मेरी मौत या तो फांसी के तख्ते पर होगी या पिस्तौल की गोलियों से"।

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में गांधी जी को अंग्रेज सरकार ने अन्य नेताओं के साथ बन्दी बना लिया था। उन्हें आगा खां महल में रखा गया था। 22 फरवरी, 1943 को कस्तूरबा उनसे विदा हो गई। 1945 में जब उन्हें छोड़ा गया तो तृतीय महायुद्ध समाप्त हो चुका था। इस बीच मुस्लिम साम्प्रदायिकता जोर पकड़ गई थी। जेल से बाहर आकर गांधी जी ने सब कुछ बदला पाया। उन्हें लगा कि मोहम्मद अली जिन्नाह को तुष्ट करना कठिन है फिर भी उन्होंने प्रयास करना जरूरी समझा। 1944 में हिन्दू मुस्लिम गतिरोध दूर करने के लिए चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने एक योजना रखी थी जिसे सी॰आर॰ फामूर्ला के नाम से याद किया जाता है। गांधी जी उस फार्मूले को आधार मानकर बातचीत करने के लिए मि॰ जिन्नाह से मिले। गांधी जी उन्हें "कायदे आजम" कहने में भी नहीं शरमाएं। मगर मि॰ जिन्नाह उन्हें मि॰ गांधी कह कर सम्बोधित करते रहे। जिन्नाह ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि उन्हें "अपूर्ण, अपंग और दीमक लगा पाकिस्तान" स्वीकार नहीं। वे उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रांत, सिंध बिलोचिस्तान समस्त पंजाब, बंगाल व आसाम को बिना किसी जनमत संग्रह कराए पाकिस्तान में सम्मिलित करना चाहते थे।

1946 के प्रारम्भ में भारत में केन्द्रीय और प्रांतीय विधान सभाओं के लिए निर्वाचन हुए। इन चुनावों में हिन्दू स्थानों पर कांग्रेस पूरी तरह सफल हुई लेकिन मुस्लिम स्थानों पर मुस्लिम लीग को भारी विजय प्राप्त हुई। लीग ने कुल 495 सीटों में से 446 सीटे जीत ली। इससे आने वाले समय और हालात की स्पष्ट झलक मिलती थी। गांधी जी को बड़ी निराशा हुई।

23 मार्च, 1946 को केबिनेट मिशन भारत आया। मुस्लिम लीग ने केबिनेट मिशन के सभी प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया क्योंकि उसने पाकिस्तान की मांग का समर्थन नहीं किया। बाइसराय ने कांग्रेस को अंतरिम मन्त्रिमंडल बनाने को कहा। कांग्रेस ने लीग से सहयोग की प्रार्थना की किन्तु वह अपनी हठधर्मी पर कायम रही। 2 सितम्बर, 1946 को पण्डित नेहरु के नेतृत्व में अंतरिम सरकार का गठन हो गया। इससे पूर्व लीग ने 16 अगस्त, 1946 का दिन "प्रत्यक्ष कार्यवाही" करने के लिए निश्चित किया था। फलस्वरुप बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। कलकत्ता में उस दिन बड़ी भारी लूटपाट और मारकाट हुई। 5 हजार लोग झगड़ो में मारे गए और 15 हजार घायल हुए। लगभग एक लाख बेघर हो गए और लाखों की सम्पति नष्ट हो गई। ऐसे ही दंगे नवाखाली में भी हुए। गांधी जी को इस सब से बड़ा आघात लगा। वे नवाखाली पहुंच गए और अपनी जान की परवाह किए बिना गांव-गांव घूम कर लोगों को प्रेम, भाईचारे का संदेश दिया। उनकी जिन्दगी को सतत खतरा था किन्तु उन्हें तनिक भी चिन्ता न थी, जैसे वे मौत का स्वयं आह्वान कर रहे हों। 15 अगस्त, 1947 के बाद विस्थापितों की बाढ़ आ गई और दिल्ली में उन्होंने मस्जिदों आदि पर अधिकार जमा लिया। इधर दिल्ली भी दंगों की आग में जल रही थी। पंजाब के हिन्दुओं का बदला यहां के मुसलमानों से लिया जा रहा था। यह सब देखकर गांधी जी की आत्मा क्राह उठी। उन्होंने लोगों को सद्मार्ग दिखाने के लिए मरण व्रत रख लिया। उनकी हालत दिन पर दिन बिगड़ने लगी। इस पर हिन्दू-मुसलमानों दोनों समुदायों के नेताओं ने गांधी जी से व्रत त्याग देने का अनुरोध किया किन्तु गांधी जी की शर्त थी कि विस्थापितों से मस्जिदे खाली कराई जाएं और भाई-भाई का गला काटना बन्द करें। लुट पुट कर आए विस्थापित हिन्दुओं से सिर छुपाने का आश्रय छीनना एक अत्यंत अप्रियता अर्जित करने का कार्य था। गांधी जी की शर्तें मान तो ली गई किन्तु इससे गांधीजी ने अप्रिय होने का खतरा मोल ले लिया।

बापू तो धर्म की मूर्ति थे। वे कोई कूट राजनीतिज्ञ नहीं थे और यदि थे तो उनकी राजनीति धर्म पर आधारित थी। विस्थापित हिन्दू करोड़ों रुपये की सम्पति पाकिस्तान में छोड़ आए थे किन्तु गांधी जी ने इसको कोई महत्व न देते हुए भारत सरकार को पाकिस्तान के हिस्से का पचपन करोड़ रुपया देने को कहा। भारत सरकार गांधी जी के अनुरोध का विरोध न कर सकी। गांधी जी का यह कदम कुछ लोगों के हृदय में शूल की तरह चुभ गया।

कोई नहीं जानता कि गांधी जी यह सब जानबूझकर कर रहे थें। उन्हें भी अच्छी तरह पता था कि इस विषय में आम जनता की क्या भावनाएं हैं।

लेकिन दृढ प्रतिज्ञ गांधी जी खुशी-खुशी ये सभी खतरे मोल ले रहे थे। सम्भवतः उनके मन में यह रहा हो कि कोई उनकी छाती को गोलियों से छलनी कर दें क्योंकि वे इस कदर निराश हो गए थे कि अब और जीने की उनकी इच्छा नहीं थी।

उन्होंने कभी कहा था कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा किन्तु कालान्तर में पाकिस्तान बन गया और वह भी गांधी जी के जीते जी, उनकी लाश पर नही। यहां एक और घटना का जिक्र करना जरुरी है। 3 जून, 1947 के प्रस्तावानुसार भारत का विभाजन करने और पाकिस्तान के निर्माण की घोषणा कर दी गई थी। कांग्रेस कार्यकारिणी ने भी विभाजन को स्वीकार कर लिया। सरदार पटेल ने इस विवशता के संबंध में कहा था। "मैंने अनुभव किया कि यदि हम पाकिस्तान को स्वीकार न करें तो भारत बहुत छोटे छोटे टुकड़ों में बंट जाएगा और बिल्कुल नष्ट हो जाएगा"। 3 जून, 1947 के प्रस्ताव के आधार पर पाकिस्तान की स्वीकृति का अनुमोदन करने के लिए अखिल भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन नई दिल्ली में कर्जन रोड पर कांस्टीटयूशनः क्लब मैदान में बुलाया गया। पण्डित नेहरु ने कहा "यदि हमें आजादी मिल भी जाती तो भारत निर्बल रहता क्योंकि इकाइयों के पास अत्यधिक शक्तियां रहती। अविभाजित भारत में सदैव कलह और परेशानियां रहती। इसलिए हमने देश का विभाजन स्वीकार कर लिया जिससे हम कम-से-कम शेष भारत को तो शक्तिशाली बना सकें। जब दूसरे (मुस्लिम लीग) हमारे साथ रहना नहीं चाहते, तब हम उन्हें क्यों और कैसे विवश कर सकते थे। हालात की मजबूरी थी और यह महसूस किया गया कि जिस रास्ते पर हम चल रहे हैं, उससे गतिरोध दूर नहीं किया जा सकता। अतः हमको देश का बटवारा स्वीकार करना पड़ा"। अनुमोदन का प्रस्ताव पं० गोविंद वल्लभ पन्त ने रखा और कहा कि "पाकिस्तान की स्वीकृति से शेष भारत संगठित और शक्तिशाली बन सकेगा जिससे देश उन्नति करेगा और विश्व के देशों में अपना स्थान पा सकेगा। शेष भारत में फिर "दो राष्ट्र का सिद्धांत" सहन नहीं किया जाएगा और प्रत्येक नागरिक को अपनी पूर्ण भक्ति राष्ट्र को देनी होगी"।

इस अवसर पर गांधी जी ने जनता से पाकिस्तान को स्वीकार करने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा "कांग्रेस कार्यकारिणी देश विभाजन को मान चुकी है। यदि आप इसे अस्वीकार करते हैं तो यह नेताओं में अविश्वास प्रकट करना होगा।"

जब उन्होंने यह कहा तो वे यह नहीं भूले थे कि वे यह कह चुके हैं कि "पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा"। बापू एक सोची समझी इच्छा के अनुसार यह सब कुछ कह और कर रहे थे और यह इच्छा थी अपने कहे वचनों को सत्य सिद्ध करने की। वे और अधिक नहीं जीना चाहते थे क्योंकि सब कुछ उनकी इच्छा और मान्यताओं के विपरीत घटा था और घट रहा था।

30 जनवरी, 1948 से पन्द्रह दिन पूर्व मदन लाल पाहवा ने उनकी प्रार्थना सभा में बम फेंका। यह आने वाले खतरे की चेतावनी थी किन्तु उन्होंने इसे कोई महत्व नहीं दिया और सुरक्षा के विशेष प्रबंध करने के सरदार पटेल के अनुरोध को भी ठुकरा दिया। यह सब इस बात का द्योतक है कि वे स्वयं लोगों की नाराजगी मोल ले रहे थे और खतरों का आह्वान कर रहे थे। वे चाहते थे कि पाकिस्तान उनकी लाश पर बने तथा उनके "हारोस्कोप" में लिखी बात सत्य निकले कि उनकी छाती में पिस्तौल की गोलियां लगे क्योंकि अब फांसी का तख्ता तो उनके लिए पीछे छूट गया था।

आखिर बापू ने यह सिद्ध कर ही दिया कि पाकिस्तान उनकी लाश पर बने। पाकिस्तान बनने के छः महीने बाद ही देश ने उनकी लाश देखी और उनकी छाती को अपनी ही गोलियों से छलनी भी। ऐसे लगता है कि गांधी जी चाहते थे कि कोई सिरफिरा उनकी छाती में गोली मारे और इस तरह उनका "हारोस्कोप" भी सत्य सिद्ध हो।

गांधी जी तो सच्चे प्रमाणित हुए किन्तु भारत और भारतवासियों के माथे पर सदा के लिए अकृतज्ञता का कलंक लग गया जिस पाप की सजा हम रहती दुनिया तक भोगते रहेंगे। यदि आज गांधी जी हमारे बीच होते तो देश की तस्वीर कुछ और होती।

हिन्दी देश के बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना ही चाहिए।

–रवीन्द्रनाथ ठाकुर

आंसू

(तेलुगू कविता 'एन्वी' का अनुवाद)

—बाल शौरि रेड्डी

मूल्यहीन आँसू तक
व्यय न करने वाली
कंजूस दुनिया है—यह!
यहि हम चाहते हैं—आँसू तो...
प्रत्येक अश्रु—बिन्दु का
मूल्य निर्धारण कर
विक्रय करने वाले
वणिक प्रमुख हैं—यहां के मानव!!

अनुवादकः बाल शौरि रेडी

[श्री प्रताप सिंह के सौजन्य से]

गीत-1

— डॉ॰ भरत मिश्र 'आरा'

हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना,
के हूं न इसे दुनियां में भरल तनी सोचना।
हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना।

के हूं के त धन-धाम खूब बांटे इ त मान,
उनका हबेरा नइखो दुःखी बाड़े उहोजान।
जेकरा लइकवा बाड़े खामे के ठेकान जा।,
हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना।

जेकरा के देखे खातीर आज लोग ललचेला,
भरत जवानी में लटपट करेला।
आइल बुढ़ापा त मुहंवो से बोले ना,
हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना।

धीरज धरब त दुनियां में जिउष,
मेहनत करब त नमवा कमइब।
दोसरा के खुशीयां में तू दूं खुश रहना,
हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना।

अपना के कभी ना मान असहाई,
राम जी के भज रुहूं मनवा लगाई।
तोहरो उधार करीहे रघुकुल मणि ना,
हे मन काहे तू उदास बाड़ कहना।

— [**आशय**—इस गीत का सार है कि हमें कभी भी निराश नहीं होना चाहिए। कवि कहता है कि ठीक से विचार करने पर पता चलता है कि इस दुनियां में हर दृष्टिकोण से कोई भी पूरा नहीं है।

उदाहरण देकर कवि कहता है कि इस संसार में जिनके पास धन है, उनमें से बहुतों को संतान का अभाव दुःख दे रहा है। धन रहते हुए भी संतान की कमी के चलते वे दुःखी है। इसके विपरीत जिन्हें बेटे-बेटियां हैं, उनमें कुछ लोगों को दोनों शाम भोजन भी नहीं मिल पाते। इसलिए कवि का कहना है कि हमें कभी भी उदास होने की ज़रूरत नहीं है।

आज जिसे देखने के लिए लोग तड़पते हैं, उनसे प्रेमालाप करते हैं जब वे लोग वृद्धावस्था में पहुंचते हैं तो उनसे अधिकांश लोग मुंह फेर लेते हैं। अर्थात् जवानी स्थायी नहीं हैं। सच पूछा जाये तो सब कुछ क्षणिक है।

कवि, धैर्य धारण करने की सलाह देता है क्योंकि इससे जीने की शक्ति प्राप्त होती है। परिश्रम करने से यश मिलता है। हमें चाहिए दूसरे की खुशी में प्रसन्न रहें।

अन्त में कवि का कहना है कि हमें कभी भी अपने को असमर्थ या असहाय नहीं मानना चाहिए। ईश्वर की उपासना मनसा-वाचा-कर्मणा करनी चाहिए। कवि का विश्वास है कि वैसे व्यक्ति के रक्षक स्वयं परमेश्वर होते हैं]

गीत-2

— डॉ॰ भरत मिश्र 'आरा'

सांच मानी आदिमी एह धरती के लाल ह,
ईश्वर के रचना में सबसे महान ह।
सांच मानी आदिमी एह धरती के लाल ह,

देवता से बढ़ल-चढ़ल आदिमी बा भाई,
ओकरे में दुनियां के शक्ति समाई।
जे बुझो ऐकरा के ऊहे महान ह।
सांच मानी आदिमी एह धरती के लाल ह,

पर्वत के चाहे त ऊहै हिला दे,
सागर के चाहे त ऊहै सुखा दे।
हमरा बुझाला जे आदमी इंसान ह,
सांच मानी आदिमी एह धरती के लाल ह।।

बैर भाव छोड़ के हिंसा मिटाई,
आपन पराया के भेदवा भुलाई।
मानी त भईया धरतीया इ स्वर्ग ह,
सांच मानी आदिमी एह धरती के लाल ह,

[आशय—इस कविता में कवि का कहना है कि इस धरती का लाल मनुष्य ही है अर्थात् आदमी ही पृथ्वी पर सबसे विख्यात प्राणी है। ईश्वर की रचना का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।

सच पूछिए तो देवता से भी मानव बड़ा होता है। मनुष्य में ही सभी शक्ति निहित है। जो इस बात को समझ ले, वही महान है।

कवि कहता है कि आदमी ही इंसान होता है। उसमें पर्वत को हिलाने और महासागर को सोख लेने की शक्ति है।

हमें चाहिए कि आपसी बैर-भाव को छोड़ हिंसा को दूर कर अपने-पराये का अन्तर छोड़ देना चाहिए। मानें तो यह धरती ही स्वर्ग है।]

उर्दू गुलदस्ता
(प्रस्तुतिः श्रीमती त० निशा)

उर्दू गज़ल

कविः मिर्जा मोहम्मद रफी 'सौदा'

(1)

गुल फेंके है औरों की तरफ बल्कि समर भी,
ए खान-ए बरन्दाज़ चमन कुछ तो इधर भी
क्या ज़िद है खुदा जानिए मुझ साथ बगरना।
काफ़ी है तसल्ली को मेरे एक नज़र भी।
ए अबरे[3] कसम है तुझे रोने की हमारे,
तुझ चश्म[4] से टपका है कभू लख्ते जिगर भी।
ए नाल-ए सद अफसोस जवां मरने पे तेरे,
पाया न तनिक देखने में राए असर भी।
किस हस्ती मौहूम[5] पे नाजां है तूँ ए यार,
कुछ अपने शब व रोज की है तुझको खबर भी।
तन्हा तेरे मातम में नहीं शाम-ए सिया पोश,
रहता है सदा चाक गरेबाने सहर भी।
सौदा तेरी फरियाद से आंखों में कटी रात,
आयी है सहर होने को टिक तो कहीं भर भी।

2

कविः ग़ालिब

न गुले नगमा हूं, न परद-ए साज़
मैं हूं अपनी शिकस्त की आवाज़।
तू और आराइश-ए खम का कल,
मैं और अन्देश-ए दौर दराज।
लाफे तमकीं फरेब-ए सादा दिली,
हम हैं और राज़ हाए सीना गुदाज।
हूं गिरफ्तारे उल्फते सय्याद,
वरना बाकी है ताकते परवाज।
वह भी दिन हो उस सितमगर से,
नाज खींचू बजाए हसरते नाज।
नहीं दिल में मेरे वह कतर-ए खूं,
जिससे मजगां हुई नहूं गुलेबाज़।
ए तेरा गमजाए अंगेज,
ए तेरा जुल्म सरबसर अन्दाज।
तू हुआ जलवागर मुबारक हो,
रंजिशे सजदा जबीन नयाज।
मुझको पूछा तो कुछ गज़ब न हुआ,
मैं गरीब और तू गरीब नवाज।

(3)

कवि : मोहम्मद मोमिन खां मोमिन

असर उसको जरा नहीं होता।
रंज राहत फिज़ा नहीं होता
बेवफा कहने की शिकायत है,
तू भी वायदा वफा नहीं होता।
जिक्र एय्यार से हुआ मालूम,
तरफे नासेह बुरा नहीं होता।
किसको है ज़ौक तलबामी-ए लैक,
जंग बिन कुछ मज़ा नहीं होता।
तुम हमारे किसी तरह न हुए,
वरना दुनिया में क्या नहीं होता।
उसने क्या जाने क्या किया लेकर,
दिल किसी काम का नहीं होता।
इम्तेहान कीजिए मेरा जब तक,
शौके जोर आजमा नहीं होता।
उसने क्या जाने क्या-किया लेकर,
दिल किसी काम का नहीं होता।
एक दुश्मन कि चरख ही नर है,
तुझसे यह ऐ दुआ नहीं होता।
आह तूल अमल है रोजे फुंजू,
अगरचे एक मछुआ नहीं होता।
नारसाई से दम रुके तो रुके,
मैं किसी से खफा नहीं होता।
तुम मेरे पास होते हो गोया,
जब कोई दूसरा नहीं होता।
झूले दिन यार को लिखूं क्योंकर,
हाथ दिल से जुदा नहीं होता।
रहम बर खसम जाब गैर नहूं,
सबका दिल एकसा नहीं होता।
दामन उसका जो है इराज सही,
दश्त आशिक रसा नहीं होता।
चारा दिन सिवाए सब्र न हों,
सो तुम्हारे सिवा नहीं होता।
क्यों सुने गरज मुज्तरब मोमिन,
सनम खातिर खुदा नहीं होता।

(4)

कवि : दाग़

फिरे राह से वो यहां आते-आते,
अज़ल मर रही तू कहां आते-आते।
तुझे याद करने से यह मद्दुआ था,
निकल जाए दम हिचकियां आते-आते।
न जाना कि दुनिया से जाता है कोई,
बहुत देर की मेहरबां आते-आते।
कलेजा मेरे मुहं को आएगा एक दिन,
यू ही लब पे आहो फगां आते-आते।
अभी सिन ही क्या है जो बचां किया हूं,
उन्हें आएगी शोखियां आते-आते।
चले जाते हैं दिल में अरमां ला कहूं,
मकान भर गया मेहमां आते-आते।
नतीजा न निकला थके सब पयामी,

वहां जाते-जाते, यहां आते-आते।
तुम्हारा ही मुश्ताक दीदार होगा,
गया जान से एक जवां आते-आते।
यकीं है कि हो जाए आखिर को सच्ची,
मेरी मुंह में तेरी जबां आते-आते।
बताने के काबिल जो थी बात उनके,
वही रह गई दरम्यां आते-आते।
तेरी आंख फिरते ही कैसा फिरा है,
मेरी राह पर आसमां आते-आते।
किसी ने कुछ उनको उभारा तो होता,
न आवे न आवे यहां आते-आते।
कयामत भी आयी थी हमराह उसके,
मगर रह गई हमएना आते-आते।
हमारे बराबर बना है हमेशा यह दिलबाग सेहरा,
बहार आते-आते, खिजां आते-आते।
नहीं खेल ए दाग यारों से कह दो,
कि आती है उर्दू जबां आते-आते।

(5)

कविः ज़ौक

बक्त पीरी शबाब की बातें,
ऐसी हैं जैसे रूबाब की बातें।
फिर मुझे ले चला उधर देखो,
दिले जाना खराब की बातें।
वाज छोड़ जिक्रे नेयमते खुल्द,
कर शराब व कबाब की बातें।
महजबीन याद हैं कि भूल गए,
वह शबे माहताब की बातें।
हरफ आया जो आबरू पे मेरी,
हैं यह चश्मपुर आब की बातें।
सुनते हैं उसको छेड़ छेड़के हम,
किस मजे से एताब की बातें।
जाम मय मुंह से तो लगा अपने,
छोड़ शरमो हिजाब की बातें।
मुझको रुसवा करेंगी ख्वाब ए दिल,
यह तेरी एजतराब की बातें।
जाओ होता है और भी नुकसान,
सुनके नासेह जनाब की बातें।
किस्सए जुल्फ यार दिल के लिए,
हैं अजब व पेचताब की बातें।
जिक्र क्या जोश इश्क में ए ज़ौक,
हम से हूं मूब व ताब की बातें।

(6)

कवि : बहादुरशाह ज़फ़र

टुकड़े नहीं जिगर के हैं अश्कों के तार में,
यह लाल मोतियों के पिरोये हैं हार में।
कतरे नहीं पसीने के हैं जुल्फे चार में,
दुर्रानी आ गए हैं मुल्के तातार में।
सुरमा नहीं लगा हुआ भिगाने यार पर,
बैठा हूं बेहवाश नशे के उतार में।
हम हुस्ने गन्दुयी पे तेरे होके शेफ्ता,
क्या-क्या जलील रुवार है कुरबो जवार में।
वादे अजफना भी न हुई सोजिशे जिगर,
गरमी है अब तलक मेरे खाके मजार में।
साया में जुल्फ के हैं कहां बनाक,
ताकत कहां है इतनी तेरे खाकसार में।
इस रश्के गुल को अबतो दिया हमने दिल जफर,
कहेंगे हम जबान से यह सौ में, हजार में।

(7)

कविः फ़ैज अहमद फ़ैज़

गुलों में रंग भरे वादे नौ बहार चले,
चले भी आओ कि गुलशन का कारोबार चले।
कफस उदास है यारो सबा से कुछ तो कहो,
कहीं तो बहरे खुदा आज ज़िक्रे यार चले।
कभी तो सुबहो-तेरे कुंज लब से हो आग़ाज़,
कभी तो शब सरे काकुल से मुश्कवार चले
बड़ा है दरद का रिश्ता ये दिल ग़रीब सही,
तुम्हारे नाम से आएंगे गमगुसार चले।

जो हमपे गुज़री सो गुज़री मगर शबे हिजरां,
हमारे अश्क तेरी आंकबत संवार चले।
हजूरे यार हुई दफ्तरे जनूं की तलब,
गिरह में लेके गरीबां का तार-तार चले।
मकागे फैज कोई राह में जंचा ही नहीं,
जो कूएं यार से निकले तो सूएदार चले।

(8)

कवि : फ़िराक गोरखपुरी

हजार जब्त की हद में रहा-रहा न गया,
तराना गमें दौरा सुना-सुना न गया।
बड़े-बड़ों की धरी रह गई अताए बयां,
गमे फ़िराक का किस्सा कहा-कहा न गया।
तमाम खस्तगी व मान्दगी था अंजम हिजर,
जिगर में दरद शबे गम उठा-उठा न गया।
हर एक शेर मेरा दात इन्कशाफ जमाल,
कब उसके रुख से वह घूंघट उठा-उठा न गया।
हमारी शान ग़ज़ल की है बात ही कुछ और,
हमारे रंग में सब से कहा-कहा न गया।

(9)

कवयित्री : परवीन शाकिर

कूबकू फैल गई बात शनासाई की,
उसने खुशबू की तरह मेरी पजीराई की।
कैसे कह दूं कि मुझे छोड़ दिया है उसने,
बात तो सच है मगर बात है रुसवाई की।
वह कहीं भी गया, लौटा तो मेरे पास आया,
बस यही बात है अच्छी मेरे हरजाई की।
तेरा पहलू तेरे दिल की तरह आबाद रहे,
तुझपे गुज़रे न कयामत शने तन्हाई की।
उसने जलती हुई पेशानी पे जब हाथ रखा,
रूह तक आ गयी तासीर मसीहाई की।
अब भी बरसात की रातों में बदन टूटता है,
जाग उठती हैं अजब ख्वाहिशें अंगड़ाई की।

[उर्दू-गुलदस्ता में शामिल सभी
गज़लें श्रीमती त० निशा ने देवनागरी में लिप्यंतरित की हैं]

गज़लों में प्रयुक्त कठिन शब्दावली

1. समर - फल, 2. तख्ते जिगर - जान से प्यारा, 3. अबर - आसमान, 4. चश्म - आंखें, 5. मौहूम - खत्म हो जाना, 6. पामाल - गिरा देना, 7. मौहूम - खत्म हो जाना, 8. शीबह - रात, 9. बेबरगी - बिना बिजली, 10. बरक - बिजली, 11. पैराहन — चिक डलाहुआ, 12. मुश्कबू - खुशबू 13. अजल - मौत, 14. मकदुआ - ख्वाहिश, आरजू उमंग, 15. मुशकबार - खुशबू 16. गमगुसार - दर्द बांटने वाला, 17. सूएदार - फांसी के फंदे पर लटकना, 18. इंकशाफ - किसी चीज का रहस्य खोलना, 19. अश्कों - आंसुओं, 20. मजगाने - पलक, 21. सोजिश - जलन, 22. तासीर - असर, 23. एजतराब - भूचाल आ जाना, 24. तुन्दखू - तेज बिगड़े मिजाज का, 25. ऊदू - दुशमन, 26. जुस्तजू - तलाश, 27. लाफे - बड़ाई करना, 28. मजगां - खुश होना, जाहिर होना,, 29. गमजए - सताने वाला, 30. एग्यार - दुश्मन गैरों, 31. हरफे नासहे - अच्छी बात बताने वाला, 32. नारसाई - पहुंच से परे, 33. शेफ्ता - कुरबान, 34. चश्मपुरअब - रोती हुई आंखे, 35. एताब - सख्ती,

साक्षात्कार

प्रेरणा पुंज

हिन्दी का बेताल : बालशौरि रेड्डी

दक्षिण में हिन्दी की गौरवमयी परम्परा

—प्रताप सिंह

बालशौरि रेड्डी उन अहिन्दी भाषी लेखकों में से हैं जिनका व्यक्तित्व और कृतित्व हिन्दी भाषियों के लिए भी प्रेरणाप्रद रहा है। दक्षिण में मौलिक हिन्दी लेखन की गौरवमयी परम्परा को उन्होंने अपने प्रयासों से सींचा और सम्पन्न बनाया है। साहित्य-रचना-यात्रा में भी बालशौरि रेड्डी ने अपनी मातृभाषा से अधिक समय राष्ट्रभाषा को दिया है। वे दरअसल, दक्षिण और उत्तर भारत की सांकृतिक एकता व साहित्यिक धरोहर के प्रचार-प्रसार का मात्र माध्यम नहीं, बल्कि उसकी एक सही दिशा बन चुके हैं। कन्नड़ लेखक और अनुवादक बी० नारायणन के घर श्री रेड्डी से मुलाकात के दौरान उनके 'चन्दामामा' में प्रवेश से लेकर 'कामिस्क' व 'कम्प्यूटर युग' में आने तक की विकास यात्रा, सामाजिक संरचना और उसमें, भाषा से योगदान पर खुलकर बातचीत हुई।

दक्षिण के इस हिन्दी पण्डित के साथ गंभीर-चर्चा के दौरान 'गपशप' भी हुई और हिन्दी में मौलिक वैज्ञानिक लेखन, हिन्दी पुस्तकों की खरीद, राजभाषा का पद और हिन्दी पठन-पाठन की परम्परा का विलोप होते जाने की चिरैन्तन चिंता और उसके समाधान जैसे अहम मुद्दों पर भी बातचीत हुई। लम्बी बातचीत और साथ में बा० शौ० रेड्डी के काव्य आस्वाद को प्रगट करने वाले उनके अनुवाद कार्य की एक छटा। पहले सवाल-जवाब...

सवाल आप पहले केवल तेलुगु काव्य के अनुवाद कार्य तक सीमित थे। फिर एक दक्षिण भाषी को हिन्दी के लिए जी-जान से जुट जाने का 'बीज-मंत्र' कहां से और कैसे मिला?

जवाब सच कहूं! एक धर्मपरायण दक्षिण-भाषी हिंदी प्रेमी परिवार से ही यह बीज मंत्र मिला कि प्रतिकूल वातावरण में भी लक्ष्य से नहीं भटकना है। तभी लक्ष्य मिलता है।

सवाल यह दक्षिण-भाषी-हिन्दी प्रेमी... धर्मपरायण परिवार क्या दक्षिण कट्टरपंथियों को भूलाकर हिन्दी की सेवा में जुटा?

जवाब यह परिवार तो हिन्दी और दूसरी कई सहधर्मी-भाषाओं की आज भी पूरी लग्न से सेवा कर रहा है। कट्टरपंथियों की धौंसपट्टी हर जगह एक राजनीति है। कोई भी भाषा किसी एक की बपौती नहीं है। कोई भी पत्र-पत्रिका, उपन्यास और यहां तक की सूर-तुलसी-रैदास के सुक्त-वाक्य अथवा भजन या चौपाइयां जब चर्चा में आते हैं और जन-मन में पैठना शुरू करते हैं तो दूसरी भाषा और धर्म की बंदिशें और जंजीरें तक गल जाती हैं। इसलिए एक भाषा दूसरी भाषा की जड़ों में अपनी अस्मिता तलाश कर पाती हैं। इस प्रक्रिया को रोकना नहीं चाहिए उसका निरन्तर विकास होता रहना चाहिए।

सवाल यह आपने कैसे संभव किया या होते देखा?

जवाब मुझे बी० नागीरेड्डी परिवार से इसका बीज-मंत्र मिला था। बी० नागी रेड्डी और चक्रपाणि ने दक्षिण में अपनी भाषा का एक पौधा रोपा। उसके सहोदर-सूत्र अब हर भाषा में हैं। 2 जुलाई 1947 को एक रंगीन पौराणिक विषयक पत्रिका चंदामामा का उदय हुआ। नागीरेड्डी जी की माताजी धर्मपरायण महिला थी। वे अगली पीढ़ी को प्राचीन इतिहास और पौराणिक-वैष्णवी-परम्परा की ज्ञान पूंजी सौंपना चाहती थी। 'चंदामामा' उसी सपने का साकार बीजरूप है।

सवाल "चंदामामा" पत्रिका के दफ्तर में आपका प्रवेश कब हुआ? आप तो मद्रास के किसी प्रशिक्षण केन्द्र में प्रिंसीपल थे। सम्पादक बनने की कब सूझी?

जवाब अचानक ऐसा कुछ नहीं हुआ। नागी रेड्डी जी ने ही बुलावा भेजा था। यह 1966 की बात है। मेरे पास 'मद्रास हिंदी ट्रेनिंग कालेज' में उनका पहले-पहल फोन आया था। उस समय मैं इस पत्रिका ('चन्दामामा' हिन्दी) का सम्पादक जरूर बन गया। परन्तु वातावरण प्रतिकूल था।

सवाल यानी हिंदी के पक्ष में माहौल नहीं था?

जवाब उन दिनों हिन्दी के पक्ष में वातावरण नहीं बना था। लेकिन मन में तय कर चुका था। संकल्प बना लिया और फिर मैं तेलुगु में रचना करना छोड़, हिन्दी की जमीन पर उतर आया। वह भी मुझे मेरी अपनी लगने लगी। लेकिन मैं इस मोर्चे पर खुद को

बहुत ही अकेला महसूस करता था। सात-सात दिन तक उधर हिन्दी का लोग, हिन्दी भाषी देखने को नहीं मिलते थे। धीरे-धीरे वातावरण विकसित किया।

सवाल "चंदामामा" प्राचीन संस्कृति का द्योतक या अगुवा बनने की बजाय रहस्य-रोमांच और वेताल-पच्चीसी की सचित्र कथाओं में क्यों सिमट गया?

जवाब 'चंदामामा' के संबंध में यह धारणा उचित नहीं जान पड़ती। हमने माना 'वेताल-पच्चीसी' और उसके बाद 'वेताल कथा' पूरी छापी। लेकिन यह जादू-टोने या रहस्य-रोमांच की बाल पत्रिका कतई नहीं है। न ही कोरी व्यावसायिकता को अपनाते जाना हमारा उद्देश्य है। यह हमेशा एक शिक्षाप्रद नैतिक-पाठ (सबक) देने वाली पत्रिका भी रही है।

सवाल कुछ लोगों ने इसे नई बोतल में पुरानी शराब की भी संज्ञा दी?

जवाब कह लेने दीजिए। दोष देखने और समझने में भी है। मसलन, वेताल कथाओं को ही पढ़ लीजिए। उनका उद्देश्य भूत-प्रेत दर्शाने जैसा कुछ नहीं है। कथा नायक राजन के माध्यम से यह दर्शाना है कि—समाज में रिश्वतखोर शराबी, हत्यारे सुखी हैं और देश प्रेमी, न्यायी, ईमानदार या बलिदान की भावना जीने वाले दर-दर भटक रहे हैं।

सवाल: ये सब पहले से होता आया है... यही न। और राजन भी बता रहा है आज भी वैसा ही हो रहा है...।

जवाब: अरे भई, जिन्होंने बापू जी का नाम भुनाया, आचरण-कर्म वैसा नहीं, वहीं राजा बन बैठे। आप सोचिए न। ऐसा क्यों? आज धूर्त लोग सुखी हैं। लेकिन 'वेताल कथा' उनकी पोल खोलती है। लोग इस बात को समझे बिना ही आक्षेप लगा देते हैं।

सवाल: आरोप-आक्षेप तो 'चंदामामा' पर और भी लगाये थे लोगों ने...

जवाब: हां, चंदामामा पर यह आरोप लगा था कि वह बच्चों के चरित्र को बिगाड़ रहा है। हमारे इस रंगीन बाल-पत्र में भी विज्ञापन आते हैं। पर हम विज्ञापन तक नहीं छापते हैं। जबकि कौन पत्र-पत्रिका विज्ञापन की बाट नहीं जोहते हैं। बता दीजिए। क्या नहीं होता है विज्ञापन में उसकी भाषा में और नंगी औरत की तसवीरें छापते हैं उसके साथ। उससे कौन सा चरित्र-निर्माण होता है। पत्र पत्रिका की सामग्री के साथ वह भी पाठक के मस्तिष्क पर अपनी छाप छोड़ता है।

सवाल: ओर ये राक्षसों की कहानियां शंकर के चित्रों के साथ... हर अंक में?

जवाब: राक्षस केवल प्रतीक है। राक्षस (गुणों) पर आरोप हैं। आज के विज्ञान-सम्मत युग में इस बात को, हम (बड़े और बच्चे तक) बिना तर्क बुद्धि के उसे स्वीकार नहीं करते हैं। जबकि सब जानते हैं कि मनुष्य के भीतर एक 'रजो' गुण भी है—तीन प्रमुख गुणों में। वही 'रजो' मानस के भीतर का राक्षस हैं।

सवाल: लेकिन बच्चों को इस 'रजो' गुण का पता कहां चल पाता है? उनके दिमाग में तो कागज और अक्षरों में छिपा बैठा राक्षस ही उतरता है। उनकी जिज्ञासा सिर्फ-कौतुक में बदलती है। इस तरह और वे तृप्त होते हैं या उनकी अतृप्ति बढ़ती है?

जवाब: बच्चों की जिज्ञासा की तृप्ति के लिए हम पौराणिक रचनाएं देते हैं। बच्चे ही हमारे पाठक हैं। उनके लिए केवल 'वेताल-कथा' नहीं हम अपने प्राचीन साहित्य के आधारभूत अंग 'रामायण' और 'महाभारत' को भी परम्परा के रूप में 'चंदामामा' में देते हैं। हम उनके पौराणिक संदर्भों के साथ-साथ जातक कथाओं को भी नए रूप में सचित्र छाप रहे हैं।

सवाल: ये पौराणिक संदर्भ.. पुराने विश्वास क्या नई आस्था को जन्म देते हैं?

जवाब: और जो भी हो, ये कथाएं/वार्ताएं और उनके सदर्भ हमें अंधविश्वासी नहीं बनाते हैं। बुद्ध का पुनर्जन्म पर विश्वास रहा है। हमारे पास जो परम्परा की पूंजी है वह अनन्त है...! सातवाहन के दरबारी कवि गुणाढ्य रचित 'कथा सरित सागर' और बृहत् कथा जो पौराणिक रूप में रची गई। उन सबका अपना संदर्भ है.... गहरा मतलब है। उसको सरल रूप में पठनीय और रोचक बनाकर देना ही लक्ष्य है हमारा।

सवाल: इसके अलावा कविता, लेख और इतिहास भी तो 'चंदामामा' के अभिन्न अंग थे। उनका प्रकाशन बंद क्यों करना पड़ा?

जवाब: 'चंदामामा' पहले बहुविधाओं वाली पत्रिका थी। इसके आरम्भ से (1947) आजादी मिलने के बाद तक कथा/वार्ता के अलावा भारतवर्ष का इतिहास, लेख, कविताएं भी 'चंदामामा' में दी हैं। 15—20 साल पहले तक महापुरूषों की जीवनी भी छापी हैं। अब यह संभव नही है। अब 'चंदामामा' में स्थायित्वा आ चुका है। जहां तक कविताएं छापना बंद करने की बात है। उसका कारण है। कविताओं का बारह-तेरह भाषाओं में रूपांतरण करने में कठिनाई हुई। इसलिए कविताओं का प्रकाशन रोकना पड़ा। कविताओं का अभाव ज़रूर खटका होगा पाठकों को। लेकिन हमने मूल-मंत्र नहीं छोड़ा। 'चंदामामा' अब भी लोक कथाओं के माध्यम से भारतीय जन-जीवन के 'आदर्श' और 'सद-आचरण' की प्रेरणा ही देता है।

सवाल: इस समय तक 'चंदामामा' कितनी भाषाओं की पूंजी बन चुका है? इसकी लोकप्रियता तो बेहिसाब है— लेकिन सबसे अधिक किस भाषा में चंदामामा पढ़ा जाता है या बिकता है? क्या इसके नवीनतम प्रकाशन भी लोकप्रिय हुए?

जवाब: चंदामामा को चहुं ओर से अगाध स्नेह मिला है। अपने नवीनतम संस्कृत और पंजाबी में प्रकाशित 'चंदामामा' के साथ हम इसको अब तक 14 भाषाओं में प्रकाशित करने में सफल हुएं हैं। तेलुगु में सबसे पहले प्रकाशित होने वाला 'चंदामामा' सबसे ज्यादा साख अब हिन्दी में बनाए हुए है। हिन्दी वाला चंदामामा ही सबसे अधिक बिकता है। हिन्दी के बाद चंदामामा मराठी, तेलुगु, उड़िया, असमिया और कन्नड़ में भी बड़ी रूचि के साथ पढ़ा जाता है।

सवाल: क्या बाल पत्रिकाओं की बाढ़ और विदेशी-कामिक्स की भेड़-चाल ने 'चंदामामा' को प्रभावित नहीं किया? आपकी नजर में हमारे कामिक्स या एनीमेशन (भारतीय कामिक्स) भी रचनात्मक हो सकते हैं। केवल विदेशी कामिक्स की झूठन छापना क्या लाभप्रद होगा?

जवाब: पहली बात तो यह कि लोग 'चंदामामा' पर ज्यादा लट्टू हैं। एक-एक प्रसंग सुनाता हूं। मैं नागपुर सेवड़े जी के घर गया था एक बार।

वहां एक बुजुर्ग एक दम बूढ़ा आदमी चंदामामा पढ़ रहा था। पूछा उससे कब-कब आप पढ़ते हो। भला आदमी बोला-नाती पोते स्कूल गए हैं उनके स्कूली किताबों के दराज से निकालर रोज ही पढ़ता हूं जब वे स्कूल चले जाते हैं। जहां तक दूसरी सचित्र बाल पत्रिकाओं की बात है। अच्छा है कि खूब निकल रही हैं। लेकिन 'चंदामामा' पर कोई असर नहीं पड़ा है। 'चंदामामा' को बच्चे ही नहीं युवक और प्रौढ़ भी पढ़ते हैं। जबकि दूसरी बाल पत्रिकाओं के साथ ऐसा नहीं है।.. रहे 'कामिक्स' खासकर विदेशी कामिक्स बच्चों को वह सब नहीं पढ़ाना चाहिए। उनसे हिल नहीं होगा।

सवालः टी॰ वी॰ पर 'स्पाइडर मेन' 'बैटमैन', सुपार ब्याय' भी तो बच्चे देखतें रहे हैं....?

जवाबः यू तो 'सुपरमेन' के अधिकार भी हमारे पास भी हैं।

सवालः और ऐतिहासिक-कामिक्स 'अमर-चित्रकथा' आदि इनके बारे में क्या राय है?

जवाबः अमरचित्र कथा या 'पौराणिक कथाओं वाले कामिक्स' खरीदना आसान नहीं है। ये भी हिन्दी की पुस्तकों की तरह ही मंहगें हैं। सब बच्चे उन्हें कहां खरीद पाएगें। केवल इंडियन बुक हाउस ने जरूर महत्वपूर्ण काम किया है। उनके लिए **अनन्त पै** ने ऐतिहासिक कामिक्स तैयार किए हैं। वे ही हमारी मौलिक उपलब्धि और निधि हैं।

सवालः इस पत्रिका और पुस्तक-प्रकाशन जगत में और क्या अनुभव हुए? क्या हिन्दी के लिए होते आ रहे सम्मेलनों और हिन्दी लेखकों से अपेक्षित सहयोग मिला?

जवाबः हिन्दी के विकास में सभी मददगार साबित हुए। हिन्दी लेखकों का तो यह बड़ा दायित्व रहा है जिसे उन्होंने निभाया है। पर उतना हो नहीं पाया...।

सवालः हिन्दी लेखकों से अपेक्षाएं?

जवाबः वे हिन्दी को ऐसा वैज्ञानिक साहित्य दें जो सबकी समझ में आने वाला हो। हिन्दी में मौलिक काम आज भी अपेक्षित है। पर संकट प्रकाशन जगत और मंहगे कागज व छपाई ने भी खड़ा किया है।

सवालः क्या हिन्दी की पुस्तकें पाठक खरीद नहीं पा रहे हैं? जो मुद्रित हुआ है ज्यादा गरिष्ठ सामग्री है?

जवाबः मैं लेखक बाद में, हिन्दी का पाठक पहले हूं। मैं हिन्दी के गौरव ग्रन्थ पढ़ना चाहता हूँ। लेकिन ज्यादातर पाठक यानी हम लोग भी हिन्दी के किसी बड़े लेखक, किसी बड़े कवि में गहरी रूचि रखते हुए भी उनकी रची पुस्तकों से (किताबें मंहगी होने के कारण) दूर होते चले जाते हैं। बाकी भाषाओं की पुस्तकों की खरीद भी सबके लिए संभव नहीं है।

सवालः लेकिन इसके लिए लेखक जिम्मेदार नहीं?

जवाबः वही, मैं बता रहा हूँ। आज अन्य भाषाओं में पचास-साठ रुपए से लेकर सौ रुपए तक उपन्यास मिल जाता है। मराठी और तेलुगू भाषा के फिक्शन इसका उदाहरण हैं। पर हिन्दी में ऐसा संभव ही नहीं है। बड़े लेखक / उपन्यासकार बड़ी कीमत के साथ पाठकों तक पहुंचना चाहते हैं। लिहाजा वे लाइब्रेरियों तक ही पहुंचते हैं। बाद में पेपर बैक के जरिए सस्ते संस्करणों को पाठकों के लिए परोसा जाता है। तब तक जिज्ञासा ही विदीर्ण हो चुकी होती है। हिन्दी प्रकाशक भी पाठकों पर यह ज्यादती करते हैं।

सवालः यानी प्रकाशक कहीं ज्यादा जिम्मेदार हैं?

जवाबः हिन्दी के प्रकाशक भी खुद ही अपनी पुस्तकों का एक बड़ा पाठक वर्ग तैयार करने के नुसके ढूंढते रहते हैं। लेकिन उसी पाठक-वर्ग को वे हमेशा झांसे में रखते हैं जैसे अपने लेखकों को भी रखते हैं। रचनावलियों, अभिनन्दन ग्रंथों से कुछ मुक्ति मिलती है तो प्रिय-लेखकों की चर्चित कहानियां-किसे धड़ाधड़ छपने शुरू हो जाते हैं। "न्यू अराइवल्स' के नाम पर फिर वही मोटी-महंगी पोथियां शोभायमान हो जाती हैं।

सवालः लेकिन पाठक तो सब जानता-समझता है। उसे झांसा देना आसान नहीं है।

जवाबः हिन्दी के कई नामी प्रकाशक पुस्तकों को शोरूम की चीज समझते हैं। वे दिग्गज और चर्चित कलाकारों-लेखकों को मोटी जिल्द में बेचते हैं। पर वे पाठकों से वंचित रहते हैं। एक उदाहरण ही काफी होगा।

"**बच्चन-ग्रंथावली**" का दाम शुरू में ही 900 रुपए है। कितने पाठक खरीद सकेंगे। जिसके गीत जन-जन तक पहुंच चुके हैं—उसके 'मानस' तक पहुंचने से पहले ही प्रकाशक ने मनचाही दीवारें खड़ी कर दी हैं। लेखक और पाठक के बीच की यह दूरी अलांघ्य है। उसे कौन पाटेगा? यही हाल, दूसरे चर्चित लेखकों के सम्पूर्ण-वाङ्मय का है। ये लोग भी हिन्दी को राजभाषा और फिर राष्ट्रभाषा के पद पर देखने दिखाने का संकल्प लेते हैं। लेकिन इस संकल्प को चुपचाप काम करते रहने वाले लेखक—सम्पादक ही पूरा करते हैं-चाहे वे कहीं भी हो। वे ही अपनी भाषा की रीढ़ हैं। सबमें वह भावना नहीं है।

सवालः लेखक और पाठक के बीच की दूरी पाटने का कोई रास्ता तो जरूर होगा?

जवाबः एक उदाहरण इसके लिए भी देना चाहूंगा। रास्ता है। बशर्ते उसे अपनाएं। हमें **आंध्र अकादमी** से सबक लेना चाहिए। जो दो या तीन रुपए में ही अपनी भाषा के बड़े-से-बड़े लेखक की पुस्तकें उपलब्ध कराती है। 900 या 600 या 300 रुपए की पोथियों का अम्बार लगाने की महाजनी परम्परा वहां नहीं है। **मेरे मन में हिन्दी को लेकर यह दर्द है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा है और इतनी महत्वपूर्ण भाषा की पुस्तकें सस्ते में सर्वत्र उपलब्ध नहीं हैं।**

वहां के लोग

पुस्तक का नामः वहां के लोग—संपादक डा॰ हरिवंश अनेजा, प्रकाशकः— विद्या पुस्तक सदन, बी-887 चित्रकूट एनक्लेव, अम्बेडकर मार्ग, नई दिल्ली-93, —मूल्य-70-00

अनुवाद वह कर्म है जो हमें विभिन्न क्षेत्र की भाषा एवं संस्कृति का रसास्वादन कराती है। उसमें भी अगर विभिन्न भाषा का एक ही भाषा में एक पुस्तकाकार में रसास्वादन हो तो कहना ही क्या है।

"वहां के लोग" में संपादक ने चार विभिन्न भाषा (पंजाबी, उर्दू के डोगरी एवं कश्मीरी) का अनुवाद कराकर हमें उस क्षेत्र की भाषा एवं संस्कृति से परिचय कराया है।

कहानियों में अंतिम पड़ाव (ए॰ हमीद) में शहर और गांव के प्यार को तुलनात्मक रूप से दर्शाया गया है। अजान (महेन्द्र सिंह सरना) साम्प्रदायिकता की मार खाती हुई अंततोगत्वा मस्जिद में अजान शुरू करवा ही देता है। आईना (अमीन कालीन) एक वृद्ध को छायाचित्र से प्रेम की कहानी है। इक्कीसवीं सदी (गुरूबचन सिंह मुल्लर) शहरी जीवन को रूप रेखा है। कविता का अंत (नरेन्द्र खजूरिया) पत्नी द्वारा पति को पथ प्रदर्शन करती हुई पति की एक याददास्त है, जिसे वह अपने पिता के जिद पर भी नहीं छोड़ता है। कुछ रेखाएं: कुछ बिन्दु (शंकर रैना) एक डॉक्टर के दर्द की कहानी है जो हमेशा मरीज के लिए झूठ तो बोलता है, लेकिन वह झूठ सत्य में तफसील हो जाता है। कैंसर (ओ॰पी॰शर्मा) मद्यपान निषेध की दर्द भरी कहानी है। घौंसला (भगवन्त कौर) आधुनिकता एक जबर्दस्त मार है जहां पति—पत्नी में प्यार तो है लेकिन पैसे की मार ने पति को दिगभ्रमित कर दिया, तो पत्नी अपना रास्ता ही बदल लेती है। और दोनों के प्यार में पैसा कांटा बनकर चुभता रहता है। चित्रकार (रामकुमार अबरोला) कला के प्रति समर्पण है जिसमें कलाकार को कला से प्रेम है तो कलाकार की कलाकार पत्नी को कला और पति दोनों से प्यार है। लेकिन पति के प्यार के लिए वह कला को ठुकरा देती है और कला प्रेमी पति कला और पत्नी में कला को ही श्रेष्ठ स्थान देता है। छुनिया (नगहत रिजवी) एक ओछी जात की प्यार की दास्तान है। टूटा हुआ आदंमी (अनवरी अलीगी) बेरोजगार के आलम में पत्नी को व्यवसाय के रूप में स्वीकारती हुई इस मुकाम तक पहुंच जाती है कि पति को वह अपने ग्राहक के सामने भाई बनाने से भी नहीं झिझकती है। तीसरा अखण्ड पाठ (रामनाथ शास्त्री) धर्मान्धता और धनाढ़यता की एक फीकी कहानी है। दांव पर कौन लगा (बंसी निर्दोष) में रोचकता तो है लेकिन अंत में पाठक को निराशा ही हाथ लगती है। नाम बड़ा दर्शन छोटे (भगवन्त कौर) के माध्यम से स्थापित साहित्यकारों का जो बखिया उघाड़ा गया है। वह काबिले तारीफ है। क्योंकि साहित्यकार स्थापित हो जाने के बाद अपने उत्तरदायित्व को नजरअंदाज कर देते हैं। परछाई (नूरशाह) में कुरूपता का विभत्स रूप दिखाया गया है। पार्वती (खालिदा मीना) में विधवा की चरितार्थता को दर्शाया गया है। वह दिन यह दिन (अजीत सिंह) में अपने दर्द से दूसरे के दर्द को समझने की झलक है। वहां के लोग (शाहवाज सिधीकी) में हिन्दुस्तान की छवि विदेशों में दर्शाया गया है। लेकिन जब विदेश की नायिका हिन्दुस्तान की उस छवि का दर्शन करने आती है तो यहां का नजारा कुछ और होता है जिससे वह पलभर भी हिन्दुस्तान में नहीं रहना चाहती है।

अनूदित कहानियों में अनुवादक का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सुरजीत उर्दू, पंजाबी, कश्मीरी एवं डोगरी से हिन्दी से सिद्धहस्त अनुवादक है। उन्होंने कश्मीरी एवं डोगरी का प्रतिनिधित्व किया है। सुश्री कान्ता आनंद पंजाबी से हिन्दी में अनुवाद के लिए विख्यात है। इस पुस्तक में पंजाबी कहानियों को अनूदित करने का श्रेय उन्हीं को जाता है। संपादक हरिवंश अनेजा स्वयं उर्दू कहानियों का प्रतिनिधित्व किये हैं।

—दिलीप कुमार चौधरी

सोते जागते : एक काव्य समीक्षा

समीक्षक्र पुस्तक: **'सोते-जागते'**, निरंकार नारायन सक्सेना, प्र॰ शिवा स्वाति प्रकाशन, पृ॰ 135, मूल्य 48 रुपये।

श्री अरविंद कवि को युगद्रष्टा और कविता को यथार्थ का 'मन्त्र' मानते थे। उनके अनुसार मन्त्र शक्ति का शब्द है जो हमारे अस्तित्व की गुप्त गहराइयों से उत्पन्न होता है जिस पर मानसिक की अपेक्षा गहन चेतना का चिंतन होता है जो हृदय से अनुप्राणित होती है।" जब कविता 'मन्त्र' बन जाती है तो वह काल ओर स्थान की सीमा लांघ अमरता के उच्चतम शिखर छूने लगती है। जाहिर है ऐसी कविता के प्रेरणा का कोई सामान्य आधार नहीं होता बल्कि ऐसी कविता उच्चतर दिव्य स्रोत आध्यात्मिक चेतना से आती है। इस स्तर पर अतिभौतिक में सर्वव्यापक का गुण आ जाता है। दूसरे शब्दों में जब कवि अति मानसिक स्थिति से काव्य को अभिव्यक्ति देता है तब उसकी रचना में परम सत्य प्रकट होता है

आज की कविता अरविंद के काव्य सिद्धान्त पर खरी उतरने वाली कविता नहीं, आज के परिवेश और परिस्थितियों पर आधारित कविता है वह किसी अतिमानसिकता का दम्भ नहीं भरती, आम आदमी के दुःख दर्द जीवन-मूल्यों के विघटन और विसंगतियों को रेखांकित करती है। वा सामाजिक सरोकारों को स्वर देती है, भ्रष्ट व्यवस्था की भयावह प्रवृत्तियों के

प्रति सावधानी बरती उसके विरोध में खड़ी होती है। आज इन्सान सहजता और स्वाभाविकता के निर्मल उपवन छोड़ तथाकथित उन्नत सभ्यता की बनावटी और बंजर बस्तियों का बशिंदा बनता जा रहा है, विज्ञान की प्रगति ने भौगोलिक धरातल पर परस्पर दूरी को भले ही समाप्त कर दिया हो किन्तु भौतिक उन्नति की होड़ में हृदयों के पाट को चौड़ा कर दिया है, अपने-अपने दायरों में बन्द इन्सान को इन्सान की खबर नहीं आती। जंगल और खेत ऊंची-ऊंची इमारतों और पथरीले मकानों में तबदील हो रहे हैं पर विडंबना है कि अधिकांश जन ऐसे हैं। जिनके सिर पर न छत है न बदन ढकने को कपड़े हैं और न पेट भरने को पर्याप्त अन्न।

तनाव, बिखराव, अलगाव, अपराध, हिंसा, आतंक और उग्रवाद मन-प्राण और आस्था के हन्ता जगह-जगह होते बम-विस्फोट और सबसे अधिक, सिर पर सतत लटकती सर्व-विनाशक परमाणु हथियारों की तलवार, बचाव और सुरक्षा की कहीं कोई आशा नजर नहीं आती, इस माहौल में कहीं कोई नेता या पैगम्बर नहीं जो सब को एक केन्द्र में रख सके। ऐसे में आज की कविता आशा बंधाती है। आज भी कविता की नजर पूरे हालात पर है। वह रोगी की नब्ज देख कर निदान बता सकती है उपचार सुझा सकती है यहीं उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है यह दूसरी बात है कि रोगी में इतनी अनास्था भर गई है कि वह उस उपचार का लाभ उठाकर चंगा नहीं होना चाहता।

श्री निरंकार नारायण सक्सेना के प्रस्तुत समीक्ष्य काव्य संग्रह में न्यूनाधिक रूप में जीवन की विसंगतियों पर अधिक लाग लपेट किये बिना संप्रेषणीय शब्दों में चोट की गई है। इस संग्रह में कविताओं को अन्तर्विवेक', 'अन्तर्मन', 'अन्तदृष्टि' एवं इत्यादि शीर्षकों में विभक्त किया गया है। 'अन्तर्विवेक' की कविताओं में कवि ने मूल्यहीनता, चाटूकारिता और नेताओं की स्वार्थी प्रवृति को उजागर किया है। जनता ने नेताओं पर बार-बार विश्वास किया और उन्हें अपना कर्णधार बनाया किन्तु बदले में उन्होंने क्या किया? कवि 'सन् सतत्तर के नेता' में कहता है जहाज के खेने वाले। कैप्टेन और कमांडर/इतने नासमझ और लापरवाह हो जायेंगे कि/सफर करने वाले मुसाफिर के लिए/उसकी मंजिल तो क्या/किनारे से लग जाने के लाले पड़ जायेंगे।

कवि देश में फैले भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक तनाव और देश में आये बिखराव से चिंतित हैं उसने 'सब लैटिंग', 'जहाज' 'शीर्षक कविताओं में प्रतीकों के माध्यम से अपनी बात कहने का प्रयास किया है, जहाज बनाने पर करोड़ों का खर्च आया है। बेशुमार मजदूरों ने अपना पसीना बहाया है। अपनी उम्मीदों का जनाजा देखने के लिए नहीं। जहाज उनका वाहन है। जो उन्हें इक्कीसवीं सदी में ले जायेगा। कहीं आपस के झगड़े में उसे। पानी में न डुबो देना। 'दंगा करने वालों' को कवि चेतावनी देते हुए कहता है" दंगा करने वाले जागो। कहीं ऐसा न हो। तुम्हारे गुनाहों का बोझ। तुम्हें अपने आप पर शर्मिन्दा कर दे। छोड़ो सब दुश्कर्म। इमान से जितनी मिली। जैसी मिले। अपने देश में मिले। खुशी-खुशी खाओ। अच्छे बन जाओ। 'घर का निर्माण करना कठिन होता है और उसे उजाड़ देना आसान। बुजुर्गों द्वारा अनेकानेक बलिदानों द्वारा निर्मित इस देश रूपी घर को सहेज कर रखना। एक भारी जिम्मेदारी है इसलिये आपस में प्रेम रखना। 'वैसे आदमी टूटकर भी बड़ी से बड़ी विपदाएं सह जाता है इसलिए नहीं कि फौलाद का बना है। बल्कि इसलिए कि वह किसी विश्वास पर टि । हुआ है। वह विश्वास उसे गिरने नहीं देता।

कवि देश के मजदूर के लिए भी चिंतित है जो तुम्हारी आलीशान इमारत को रंग-रोगन से चमका रहा है। बाजीगर नहीं। मजदूर है जो अपनी रोटी कमा रहा है। सूरज छिपने पर तुम उसे पूरी पागार देना। 'खाड़ी युद्ध) में कवि ने युद्ध की भयावहता को उजागर करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आधिपत्य की लालसा का खुलासा करते हुए कहा है 'जंग शुरू हो गई है। मानवता एक बार फिर। अंधी हो गई है। तेल हथियाने की भावना। जला डालेगी। राष्ट्रीय संग्रहालयों को। गिरजे, मन्दिर, मस्जिद, बुतखानों को।

मानव स्थिति को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेना और उससे अपने को बाहर रखकर उसका वर्णन या आलेख कर देना रचनाधर्मिता की शर्त को पूरा नहीं करता। अतिसरलीकरण से कविता के सपाट होने का खतरा रहता है। श्री सक्सेना की अधिकांश कविताएं केवल बयान भर बनकर रह गई हैं। 'देश के दरिद्र' की कुछ पंक्तियां देखिए—'चन्द्रशेखर चले जायेंगे। राजीव आएं न आएं। कलंक बहुतों के घुल जायेंगे। बी०पी० मंडल। अटलजी की घोषणा। अडवाणी की जन्मभूमि। रामराज्य के सपने। कितनों ने देखे हैं। कितने देखते रह जायेंगे।

समकालीन कविता अरविंद का 'मंत्र' भले न बन सकी हो, क्योंकि वैसी कविता का उत्सव कभी-कभी किसी किसी विरल कृति में ही देखने को मिलता है, निराला की 'राम की शक्ति पूजा' अन्तः प्रकाश का प्रस्फुटन है जो कभी ही घटित होता है, किन्तु उसकी रचनाधर्मिता और ओजस्विता ने मनुष्य के प्रत्येक सरोकार को उकेरा है। हर युग में कविता किसी न किसी रूप में स्वयं को मुक्त करती चलती है किन्तु इसका यह अर्थ भी नहीं कि काव्य तत्व से विहीन पंक्तियां कविता की विरादरी में शामिल कर ली जाये। अरविंद का तो यहां तक कहना है कि संसार के महानतम कवियों की कविताओं में केवल कुछ ही पंक्तियां श्रेष्ठता की सीमा तक पहुंच पाती हैं। यहां तक कि शेक्सपीयर जैसे प्रसिद्ध कवि में अत्यन्त श्रेष्ठ अंश तुलनात्मक रूप से दुर्लभ हैं।" वैसे भी हृदय में उठने वाला हर भाव कविता नहीं होता। कवित्व तक पहुंचने के लिए भाव को संवेदनशीलता की अग्निगर्भा गुफा से गुजरना होता है जिसके लिए खतरा उठाने की क्षमता एक पूर्व शर्त है। 'तंत्र' से 'मंत्र' तक की यात्रा का यहीं सोपान प्रत्येक कवि का आह्वान करता है।

—सन्तोष खन्ना

तटीय क्षेत्रों में नियोजन व प्रबंध

पुस्तक का नाम: दक्षिण एशियाई महासागर के तटीय क्षेत्रों में नियोजन व प्रबंध हेतु क्षमता निर्माण,

लेखक: श्री जे० वी० आर० प्रसाद राव तथा सुश्री राकेश शर्मा,

प्रकाशक: महासागर विकास विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली।

दक्षिण एशियाई के तटीय क्षेत्रों में नियोजन प्रबंध हेतु क्षमता निर्माण, राष्ट्रीय रिपोर्ट— भारत, नामक पुस्तक में देश के तटीय पर्यावरण, उसके

संसाधनों, उपयोग प्रक्रियाओं और संस्थागत संरचना का सविस्तार वर्णन किया गया है। वर्तमान में तटीय पर्यावरण का अत्यधिक सामयिक महत्व है। इसके साथ ही पुस्तक में देश के तटीय पर्यावरण में क्षमता-निर्माण सहित संसाधन प्रबंध के विषयों को भी सम्मिलित किया गया है।

दक्षिण एशियाई समुद्री क्षेत्र में 5 देश अर्थात्, भारत, पाकिस्तान, मालदीव, श्रीलंका तथा बंगला देश आदि हैं जो समरूप इतिहास तथा संस्कृति रखने के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक तथा पर्यावर्णीय स्थिति में काफी समानता रखते हैं या सभी देश अधिक जनसंख्या या सघन जनसंख्या वाले देश हैं। पांचों देश विकासशील देशों के रूप में माने जाते हैं और अपनी आर्थिक, ग्रामीण आधारित अर्थव्यवस्था को छोड़कर आधुनिक बाजारोन्मुख और औद्योगिक अर्थव्यवस्था को अपनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। इन देशों के विकास के लिए समुद्र के संसाधन तथा तटीय विकास अत्यधिक महत्व रखते हैं।

'तटीय संसाधन' अध्याय के अन्तर्गत तेल और प्राकृतिक गैस आयोग द्वारा तेल अन्वेषण तथा विदोहन की परियोजना के साथ सरकार की उदार नीति के अन्तर्गत निजी क्षेत्र की एजेंसियों को तेल और प्राकृतिक गैस संसाधनों के अन्वेषण तथा विदोहन की अनुमति का उल्लेख मिलता है जिससे देश में तेल के आयात में निश्चित रूप में कमी आएगी। इसी अध्याय में सविस्तार उल्लेख मिलता है कि तटवर्ती क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या सीमित संसाधनों से अपनी जीविका कैसे अर्जित करते हैं। लिहाजा तटीय क्षेत्र और उसके संसाधनों का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में विशेष महत्व है।

"संस्थागत ढांचा" के अन्तर्गत तटीय क्षेत्र के विभिन्न कार्यकलापों की जिम्मेवारियों के आबंटन का अद्वितीय निरूपण किया गया है। साथ ही विज्ञान और प्रोद्योगिकी को प्रोत्साहित करने हेतु सरकार द्वारा चलाई गई विभिन्न परियोजनाओं का भी सजीव विवरण दिया गया है। "आंकड़ा एवं सूचना' में अन्य बातों के अलावा तेल प्रदूषण की समस्या पर विचार किया गया है। तटीय पर्यावरण में क्षमता निर्माण में संयुक्त राज्य अमेरिका के तटीय क्षेत्र के विश्लेषण का उल्लेख मिलता है। कृषि, फसल, मृदा, भूमि उपयोग तथा सूखा भूमि तथा जल संसाधन, भू-विज्ञान तथा जल संसाधन, समुद्री उप ग्रह सूचना सेवा, समुद्री यंत्रों, ऊर्जा, समुद्री ऊर्जा, त्वरीय ऊर्जा और वायु ऊर्जा की विस्तृत सूचना दी गई है।

कुल मिलाकर यदि इस पुस्तक को एक 'दुर्लभ कृति' की संज्ञा दी जाए तो यह अतिश्योक्ति न होगा। यह पुस्तक वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषय की एक अनुपम और अद्भुत उपलब्धि है। ऐसे गहन और गम्भीर विषय को हिन्दी में प्रस्तुत करना अपने आप में ही एक चुनौती है जिसे लेखक ने बड़ी सहजता और सरलता से प्रस्तुत किया है। पुस्तक विद्यार्थियों, शोध कर्ताओं, समाजशास्त्रियों तथा भारत के तटीय क्षेत्रों में दिलचस्पी रखने वाले बुद्धिजीवियों के लिए मार्गदर्शक तथा संग्रहणीय ग्रंथ के रूप में सिद्ध होगी। इस अनूठी तथा सूचनाप्रद कृति को हिंदी में प्रस्तुत करने के लिए पुस्तक के लेखक श्री जे०वी०आर० प्रसाद तथा कुमारी राकेश शर्मा निश्चय ही बधाई के पात्र हैं।

—सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा

कभी आसमान साफ होगा (कहानी संग्रह)

पुस्तक का नामः कभी आसमान साफ होगा (कहानी संग्रह), लेखिकाः श्रीमती बाला शर्मा, प्रकाशकः बातायन प्रकाशक, 73 बनारसी दास स्टेट लखनऊ रोड, दिल्ली-110054, मूल्यः 42/रु० (बयालीस रुपए मात्र)

श्रीमती बाला शर्मा द्वारा रचित 'कभी आसमान साफ होगा" नामक प्रस्तुत लघु कहानी संग्रह में विभिन्न शीर्षकों पर आधारित बारह कहानियां हैं। इन लघु कहानियों में समाज के निर्धन, दीनहीन, कमजोर परिवारों की कथा-व्यथा का चित्रण है। श्रीमती शर्मा ने अपनी रचनाओं में सामाजिक समस्याओं पर सजीव चित्रण करने का अधक प्रयास किया है। 'विकल्प नहीं' कहानी में बताया गया है कि समाज के मुट्ठी भर जमींदार, इज्जतदार तथा धर्म के ठेकेदार लोग किस तरह से समाज की कमजोर तथा असहाय अबलाओं पर अत्याचार कर उन्हें अपनी हवस का शिकार बनाते हैं और समाज की पढ़ीलिखी पीढ़ी द्वारा किस प्रकार इन तिरस्कृत अबलाओं को सहारा देकर ऊपर उठाया जाता है।

इसी प्रकार 'मौत का सच' नामक लघु कहानी में समाज में गरीबी के कारण होने वाले बेमेल विवाह और उससे समाज पर पड़ने वाले कुप्रभाव का सजीव चित्रण किया गया है। 'सोन चिरैया' तथा 'कभी आसमान साफ होगा' नामक कहानियों में भी पुरुष वर्ग द्वारा नारी पर किए गए अत्याचार के कारण उसके उत्पीड़न की झलक मिलती है।

इन कहानियों के कथो-कथनो तथा वाक्य गठन में कहीं-कहीं पर अस्पष्टता सी आ गई है और वह तारतम्यता से दूर चली जाती हैं। इससे साधारण पाठकों को कहानी समझने में थोड़ा समय लग सकता है। श्रीमती शर्मा ने स्वयं ही शुरु में दो शब्द लिखते हुए बताया है, "शब्दों के इस जाल में उलझकर यह भूल जाती हूं कि कहानी किसको लेकर लिखी गई है"

कुल मिलाकर कहानियां प्रेरणादायक हैं और पाठकों के मन में गहरी छाप छोड़ देती हैं। इन लघु कथाओं का सृजन कर श्रीमती शर्मा ने हिन्दी कहानी साहित्य में अभिवृद्धि कर उसे समृद्ध किया है। पुस्तक की साज-सज्जा अच्छी बन पड़ी है।

—देवीदत तिवाड़ी,

दोहा रामायण

पुस्तक का नामः दोहा रामायण, लेखकः पद्मश्री डॉ० भरत मिश्र, प्रकाशकः ए० पी० एच० पब्लिशिंग कापोरेशन, 5 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2

राम काव्य की परम्परा बहुत प्राचीन है। वैदिक काल से लेकर आज तक कवियों और लेखकों ने राम कथा का अपने-अपने ढंग से वर्णन किया है।

प्रस्तुत पुस्तक "दोहा रामायण" डॉ० भरत मिश्र की नवीनतम कृति है। इसमें भगवान राम के प्रति समर्पित विनम्र पद्य-प्रयास हैं। साथ ही उनकी

काव्य प्रतिभा का विलक्षण चमत्कार भी है। भगवान राम के सम्पूर्ण जीवन को दोहों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

लेखक ने प्रस्तुत 'दोहा रामायण' में परम्परा का अनुसरण करते हुए गणेश जी की वंदना की गई है।

मंगल मूरति सिद्धि प्रद, श्री गणेश का नाम।

नाम लेत बाधा मिटत, होत सकल शुभ काम।।

उसके बाद शिव वंदना, हनुमान, ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, दुर्गा, सरस्वती, गंगा, भगवान राम, भगवान कृष्ण की स्तुति की गई है।

डॉ॰ मिश्र ने नीति मूलक सिद्धान्तों का भी निरूपण किया है। वृक्ष, संत, नारी, शत्रु, दुःख, मानव जीवन, दुर्जन, अभागा, समय, धन, सतसंगति, परोपकार, आत्मा, मृत्यु, जानवर आदि पर भी अपने विचार दोहों के माध्यम से प्रस्तुत किए हैं।

प्रस्तुत कृति अंध-विश्वास एवं रूढ़ियों से अलग होते हुए सर्व धर्म समभाव का संदेश देती है। जीवन में काम आने वाले तथ्यों का वर्णन बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया है जैसेः—

प्रेम के शत्रु पांच हैं, काम, क्रोध, अज्ञान।

कहत भरत कर जोरि के, लोभ और अभिमान।।

पत्नी उसको मानिए, करे आप से प्यार।

इधर-उधर घूमती रहे, त्यागो ऐसी दार।।

सत्य से बढ़कर धर्म नहीं, लोभ से बढ़ कर कोई पाप।

भरत क्रोध सम शत्रु नहीं ईर्ष्या सम संताप।।

पर्यावरण के शुद्धि करण तथा वृक्ष की महिमा का प्रतिपादन किया गया हैः—

जिनके घर के सामने, हरा-भरा हो बाग।
शुद्ध वायु मिलती उन्हें, रोग जाए सब भाग।।

पर्यावरण पवित्र था, राम चन्द्र के राज।
वृक्ष लगाना नियम था, मानत सकल समाज।।

जानवरों के प्रति लेखक ने मानवीय दृष्टिकोण अपनाने की सलाह दी हैः—

पशु कृतघ्न होते नहीं, कभी न धोखा देत।
जो मिलता खाते वही, कभी न बदला लेत।।

कुत्ता जिसका खाता है, उसका देता साथ।
मानव जिसका खाता है, उसको करे अनाथ।।

भारतीय संस्कृति करुणा, सहयोग, विश्वबन्धुत्व, परोपकार, मैत्री, सत्य, अंहिसा, समन्वय और शान्ति में विश्वास करती है। "दोहा रामायण" द्वारा भारतीय संस्कृति का उद्घोष किया गया है। आशा है पाठक इसे पसन्द करेंगे।

पद्मश्री डॉ॰ भरत मिश्र राजनीति विज्ञान के प्रधानाध्यापक है। बचपन से ही नेत्र हीन है। समाज सेवी, बहुभाषा बिद, सुविख्यात लेखक, ओजस्वी बक्ता तथा साहित्यकार हैं।

—शान्ति कुमार स्याल

नये उद्योगों की स्थापना एवं बीमार उद्योगों का इलाज—क्यों और कैसे?

पुस्तक का नामः नए उद्योगों की स्थापना एवं बीमार उद्योगों का इलाज—क्यों और कैसे?,
लेखकः चन्द्र शेखर झा, प्रकाशकः सिप्रोरैन्डेल पब्लिशर्ज, 9003—9005 विशाल टॉवर, 90 जनकपुरी डिस्ट्रिक सैन्टर, नई दिल्ली—110058, मूल्यः 130 रु॰ (डाक खर्च सहित 145 रूपए)

श्री चन्द्रशेखर झा की प्रस्तुत पुस्तक एवं नवीनतम कृति है जो नए उद्योगों की स्थापना तथा बीमार उद्योगों का इलाज क्यों और कैसे किया जाए के बारे में भरपूर जानकारी देती है।

पुस्तक के दो खण्ड है। प्रथम खण्ड में नए उद्योग लगाने एवं उसके समुचित प्रबंधन के तरीकों पर प्रकाश डाला गया है। दूसरे खण्ड में बीमार उद्योगों एवं उनकी रूग्णता को दूर करने के उपायों का उल्लेख किया गया है। प्रत्येक खण्ड में विभिन्न अध्याय है।

किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण अत्यावश्यक है। औद्योगीकरण के द्वारा ही विकसित देशों का धनी होना तथा वहां के लोगों का जीवन-स्तर ऊंचा उठा है। भारत एक विकास शील देश है। इसके आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण का होना अति आवश्यक है।

उद्योगों की स्थापना से रोजगार के मार्ग खुलते हैं और बेरोजगारों को रोजगार मिलते है। घरेलू उपयोग के लिए विभिन्न सामग्रियों का उत्पादन तथा सुलभ उपलब्धि उद्योगों द्वारा ही संभव है। इससे कृषि, खनिज तथा वन-संपदा से संबंधित कच्चे माल की खपत हेतु बाजार-बनते हैं जो मांग के अभाव में बेकार पड़े रहते हैं।

सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के उद्योग इसलिए बीमार हो जाते है कि उन्हें सही समय पर प्रर्याप्त वित्त उपलब्ध नहीं हो पाता, उनकी प्रौद्योगिकी पुरानी पड़ जाती है। उनके कार्य कलापों में शिथिलता आ जाती है तथा उनका प्रबन्धन अकुशल हो जाता है। ये तभी स्वस्थ होंगे जब संसाधन, तकनीक, कौशल एवं उद्यम के आधार पर उत्पादकता बढ़ाई जाए ताकि आज के प्रतियोगी व्यवस्था में ये अपना अस्तित्व बनाए रख सकें। इस मुद्दों पर भी लेखक ने ध्यान दिया है।

इस पुस्तक में प्रायः सभी तथ्यों एवं जानकारियों को समाहित करने का लेखक द्वारा प्रयास किया गया है जो औद्योगिक प्रशासन के प्रशिक्षणार्थियों की जिज्ञासाओं की पूर्ति कर सके। उद्योग संबंधित विभिन्न प्रश्नों एवं आयामों को सरलता के साथ स्पष्ट किया है। उद्योगीकरण का पूरा लाभ उठाने के लिए छोटे, मझौले एवं बड़े सभी उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए इससे जुड़े महत्वपूर्ण बिन्दुओं जैसे उद्योगों का प्रबन्धन, वित्त एवं तकनीकी की उपलब्धता तथा परियोजनाओं के स्पष्टीकरण एवं मूल्यांकन पर सरल भाषा में प्रकाश डाला गया है।

लेखक का मानना है कि इस पुस्तक का विषय-वस्तु काल्पनिक अर्थशास्त्र नहीं है, न ही समाज के उत्थान हेतु विकास के जटिल आयाम ही है, अपितु यह प्रयास उन लोगों के लिए है जो औद्योगिक परियोजनाओं

की समीक्षा हेतु हर संबंधित पहलुओं का विश्लेषण करते हैं एवं लाभदायी परियोजनाओं के कार्यान्वयन हेतु सतत् प्रयत्नशील है, भले ही उन्हें औद्योगिक एवं वित्तीय विकास हेतु उच्च प्रशिक्षण प्राप्त न हुआ हो।

हिंदी में ऐसी उपयोगी पुस्तक प्रस्तुत करने का श्री झा ने सराहनीय कार्य किया है। वे बधाई के पात्र हैं।

आशा है यह पुस्तक उद्यमियों, विद्यार्थियों एवं जन साधारण तथा अन्य सभी संबद्ध व्यक्तियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

—शान्ति कुमार स्याल

आधुनिक महिला लेखन (कविता)

सम्पादिक : रमणिका गुप्ता, नवलेखन प्रकाशन पृष्ठ सं॰ 22

रमणिका गुप्ता लिखती हैं (प्रस्तावना में), "(घर) (वह) जेल खूंटा बूचड़खाना मालूम पड़ता है तो इससे नारी चेतना के लिये नए पहलू का एहसास होना चाहिये। इस संकलन की कविता के अन्य पक्षों पर चर्चा न कर, मुख्यतया घर को बूचड़खाना समझने वाली नारी की इस नई चेतना पर चर्चा करना श्रेयस्कर होगा।

जब इंदु जैन कहती हैं "गिलहरी किस फुर्ती से/पेड़ पर चढ़ी है/अनार कुतरने/तू कैसे नीचे खड़ी है/गिरे दाने ओकती/...." या ..'क्रोध एक ताकत है/ उसे खोने नहीं दूंगी—मुट्ठी में लेता है जो फूल समझकर/डंक लगता है उसे/तो पहला उसका अपना दृष्टिदोष /तब छद्म की चतुराई को/मुट्ठी मसलन की सजा/..' उसमें एक परिपक्व भोगे हुये यथार्थ को समझकर, आते हुये क्रोध पर नियंत्रण रख जो कहती हैं कि नारी फूल भी है कांटा भी, जो उसे केवल फूल समझकर मसलना चाहता है उसे कांटा चुभाएगी और नारी यदि अपने को केवल फूल ही कहलाना या दिखलाना चाहती है तो मसली जाएगी, उस सबसे सहमत होने में खुशी होती है।

जब प्रेस कुजूर 'बौना संसार' कविता में कहती हैं, "फिर भी उसका बरगद होना/तुम्हें अच्छा नहीं लगता/और तुम उसे/बोन्साई की तरह/ड्राईंग रूम के गमले में/कैद कर देते हो.." और फिर आरोप लगाती हैं, "ओह कितना बौना है यह आदमी/और उसका बौना संसार"; तब भी उनसे सहमत होने में भी खुशी होती है क्योंकि यहां द्वेषपूर्ण सामान्यकरण नहीं है आदमी के भ्रमों को दूर करने का मंगल प्रयास है। इसी तरह शशि सहगल जब 'संतुलन' कविता में आज की पीढ़ी के आदमी में भी वही पुरानी पीढ़ी की ऐठन पाती हैं तब कहती हैं, "..क्या फर्क पड़ता है/पीढ़ियों के बदल जाने से/बाप की ऐठन/गली रस्सी/पड़ी है तुम्हारे सामने/और तुम/आत्मविश्वास के पिरामिड से/सीधे तने हुये/महानता का दम्भ औढ़े/खड़े हो मेरे सामने/..' इसमें एक तो पिरामिड शब्द ने उस आदमी को मात्र मंत्रियों' अर्थात सुरक्षित मृत शरीरों का आवास गृह मानकर करारा व्यंग्य किया है तथा दूसरे उस आदमी से वे तर्क संगत बात कर रही हैं, तो जो किसी भी समझदार को सही लगेंगी/यही भावना मणिकामोहिनी हिंदी की पुत्र के प्रति' कविता में हैं।

जब अनुभूति चतुर्वेदी आदमी से कहती हैं, "तुम मौसम बदल सकते हो/तुम दृश्य बदल सकते हो। तुम मुझे बदल सकते हो। लेकिन क्यों?" तब वे आदमी के व्यवहार से अपनी निराशा ही प्रकट करती हैं और उन्हें उस आदमी पर विश्वास नहीं कि वह यह सब बदलेगा। इस विश्वास का खोना ही विरोध और हिंस्र प्रतिक्रियाओं को जन्म दे सकता है और फिर एक अन्य कविता में वे कहती हैं, "शायद ऐसे ही किसी क्षण में/किसी खरगोश ने किया होगा विद्रोह/.." उनका, शैल प्रियाका, नीरा परमार का तथा अन्य कवयित्रियों का इस तरह आदमी पर विश्वास खोना इतिहास से मेल नहीं खाता अर्थात् भारतेंदु हरिशचंद्र, विवेकानन्द, महात्मा फुले, महात्मा गांधी से लेकर हमारे संविधान निर्माताओं तक अनेकानेक 'मौसम बदलने वाले' आदमियों के सतत प्रयास मिलते हैं। किन्तु पाश्चात्य 'विमेंस लिब' का कुप्रभाव ही है जो ऐसे बीज डालता है, और हमारा दुर्भाग्य कि यंत्र' नार्यस्तु पूज्यन्ते' तथा अर्धनारीश्वर' जैसे आदर्शों) वाले इस देश में अब महिलाएं पुरुषों के खिलाफ युद्ध का डंका बजा रही हैं। किन्तु दुःख की बात, वास्तव में ऐसी कवयित्रियों की सतही सोच है जो भ्रम से ग्रस्त है, शायद इसे फैशन मानती है।

अमरजीत कौर रानी मान, शताब्दी का दर्द में प्रश्न करती हैं—"सीता-बनवास/द्रौपदी चीरहरण/स्टोव से जलना/औरत का ही क्यों/.." एक तो बनवास केवल राम का ही हुआ था, सीता तो अपने प्रेम तथा निष्ठा के कारण साथ गई थीं। चीरहरण या इज्जत का लूटना दलित पुरुषों का भी होता है और आग में जलना भी। यह केवल औरतों का नहीं होता सभी कमजोर लोगों का कुसंस्कृत बर्बरों द्वारा होता है। मोना गुलाटी को सुनिए, "प्रत्येक पुरुष मुझे/बैल नजर आता है/और मैं उसे कोल्हू से बांध/भाग आई हूं" (महाभिनिष्क्रमण, पृष्ठ 4)।

मायाप्रसाद को भ्रम है कि वनस्पति जगत में नर मादा नहीं होते, 'तीसरी कोपल कथा' में वे कहती हैं। "कोपल भी कहीं/मादा या नर होती है?/मां कुछ कहें तो कैसे?/कहना चाहती है वह/नहीं को पल तो कोपल होती है।" मायाप्रसाद को कौन समझाये कि नर और नारी में अन्तर समझे बिना समानता की बात सही रूप से समझ में नहीं आ सकती।

कल्पना सिंह 'स्ट्रीट की लड़कियां' में चीखती हैं—"पर क्यों हमारी तरह ये/ कोई भी तो नहीं कहता/मनुष्य होती हैं ये लड़कियां"/इतना अतिरेक करने से, 5 या 10 को 100 कहने से बात का वजन खत्म हो जाता है। इसी तरह मधु शर्मा औरत? में लिखती हैं— "चौके के पास/झूठे बर्तनों से घिरी/सीली सुलगती औरते.." अपने घर के झूठे बर्तन मांजने से और सीली होकर सुलगने लगती है, सुनकर मुझे तो आश्चर्य होता हैं जब कि आदमी होटलों के झूठे बर्तन मांजने से परिपूर्ण बना रहता है, अर्थात् बात झूठे बर्तन मांजने से संबंधित नहीं है, यहां बात भ्रमपूर्ण दृष्टि में है।

रमणिका गुप्ता भी अतिरेक का सहारा खूब लेती हैं और चिल्ला चिल्लाकर दोषारोपण करती हैं, "औरत की गुलामी को कहा/मर्यादा/हत्या को कुर्बानी/जल जाने को सती/..उसकी खुद्दारी को/कुल्टा-नटनी-कुटनी/.." इसमें कोई संदेह नहीं कि मुसलमानों के आक्रमण तथा मुगलों के राज्य काल में हमारी संस्कृति अपनी अस्मिता की रक्षा में ही लगी रही और बौनी होती रही परतंत्रता में, बहुत सारे दोष आए। किन्तु अंग्रेजों का राज्य आते ही और उस प्रतंत्रता के बावजूद राजाराममोहन राय, फुले, तिलक, गोखले, गांधी अनेक पुरुषों ने नारी स्वातंत्रय, नारी शिक्षा, नीर सम्मान की मशाल जलाई और वह अभियान बढ़ रहा है, हजार साल की गुलामी की खराब आदतें तीस-चालीस साल में तो नहीं जा सकतीं, किंतु सुधार हो रहा है। इसमें तो संदेह नहीं होना चाहिए। और फिर रमणिका गुप्ता 'मूरत नहीं' में

निषेध ही करती रहती हैं," तुम्हारे मूड में उतरती चढ़ती/देवी और कुल्टा/एक बेजान लौंदा/नहीं रह सकती मैं/.. तुम्हारे बदलते तेवरों के साथ/बदलने को तैयार नहीं मैं।" कात्यायनी 'रुकावट के लिये खेद!' कविता में ठीक कहती हैं, नारी मुक्ति के शोधक **भद्रजनों/सम्भ्रान्त** विद्वान प्रगतिशील मित्रों साथियों/हमें जरा सोचने दीजिए/.." 'हेमलता' "**मेरी दादी** ने कहा था" कविता में कहती हैं "बढ़ना है सबसे आगे/लड़कों से भी/हां सबसे आगे/आश्वस्त है मेरी पोती/खूब उछलती है खूब कूदती है/..मेरी पोती/अच्छी लड़की है।" ये इस तरह इस संकलन में कुछ संतुलन बनाता सा दिखती हैं।

और सावित्री राजन मूर्ति कविता में कहती हैं, "कभी मैं/अपने बच्चों के लिए/अनगिनत व्यंजन बनाती/यंत्र सी हूं/कभी, एक भौंकती कुत्ती/जो काटना बिसर गई है।" इस अनियंत्रित आक्रोश तथा भ्रम के बरअक्स सुनिये जापानी कवयित्री 'इशिगाकी रिन' को उनकी कविता 'कड़ाही, बटलोही और अंगीठी में, "औरत के लिये बदकिस्मती नहीं है खाना पकाना/हां रह जाती हैं वह अविकसित/ कहां मिलता है उसे समुचित ज्ञान सम्मान का सुअवसर?/फिर भी अब देर नहीं है/.. वैसे ही करेंगी अर्जित राजनीति अर्थशास्त्र/और साहित्य का सम्पूर्ण ज्ञान/महज अपनी आन और शान के लिये नहीं/बल्कि सभी इंसानों के लिये होगा ज्ञान-दान/क्योंकि ज्ञान का सार है—जन जन की सेवा।" गौर तलब है कि यह सारी सोच मूलतः भारतीय है, किन्तु त्रिडम्बना देखिए कि बाहर से आ रही है। शायद हम विदेश से मानसिक गुलामों के लिये यही श्रेयस्कर है क्योंकि विदेश से आने पर ही हम उसे मानेंगे, कोई भारतीय यदि ऐसा कहता तो उसे फिर सीता सावित्री की गाली सुनाकर नजर अंदाज कर दिया जाता। कितनी बड़ी विडम्बना है कि 'वसुधैव कुटुम्बकम' को आदर्श मानने वाले इस देश में अपने ही कुटुम्ब को कुटुम्ब मानने को तैयार नहीं हैं कुछ महिलाएं विशेषकर साहित्यकार महिलाएं। उल्टा वे तो स्वयं अपने को वसुधा मानकर, सर्व प्रथम अपने लिये जीना चाहती हैं। वे भूल जाती हैं कि समाज की इकाई परिवार है, पाश्चात्य सोच की नकल में वे व्यक्ति को समाज की सबसे बड़ी इकाई मानती हैं। ऐसे सोच वाली महिला मकी देते हुये यही तो कहेगी लोग जैसा 'सुशीला टाक मोरे' स्त्री "लोग भूकम्प की बात हो कविता में कहती हैं—सहज मानते हैं/स्त्री/ज्वालामुखी हो सकती है। यह भी तो सहज बात है।" में उनसे सहमत होते हुए कहना चाहता हूं "ज्वालामुखी/सबको भस्म कर सकता है/घर परिवार की तो बात ही क्या/पर हिमालय से उद्भूत गंगा बनना/ कठिन काम है/भगीरथ बनना पड़ता है/ज्वालामुखी बनो या भगीरथ/तुम्हारे ऊपर निर्भर है/क्या इस बीच का चयन इतना कठिन है सुशीला टाकमौरे!

— विश्वमोहन तिवारी

आधुनिक महिला लेखन (कहानी)

सम्पादिक : रमणिका गुप्ता, नवलेखन प्रकाशन

कहानियां पत्रिकाओं में तथा संकलनों में प्रकाशित होती रहती हैं। संकलन भी कई दृष्टियों से प्रकाशित किये जाते हैं। एक दृष्टि-आधुनिकता महिला लेखन की बनती है जो उपयोगी दृष्टि है। इस संकलन में रमणिका गुप्ता ने संकलन में कसाव लाने के लिए तीन मुख्य विशेषताएं रखीं हैं और वे हैं (1) आधुनिकता—जिसका अर्थ उन्होंने आज की विसंगति, असामाजिक प्रपंचों तथा महिला के राग-द्वेष सम्बन्धी विषयों से लिया। संकलन की दूसरी विशेषता—महिलाओं के बारे में महिलाओं का लेखन है क्योंकि वह अधिक भरोसे वाला तथा गहरे सरोकार का परिचायक होगा। तथा तीसरी, वह रचना जो स्थायी प्रभाव छोड़े तथा यथार्थ को बदलने की प्रेरणा दे। मूल्य की चिन्ता तथा जीवन-दृष्टि रखने वाले रचनाकार की रचना में यह तीसरी विशेषता तो अवश्य होती है। इस उपरोत दृष्टि से किया गया संकलन अवश्य उपयोगी होगा। अब देखना यह है कि क्या रमणिका गुप्ता का यह संकलन स्वयं उनके द्वारा मानी गई शर्तें पूरा करता है। पहली विशेषता लें आधुनिका—यद्यपि यह विशाल शब्द है किन्तु कुल पंद्रह में से तीन कहानियां इस शर्त को फिर भी पूरा नहीं करतीं—एक है **'रमासिंह'** की **'सोन मछरिया'** जो एक बाल नौकरानी के सपनों तथा कोमल नैसर्गिक वृत्तियों को यथार्थ के पत्थर के नीचे कुचलतें हुए कुछ-कुछ मार्मिक ढंग से दर्शाती है। बाल नौकरों की समस्या तो बहुत पुरानी है और उस कहानी में ऐसा कुछ नहीं है जो उसे आज की समस्या प्रमाणित करे, वह आज से पचास साल पहले की भी हो सकती है, जबकि सूर्यबाला की 'सुनन्दा छोकरी की डायरी'—भी एक बाल नौकरानी की कहानी है किन्तु वह आज के बम्बई की है। दूसरी कहानी **'रागिनी मालवीय'** की **'सजीवना'** भी आज से पचास साल पहले की हो सकती है तीसरी कहानी **'कृष्णा सोबती'** की **'आजादी शम्मोजान की'**— 15 अगस्त 1947 की कहानी है।

अब हम देखें दूसरी विशेषता अर्थात् 'महिलाओं का लेखन महिलाओं के विषय में'। बारीकी से तो तीन कहानियां इस शर्त्त को पूरा नहीं करतीं—एक 'जय श्रीराम'—'पुष्पा सक्सेना' की जो मुख्यतया अयोध्या में बाबरी मस्जिद को गिराने के लिए लिये गये तथा कथित राम भक्तों की गुण्डागर्दी को मार्मिक शैली में प्रभावी रूप से अभिव्यक्त करती है। उस गुण्डागर्दी को शारीरिक तथा आर्थिक रूप से तो सभी ने भोगा किन्तु नायिका ने उसका मानसिक दुख भोगा—इसलिए हम चाहें तो इसे रियायत दे सकते हैं। दूसरी कहानी सजीवना एक गरीब मजदूर लड़के की मार्मिक कहानी है किन्तु है लड़के तथा आदमियों की। तीसरी कहानी 'मैं अब नहीं लौटूंगा 'प्रभा खेतान' की— मुख्यतया एक नक्सलवादी की प्रभावी और यथार्थिक कहानी है—किन्तु इस कहानी को भी हम चाहें तो संकलन में औचित्य की रियायत दे सकते हैं क्योंकि कहानी में उस नक्सलवादी की मां तथा पत्नी पर उसके क्रांतिकारी जीवन के प्रभाव को भी दर्शाया गया है। किन्तु 'रागिनी मालवीय' की कहानी 'संजीवना' का इस संकलन में औचित्य निश्चित रूप से नहीं बनता।

अब देखें तीसरी विशेषता अर्थात् कहानियां जो स्थायी प्रभाव छोड़ती हैं तथा समाज को बदलने की प्रेरणा भी देती हैं। 15 में से 4 कहानियां मुझे इस शर्त्त को पूरा करती नहीं लगीं। एक है 'देवयानी' की 'बिसात'—यद्यपि यह कहानी आज की एक विशिष्ट तथा महत्वपूर्ण समस्या को लेकर चलती है—आज की राजनीति में महिलाओं का शोषण—किन्तु कहानी एक तो सतही है, स्वयं नायिका मूल्यों के विषय में भ्रमित है और मात्र स्वच्छंदता का ही पोषण या कुपोषण करती है और मुख्यतया यह पढ़ते समय कहानी लगती ही नहीं क्योंकि इसमें प्रारम्भ में ही हमें लगता है कि सामन्तवादी व्यवहार पर किसी बी०ए० के विद्यार्थी का प्रपत्र पढ़ रहे हैं। [एक पृष्ठ पढ़ने के बाद ही इसे छोड़ देने की तबियत हुई, किन्तु टिप्पणी करने के लिए ज़बर्दस्ती पढ़ना पढ़ा और देखा कि] उस प्रपत्र के बाद यह कहानी लगभग 'साफ्ट पोर्नो ग्राफिक' वर्णन सी बन

जाती है। संकलन में इस कहानी को रखकर रमणिका गुप्ता ने अपने कहानी-बोध पर भी चोट की है।

दूसरी कहानी—रमासिंह की सोन मछरिया जो आधुनिक तो नहीं ही है, संवदेनशील होने के स्थान में सेंटिमेंटल भी हो गई है। **तीसरी कहानी खुर्शीद जहाँ की** 'मैं हूं एक व्याख्याता'—जो आज के भ्रष्टाचार पर हास्य-व्यंग्यात्मक कहानी है—बिलकुल सतही, कहना चाहिए बचकाना कहानी है। **चौथी कहानी नमिता सिंह** की 'फिर हार गयी वह' भी काफी हद तक सतही कहानी है—छोटी बहिन कनक माँ के समान बड़ी बहन सुमनलता, पर अपने पति के साथ अनैतिक सम्बंध मानकर उसे दुत्कार देती है। उसके इस संदेह का एक तो कोई प्रमाण नहीं था और दूसरे वास्तव में ऐसा बिलकुल नहीं था। आश्चर्य कि सुमनलता जो एक आधुनिक महिला तथा कालेज में व्याख्याता है।—इस भ्रम को दूर करने का कोई भी प्रयास किये बिना अपने को दुख के गर्त में ढकेल देती है और एक घर के बाहर किये गरीब बच्चे का रोना भी उसे उस गर्त से नहीं उबारता—अर्थात वह 'फिर हार गई'—जो लड़ेगा नहीं वह तो हारेगा ही, अफसोस यह है कि सशक्त पक्ष दुर्बल पक्ष से मूर्खता के कारण हार गया।

यह समझना मुश्किल है कि इस संकलन में अनेक प्रसिद्ध महिला कथाकारों को क्यों नहीं लिया गया। उषा प्रियम्वद्य, मेहरुन्निसा परवेज, मृदुला गर्ग, राजी सेठ, चित्रा मुद्गल आदि कथाकार जो अपनी रचनाओं में आज के बदलते परिवेश में नारी की अस्मिता की खोज भी कर रही हैं, उनकी समस्याओं की पड़ताल कर रही हैं, मूल्यों की चिन्ता कर रही हैं, आदि की चर्चित कहानियों को सम्मिलित नहीं किया।

तब भी इस संकलन में अधिकांश कहानियां पठनीय, प्रभावी तथा महिला लेखन की शक्ति का परिचय देती हैं। उदाहरण के लिये सुषम बेदी की 'ब्राड्वे' कहानी देखें। अमरीकी भोगवादी संस्कृति के दुष्परिणामों को भोग रहे अमरीकियों की दशा का चित्रण 'ब्राड्व' की आत्मकथा के रूप में अभिव्यक्त करने से एक तो कहानी की सम्प्रेषणीयता बढ़ी है दूसरे यह ध्वन्यात्मक शैली अनोखे ढंग से यह बतलाती है कि पदार्थवादी संस्कृति में मनुष्य तो दुखी हैं, पदार्थ भी दुखी हैं। और ब्राड्वे के नायक का जल्दी पैसे कमाने के लिए अतिरिक्त समय में 'ताबूत' बनाना—ध्वनित करता है कि भोगवादी संस्कृति में सभी एक दूसरे के लिये ताबूत बनाते हैं अर्थात् वह संस्कृति 'मृत्योर्भामृतं गमय' वाली न होकर 'अमृतोमंमृित्युः गमय' वाली संस्कृति है और विडम्बना यह कि कहानी का नायक प्रोफैशनल तथा ईमानदार पुलिस और एक माफिया के सदस्य के बीच की गोली की बौछार में मारा जाता है और स्वयं अपने बनाए ताबूत में उसका शरीर रखकर उसकी पत्नी उसे वापिस भारत ले जाती है। कहानी प्रभारी, मार्मिक तथा आधुनिक जीवन के महत्वपूर्ण पक्ष पर प्रकाश डालकर मूल्यों के विषय में सोचने के लिये बाध्य भी करती है।

'रमणिका गुप्ता' की कहानी 'जिखा और जिखा माय' एक तरफ तो छोटा नागपुर क्षेत्र के कोइरी समाज तथा तेली समाज आधुनिकता में प्रवेश के कारण मध्यम वर्गीय मूल्यों की नकल कर रहे हैं और विडम्बना यह है कि वे मूल्य उन समाज की जीवनशैली से मेल नहीं खाते इसलिये समाज में तनाव तथा कमजोरों का शोषण बढ़ गया है, ऐसे समाज में जिखा एक विद्रोहिनी के रूप में सफल होती है। कथानक सशक्त तथा मार्मिक है, आधुनिक है किन्तु शैली की कमजोरी यह है कि बहुत सी बातें कथाकार कहती रहती है, पात्रों तथा घटनाओं से वे बातें नहीं निकलती जिनसे कहानी की जीवन्तता बढ़ती है।

'कमल कुमार' की 'अंतर्यात्रा' हमारे समाज की मूल्यहीनता, निर्ममता तथा क्रूरता को एक गर्भवती माँ के कन्या भ्रूण को गिराने के माध्यम से चित्रित करती है। कहानी एक जबरदस्त अनदेखा मोड़ लेती है जब पता चलता है कि जो भ्रूण गिरा दिया गया है वह लड़की का नहीं, लड़के का था। तब वही पति तथा सास जो निर्मम बने बैठे थे अब अचानक 'ममता' से भर जाते हैं। किन्तु डाक्टर अपनी व्यावसायिक तटस्थता बनाए रखते हैं। तथा, दुखी माँ अब अपने को पहले जैसा असहाय न पाकर शक्ति रूपा हो जाती है और कहती है कि आगे ऐसी भ्रूणहत्या नहीं होने देगी। इस कहानी की अंतर्वस्तु तथा शिल्प कमल कुमार को उच्चतम कथाकारों की श्रेणी में स्थापित कर सकती है।

मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'सिस्टर' में एक ईसाई नर्स को उसके समर्पित सेवा भाव के कारण एक बीमार पुरूष की पत्नी उसे अपने पति की बहिन मानने लगती है और भाई दूज का टीका भी लगवाती है। फिर मृत्यु शैय्या से उठाए गए उस पुरुष के बेटे का विवाह होता है जिसमें वह वर की बुआ के रूप में सहर्ष आमंत्रित है और सिस्टर भी साड़ी चूड़ियाँ आदि पहनकर, वधू के लिये भेंट स्वरूप एक अंगूठी लेकर विवाह में जाती है। किन्तु उस विवाह में उसे सम्मान से बिठाकर चाय-मिठाई तो खिलाई जाती है किन्तु उसके द्वारा बुआ की रस्में नहीं करवाई जातीं और वह सिस्टर इस व्यवहार को सहन न कर सकने के कारण चुपके से चली जाती है। इस कहानी की ताकत इस बात में है कि सिस्टर के प्रति इस दुहरे व्यवहार के लिए कथाकार ने सीधे किसी को दोषी नहीं ठहराया। वैसे तो यही लगता है कि माने हुए भाई भावज ही दोषी हैं (इस दोहरे व्यवहार के) पर कहीं यह भी लगता है कि हमारे रीति रिवाजों में हम इस तरह जकड़े हुए हैं कि एक ईसाई महिला को घर की बुआ का कार्य सौंपने वाली बात हमारे दिमाग में आती ही नहीं।

'कुसुम अंसल' ने नीली परछाई में—'यूथैनेसिया' जैसी विकट तथा गम्भीर समस्या को कहानी में सफलतापूर्वक जाँचा और पड़ताला है। 'सूर्यबाला की' 'सुनन्दा छोकरी की डायरी' एक बालिका नौकरानी का आज का दुखदर्द भरा जीवन बम्बइया हिन्दी में एक बालिका की नजर से जिस शैली में दर्शाया है वह प्रशंसनीय है।

दो शब्द पुस्तक की तकनीकी दशा पर:

1. पुस्तक की जिल्द से पन्ने पूरे नहीं खुलते हैं,
2. अनगिनत टंकण गलतियाँ प्रत्येक पृष्ठ पर हैं।
3. प्रत्येक पृष्ठ के ऊपर तत्संबंधी कवयित्री या कथाकार का नाम होना चाहिये।
4. पुस्तक का प्रकाशन यदि विपन्नतापूर्वक 'किया गया है तब पुस्तक के दाम भी 50 या 60 ही होना था। 125/ में यह पुस्तक बहुत मंहगी है।

इस तरह यद्यपि कुल पंद्रह में से एक तरफ 6 कहानियाँ इसे कमजोर बनाती हैं, तब दूसरी तरफ 9 कहानियां इस संग्रह को गरिमा तथा शक्ति देती हैं अपनी अन्तर्वस्तु से, शैली से तथा शिल्प से, वे आधुनिक समस्याओं से जूझते हुए, रोचकता के साथ स्थायी प्रभाव छोड़ती हैं तथा अपना ऐतिहासिक महत्व स्थापित करती हैं।

—विश्वमोहन तिवारी

''नदिया''

संग्रह : नदिया, लेखिका : डॉ सूरज मणि स्टेला कुजूर, प्रकाशक : आकांक्षा प्रकाशन, दिल्ली, मूल्य : 70/- रुपये

"नदिया" नवोदित कवयित्री डॉ॰ सूरज मणि स्टेला कुजूर का पहला संग्रह है। इन कविताओं का संसार नारी जीवन के अभावों, उसकी तकलीफों, पुरूष की अहम्मन्यता और उपेक्षा और एक आम घरेलू औरतों की वेदना को समेटते हुए चलता है। लेखिका आदिवासी परिवार की सदस्या है और उनका संघर्ष इन कविताओं में बखूबी पहचाना जा सकता है। कवयित्री बेलाग ढंग से अपनी बात कहती है और उसके अन्दर का गुस्सा एक सार्थक रूप लेकर ढलता है- पुरूष के असली रूप को जानते हुए भी उससे घृणा नहीं, बल्कि औरत की तकलीफों को उभारते हुए एक करूणामय वातावरण निर्मित करने का प्रयास है।

सूरजमणि अपने आसपास के परिवेश से अपने को अलग-अलग महसूस नहीं करतीं। उन्हें, अपना गांव, वहां के लोग, हवा, पानी बराबर याद रहते हैं, यह सब केवल स्मृति के बतौर नहीं है बल्कि रोजमर्रा के हिस्से की शक्ल में है। कवयित्री इस सबको सहज ढंग से उरेहती हुई चलती हैं, "वही मेरा गांव। धुंधला सा, मटियाला सा। एक सड़क भी आती है। जो गांव-शहर से जोड़ती है" गांव के मंदिर, मस्जिद, गिरिजा घर और वहां के रहने वाले उसे याद आते हैं और बदलते परिवेश की पहचान इस तरह आती है: "तेज चाल है फैशन की। कमी नहीं है नेता की। पर चलती दमड़ी धर्मों की" सीधे सहज ढंग से बात कहने का कयास है, विषमता को पहचानने की दृष्टि बाल सुलभ चंचलता में खो जाती है। परिचय देते हुए उसकी उत्सुकता होड़ सी करती है: "वह समय, वह स्थान/आता है याद मुझको/जहां हम सभी दोस्त मिलते थे/धूल, बालू, पानी, पत्थर से वार/सभी तो मेरे दोस्त थे" स्मृति का यह सहज वर्णन केवल चित्र बनकर रह जाता है और कोई सार्थकता तलाश नहीं कर पाता। वह जैसे लेखिका का मकसद भी नहीं है। "ए हवा", "शहर और गांव", "आज भी हैं", "ये मेरे लोग" कवितायें इसी वातावरण को लेकर चलती हैं: "इनके पास नहीं फर्नीचर/चटाई है इनका बिस्तर/फिर भी नहीं ये फटीचर/औरों से हैं फिर भी बेहतर", इनके अलावा "कहां है मेरा गांव", "मन करता है", कविताओं में केवल सपाट वर्णन है वातावरण की सघनता या वहां का संघर्षमय जीवन नहीं। कविताओं की भाषा में भी वह गंवईपन या स्थानीयता नहीं है जिसके होने पर कविताएं ज्यादा असरकारक होतीं।

इन कविताओं का मुख्य स्वर औरत और उसकी स्थितियों से संबंधित है इसमें मां, प्रेमिका, गृहिणी, पत्नी आदि अनेक रूपों से औरत को देखा गया है मगर यह सब "देवि, मां, सहचरि प्राण" ही बनकर रह गया है। कवयित्री केवल यही कहकर रह जाती है: "पुरुष/बन जाओ नारी/एक पल के लिए/ भोगकर देखो/इसके कष्ट/इसके दुःख/इसकी पीड़ा/इसकी व्यथा/इसकी वेदना" मगर इसके साथ ही यह चित्र "तुम्हारे कर्मों को देख/ऐसा लगता है/मैंने कहीं भूल की है तुम्हारे पालने में/इसीलिए दुध मुंही बच्ची/शिकार हो जाती है तुम्हारी वासना की बार-बार"। कविता सत्य को सामने तो रखती है मगर औरत की तरह शायद वह भी निस्सहाय ही रह गयी है। यही बात यहां भी है। "अरे मैं कहां खो गई हूं/नहीं तो! सच ही तो है/मिलती है विजय/सदा से ही पुरुष को/और मिलते हैं आंसू केवल नारी ही को/उसी नारी से पैदा हुआ पुरुष/और फिर उसी की यह दुर्दशा" मगर कवयित्री और भी ज्यादा उपेक्षित नारी के कष्ट को उकेरते हुए चुप हो जाती है। "स्वामी", "यह जिन्दगी", "अहंकार", "कह पायेगी", "उसी की रचना हो तुम" आदि कविताएं आज की औरत को नियमित हो सहज रूप में सामने रखती हैं। "टेन्शन्" कविता भी अच्छी बन पड़ी है और कई जगह यह ताजगी भी है। "बहुत दिन हो गए/करमा सरहुल नृत्य नाचे/मन करता है/जा जी भर कर नाचें" प्रकृति विषयक कविताएं सहज एवं सरल बन पड़ी है।

सूरजमणि अपने परिवेश, उसकी ऊर्जा को भूलती नहीं, उससे एक आत्मीयता स्थापित करती हैं और उसे यादों में संजोकर अन्दर ही अन्दर कुलबुलाती हैं और एक सहज रूप में उसे स्वर दे देती हैं, इन रचनाओं में बनावटीपन नहीं हैं और कवयित्री के परिवेश को ध्यान में रखते हुए उसके संघर्ष की प्रशंसा करनी पड़ती है। कविताओं में अभी कच्चापन है, अभिव्यक्ति इकहरी और सपाट है। समझदारी है मगर स्पष्ट नहीं। नारी मन के दर्द को सीधे- ढंग से रख दिया गया है, नये पथ की और बढ़ने की आकांक्षा नजर नहीं आती। मगर फिर भी ये कविताएं आश्वस्त करती हैं और यह आशावाद एक सुंदर रूप ग्रहण करेगा, इसमें संदेह नहीं इत्यलम्।

—ओम नारायण

अपना-अपना सुख

पुस्तक : "अपना-अपना सुख"—लेखक : निरंकार नारायण सक्सेना, प्रकाशक—शिवा स्वाति प्रकाशन, दिल्ली, मूल्य : रु॰ 150 /- सजिल्द।

निरंकार नारायण सक्सेना के उपरोक्त उपन्यास का मजबूत पहलू यह है कि उन्होंने आज के पढ़े-लिखे "मैच्योर्ड" दिखने वाले परिवारों की कहानी पर कलम चलाई है और उसका कमजोर पक्ष यह है कि बजाय कथानक के विकास के, उन्होंने अक्सर वक्तव्यों के जरिये बात कहने की कोशिश की है जैसे मुख्य पात्र अमित और सुमति जो पति-पत्नी हैं—"स्वयं ओढ़ी हुई "मैच्योरिटी" का स्वांग, दोनों, बच्चियों के सम्मुख निर्भीक भाव से आंख बचाकर, खेलते रहते थे। "या फिर" दोनों का जीवन एक दूसरे के बिना अंकुश के बहुत ही सहज ढंग से बोल रहा था—या किसी को एक दूसरे से कोई शिकायत नहीं थी, "आर्थिक दृष्टि से कोई किसी पर निर्भर नहीं था" सब कुछ बहुत सहज ढंग से व्यवस्थित सा चल रहा था————" इत्यादि इत्यादि।

ऐसी शैली अपनाने से पाठक को सूचना तो मिलती है लेकिन पात्रों की मानसिकता और उनके जीवन को स्वयं (उनके क्रिया-कलापों के माध्यम से) देखने का अवसर नहीं मिलता। अच्छा होता लेखक अपने पात्रों को उनके सोच, क्रिया-कलाप और उनको प्रेरित करने वाले कारणों के निरूपण के द्वारा उद्घाटित करता।

एक ओर कमी भी उपन्यास की दिखती है और वह विशुद्ध रूप से कथानक के संबंध में है— कि मुख्य पात्रों, अमित और सुमति का अपने जीवन के खोखलेपन को भरने के लिए तथा एक-दूसरे को अहं के जरिए अपनी ओर आकर्षित करने के लिए इला नामक विद्यार्थी कन्या और जॉन नामक सह-अध्यापक का इस्तेमाल करना। यह काफी पुराने ढर्रे का प्लाट

पृष्ठ 67 का शेष

राजस्थान परमाणु विद्युत परियोजना

राजस्थान परमाणु विद्युत परियोजना की इकाई 3 एवं 4 में क्रमशः दिनांक 17 जुलाई 1995 से 20 जुलाई, 1995 तक दो हिन्दी कार्यशालाएं आयोजित की गई।

17 जुलाई को कार्यशाला का शुभारंभ श्री एस० एस० सचदेव, परियोजना निदेशक, रांपविप-3 एवं 4 तथा 19 जुलाई को कार्यशाला का शुभारंभ श्री सतवंतसिंह, अपर मुख्य अभियंता वि० एवं मा रापविप-3 एवं 4 ने दीप प्रज्वलित कर किया। इन कार्यशालाओं के शुभारंभ के अवसर पर प्रतिभागियों के अतिरिक्त अन्य वरिष्ठ अधिकारी भी उपस्थित थे।

अधिकारियों की कार्यशाला के शुभारंभ के अवसर पर श्री सचदेव ने प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए उनसे आशा कि वे इस कार्यशाला को सार्थक बनाने के उद्देश्य से अपने दिन-प्रतिदिन के सरकारी कामकाज से अधिक से अधिक राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करके इसके विकास में भागीदार बनेंगे।

कार्यशाला में सरकार की राजभाषा नीति, सरकारी बैठकें, फर्नीचर, टेलिफोन, लेखन सामग्री आदि, अनुशासनिक मामले, पदों का सृजन, भर्ती, आरक्षण आदि, चिकित्सा परीक्षा, चरित्र तथा पूर्ववृत्त सत्यापन और सेवापंजी संबंधी मामले पेशागियों, गजट अधिसूचनाएं, सरल हिन्दी टिप्पणियों, तार, छुट्टी, बिलों के भुगतान तथा लेखा आपत्तियों एवं यात्रा संबंधी मामलों आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की व इनका अभ्यास कराने के साथ-साथ तकनीकी विषयों पर हिन्दी का प्रयोग करने पर भी बल दिया।

देना बैंक, महाप्रबंधक कार्यालय, अहमदाबाद

महाप्रबंधक कार्यालय, देना बैंक, अहमदाबाद द्वारा दिनांक 21-22 अगस्त 1995 को अहमदाबाद स्थित कर्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र में लिपिक संवर्ग हेतु हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया।

कार्यशाला का उद्घाटन सहायक महाप्रबंधक श्री डी०पी० मोदी ने किया। कार्यशाला की समाप्ति पर पढ़ाए गए विषयों से सम्बन्धित एक प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया। इस कार्यशाला में 20 लिपिकों ने भाग लिया।

दिनांक 24 व 25 अगस्त, 1995 को अधिकारी संवर्ग हेतु हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में 16 अधिकारियों ने भाग लिया। दोनों कार्यशालाओं के आयोजन के अवसर पर प्रतियोगिताएं भी आयोजित की गईं। विजयी प्रतियोगियों को पुरस्कृत किया गया।

विजया बैंक, पुणे

विजय बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, पुणे ने इस क्षेत्र में कार्यरत् अपने कर्मचारियों के लाभार्थ दिनांक 31.7.95 से 2.8.95 तक पुणे के सम्मेलन हॉल में हिंदी कार्यशाला आयोजित की।

बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक श्री एम० एम० भीमय्या ने कार्यशाला का उद्घाटन किया। अपने उद्घाटन-वक्तव्य में श्री भीमय्या ने बैंक का काम हिंदी में करने को आज ही नितांत आवश्यकता बताते हुए कर्मचारी का उद्बोधन किया कि वे हिंदी कार्यशाला में दत्तचित्त होकर प्रशिक्षण प्राप्त करें और वापस जाकर अपनी शाखाओं का अधिकतम काम-काज हिंदी में करें।

तीन दिवसीय इस कार्यशाला में राजभाषा हिंदी संबंधी संवैधानिक प्रावधान, भाषा संबंधी विविध जानकारियां देने के अलावा प्रशिक्षार्थियों से हिंदी में बैंक-कार्य करने के विभिन्न व्यावहारिक अभ्यास कराए गए।

समीक्षा सत्र में प्रशिक्षणार्थियों ने अपने विचार व अनुभव व्यक्त करते हुए कार्यशाला को अत्यंत उपादेय बताया।

हिंदुस्तान जिंक लिमिटेड, जिंक लेड स्मेलटर विशाखापटनम

हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर्मचारियों की सरकारी कामकाज हिन्दी में करने को झिझक दूर करने हेतु दिनांकः 7.08.1995 से 09.08.1995 तक तीन दिवसीय हिन्दी कार्यशाला आयोजित की गई। कार्यशाला में कुल 39 कर्मचारियों ने भाग लिया 17.08.1995 को राजभाषा नीति, नियम व अधिनियम एवं कार्यान्वयन के आयाम पर विशाखापटनम इस्पात संयंत्र के डा० एस०कृष्ण बाबू उपप्रबंधक (हिन्दी) ने, 08.08.1995 को डी०सी०आई० के उपप्रबंधक (राजभाषा) ने टिप्पण एवं लेखन तथा 09.09.1995 को आंध्र विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रोफेसर पी० आदेश्वर राव ने राजभाषा का स्वरूप आदि पर अपने व्याख्यान दिए।

इंडियन बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, अहमदाबाद

इंडियन बैंक क्षेत्रीय कार्यालय अहमदाबाद गुजरात की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में एक तीन दिवसीय हिंदी कार्यशाला का

आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का आयोजन दिनांक 27.7.95 से 29.7.95 तक किया गया। जिसमें लिपीकीय संवर्ग के सत्रह कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाव लिया।

क्षेत्रीय राजभाषा अधिकारी श्री जी बी सिंह ने कार्यशाला के मूल उद्देश्य को उजागर करते हुए बतलाया कि इस कार्यशाला का मुख्य ध्येय यही है कि स्टाक सदस्यों को बैंकिंग हिंदी का अधिक से अधिक व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जा सके। इसके लिए दूसरे बैंकों के अनुभवी हिंदी अधिकारियों को भी आमंत्रित किया गया था जिन्होंने बैंकिंग परिचालन के विभिन्न विषयों पर व्याख्यान देते हुए बैंकिंग की वैज्ञानिकता को भी स्पष्ट किया। पांच सत्रों में विभक्त इस कार्यशाला में प्रथम व्याख्यान बैंक ऑफ बड़ोदा, स्टाफ कॉलेज मद्रास के डा० हरियशराय द्वारा दिया गया जिससे समस्त स्टाफ-सदस्यों की मानसिकता पर एक विशेष प्रतिक्रिया हुई और उनके मन में सोया हुआ हिंदीगत मोह जाग उठा। इसी क्रम में कारपोरेशन बैंक के हिंदी अधिकारी श्री सी पी श्रीवास्तव द्वारा "ग्राहक सेवा में हिंदी की भूमिका' पर व्याख्यान दिया। इंडियन ओवरसीज़ बैंक के हिंदी अधिकारी श्री नरेशचंद्र शर्मा अपने व्याख्यान में कर्मचारियों को शाखावर पर हिंदी में काम काज की संभावनाओं से अवगत कराते हुए हिंदी वाउचरों, बहीखाता-प्रविष्टियों, पास-बुकों, मांगड्राफ्ट मीयादी जमा रसीदों, पुनर्निवेश योजना आदि का भी व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया। बैंक के क्षेत्रीय राजभाषा अधिकारी ने राजभाषा हिंदी के वार्षिक कार्यक्रम की जानकारी देते हुए समस्त प्रतिभागियों को अधिक-से अधिक हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित किया तथा वाउचर, पास-बुक लेजर आदि (वही खाता) में हिंदी के प्रयोग का अभ्यास कराया।

दिनांक 29.7.95 को सभाकक्ष में हिंदी कार्यशाला के समापन समारोह के अवसर पर श्री विजय गोपालन, मुख्य प्रबंधक, ने कहा कि हिंदी कार्यशाला की सफलता तभी होगी जब आप अपने-अपने कार्यालयों में हिंदी में कार्य करने की मानसिकता बनाकर यहां से जाएंगे, जब तक आपके भीतर हिंदी में काम करने की चेतना पैदा नहीं होगी तब तक हिंदी में कार्य नहीं किया जा सकेगा।

कार्यालय महालेखाकार (लेखा परीक्षा), जयपुर

कार्यालय महालेखाकार (लेखा परीक्षा) में दिनांक 5.6.95 से 14.7.95 एक 30 दिवसीय हिंदी टंकण कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला में 7 लेखापरीक्षा लिपिकों ने नियमित रूप से भाग लिया तथा राजभाषा विभाग, हिन्दी शिक्षण योजना, जयपुर केन्द्र के अनुदेशक श्री हरीश चन्द्र माखीजा के अनुसार इन प्रशिक्षणार्थियों ने कम समय होते हुये भी अच्छा अभ्यास किया और तीन-चार व्यक्ति तो निरन्तर अभ्यास करके पूर्ण रूप से हिन्दी टंकण कार्य कर सकते हैं।

दिनांक 14.7.95 को इस प्रथम हिन्दी टंकण कार्यशाला के समापन पर प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण पत्र देते हुये कल्याण अधिकारी श्री आर० पी० कटारिया ने प्रशिक्षणार्थियों से निरन्तर अभ्यास करते रहने तथा हिन्दी टंकण कार्य करने का आह्वान किया।

भारतीय लाख अनुसंधान संस्थान, नामकुम रांची

भारतीय लाख अनुसंधान संस्थान, नामकुम रांची में 10 एवं 25 अप्रैल 995 को दो दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया। कार्यशाला में स्थान के प्रशासकीय एवं लेखा अनुभाग के कर्मचारियों के साथ-साथ ची स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों को शिक्षित करवाया गया। कार्यशाला में विविध विषयों पर व्याख्यान दिए ये यथा:—

(1) बिलों के भुगतान एवं लेखा आपत्तियां, (2) हिन्दी में टिप्पणी था प्रारूप लेखन, (3) देवनागरी लिपि में हिन्दी में तार प्रेषण, (4) हिन्दी में चेक लेखन, (5) ज्ञापन कार्यालय आदेश एवं परिपत्र लेखन। 6) वित्त एवं लेखा कार्य में हिन्दी का प्रयोग

संस्थान के प्रसार विभाग एवं पुस्तकालय के सहयोग से 1935 से 994 के बीच संस्थान द्वारा हिन्दी में प्रकाशित बुलेटिन एवं पत्रिकाओं की क मनोरम प्रदर्शनी लगाई गई।

संस्थान के निदेशक डा० सतीश चन्द्र अग्रवाल ने स्वागत-भाषण में हा कि कार्यालयों में कार्य करने वाले लोगों के बीच हिन्दी में कार्य करने बंधी अनेक भ्रांतियां हैं। ऐसा समझा जाता है कि हिन्दी में कार्यों का ष्पादन अपेक्षाकृत कठिन हैं, जबकि तथ्य इसके बिल्कुल विपरीत है। ारंभ में झिझक स्वाभाविक है, लेकिन थोड़े प्रयास से ही हिन्दी में कार्य रना आसान हो जाता है। सभापन समारोह के अवसर पर डा० अग्रवाल । कार्यशाला के प्रतिभागियों का उत्साह वर्द्धन करते हुए अपने-अपने ार्यालयों में सर्वाधिक हिन्दी में ही करने की अपील की।

उद्घाटन समारोह के अवसर पर रांची नगर राजभाषा कार्यान्वयन मिति के सचिव श्री ओमेश्वर प्रसाद ने मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए हा कि कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य सरकार काम काज में आनेवाली ठिनाइयों का निराकरण होता है। हिन्दी के सहायक ग्रंथ कर्मचारियों के ीच वितरण लाभकारी होता है।

कार्यशाला का समापन समारोह 25 अप्रैल 1995 को हुआ। समापन मारोह के मुख्य अतिथि पद से रांची जिला दूर प्रबंधक श्री राममूरत सद ने कहा कि बड़े दुर्भाग्य की बात है कि इस आयोजन के बाद सभी तिभागी अपने-अपने कार्यालय में हिन्दी में कार्य करेंगे। उन्होंने दुःख कट करते हुए कहा कि हम चौबीस घन्टों में अधिकांश समय अपनी ही तृभाषा का प्रयोग करते हैं। परन्तु अपनी राष्ट्रीयता एवं राजभाषा के योग के प्रति जागरूक नहीं हैं। हिन्दी एक समृद्धशाली भाषा है इसके ब्द भण्डार बहुत बड़ा है। अतः हमें अपने-अपने कार्यों में हिन्दी का ही र्वाधिक प्रयोग करना चाहिए। कार्यशाला के प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र दिया गया। धन्यवाद ज्ञापन श्री लक्ष्मी कान्त सहायक निदेशक (रा०भा०) ने किया।

केनरा बैंक, मेरठ

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसरण में भारत सरकार द्वारा निर्धारित वार्षिक कार्यक्रम 1995-96 के लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में

निरन्तर आगे बढ़ने और शाखा स्तर पर दैनिक कामकाज में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को उत्तरोत्तर बढ़ाने के उददेश्य से दिनांक 13, 14 और 15 जुलाई 1995 को बैंक की दादरी शाखा में ऑन दि जॉब प्रशिक्षण कार्यक्रम सफलतापूर्वक आयोजित किया। कार्यक्रम के दौरान प्रबंधक डा० उपेन्द्र नारायण सेवक पाण्डेय और प्रबंधक श्रीमती जीवनलता जैन ने प्रत्येक सीट पर जाकर कर्मचारियों को हिंदी प्रयोग बढ़ाने की प्रेरणा दी और राजभाषा ीति के प्रभावी कार्यान्वयन के लिये वांछित मार्गदर्शन दिया। दादरी शाखा ; वरिष्ठ प्रबंधक श्री एम० एस० रविकुमार और स्टाफ सदस्यों ने दैनिक ामकाज में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग ज्यादा करने के कार्य में काफी ंचि ली तथा बैंकिंग शब्दावली से सम्बन्धित अपनी कठिनाइयों को सामने ा जिन्हें दोनों प्रबंधकों ने तत्काल दूर किया तथा उनका मार्गदर्शन या।

आकाशवाणी, हजारीबाग

आकाशवाणी हजारीबाग केन्द्र परिसर में दिनांक 18 जुलाई 95 से 20 ुलाई 1995 तक तीन दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया या। इस अवसर पर राजभाषा और राष्ट्रभाषा, राजभाषा नियमावली एवं ाब्दावली तथा राष्ट्रीय एकता और राजभाषा आदि विषयों पर प्रशिक्षार्थियों ो जानकारी दी गई। कार्यशाला में अधिकारियों एवं कर्मचारियों के तिरिक्त पत्रकारों ने भी भाग लिया। प्रशिक्षार्थियों ने इसे बहुत उपयोगी ताया।

गैस अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड

राजभाषा हिंदी में काम करने की मानसिकता बनाने तथा उपयुक्त वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से गैस अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड के निगमित कार्यालय ने दिनांक 14-15 मार्च, 1995 तक गैर-कार्यपालकों के लिए दो-दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में 15 गैर-कार्यपालकों ने भाग लिया। दिनांक 14 मार्च को उद्घाटन अवसर पर डा० गुरूदयाल बजाज, उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग विशेष रूप से आमंत्रित थे। गेल के महाप्रबंधक (कार्मिक एवं प्रशासन) श्री अरूण कुमार गुहा ने कार्यशाला का विधिवत् उद्घाटन किया। उन्होंने कार्यशाला के उद्देश्यों के संबंध में कर्मचारियों को जानकारी दी और आशा व्यक्त की कि इस कार्यशाला में कार्यालयीन हिंदी की जो व्यावहारिक जानकारी दी जाएगी उससे सभी कर्मचारियों को लाभ होगा तथा हिंदी प्रयोग के प्रति उनकी झिझक कम होगी। कार्यशाला में प्रबुद्ध वक्ताओं ने राजभाषा संबंधी विभिन्न विषयों, यथा तकनीकी शब्दावली, हिंदी शब्दावली वर्तनी एवं प्रयोग, कार्यालयीन हिंदी, गेल की प्रोत्साहन योजनाओं आदि के संबंध में जानकारी दी। साथ ही उन्हें हिंदी प्रारूप और टिप्पण आदि लिखने का अभ्यास भी कराया गया। इस अवसर पर श्री के० के० झा, उप निदेशक (राजभाषा), पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय ने प्रतिभागियों को राजभाषा नियम और अधिनियम की विस्तृत जानकारी दी। कार्यशाला के अंतिम दिन गैस अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड के निदेशक (कार्मिक), श्री एस० एस० वैद्यनाथन ने सभी प्रतिभागियों को हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश तथा प्रमाण पत्र प्रदान किए तथा उनका मार्गदर्शन करते हुए कहा कि हिंदी में काम करते हुए सामने आने वाली समस्याओं का समाधान करने के लिए इस प्रकार की कार्यशाला बहुत ही उपयोगी माध्यम है।

दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी

दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी में 13.6.95 से 15.6.95 तक तीन दिवसीय हिंदी कार्यशाला आयोजित की गई जिसका उद्घाटन श्री चन्द्र किरण त्यागी, संयुक्त निदेशक ने किया। श्री त्यागी ने अपने उद्घाटन भाषण में कार्यशाला के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इन कार्यशालाओं के द्वारा कर्मचारी हिंदी का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करते हैं और जिसका उपयोग वे अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों में कर सकते हैं।

पहले दिन डा० सूरज भान सिंह ने "राजभाषा नीति" पर अपने विचार व्यक्त किए। दूसरे दिन 14.6.95 को श्री जगदीश चतुर्वेदी तथा श्री मदन शर्मा ने क्रमशः "अनुवाद व प्रशासनिक शब्दावली" और टिप्पण-प्रारूपण-सिद्धांत एवं प्रयोग" विषय पर भाषण दिया और प्रायोगिक कार्य करवाया। तीसरे व अंतिम दिन 15.6.95 दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड की उपाध्यक्ष डा० माजदा असद ने "पत्र-लेखन" विषय पर भाषण दिया और अभ्यास कार्य करवाया। कार्यशाला के समापन के अवसर पर डा० माजदा असद ने प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र प्रदान किए। उन्होंने कहा कि कर्मचारी इन कार्यशालाओं से काफी ज्ञान अर्जित कर सकते हैं।

"आधुनिक भाषाओं के हार की मध्य मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे"

-गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड
विशाखापट्टणम

हिन्दी-सप्ताह दिनांक : 14.9.1995 से 20.9.1995 तक हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। उक्त सप्ताह का उद्घाटन श्री एन सन्याल, निदेशक, खान मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली ने दिनांक: 15.9.1995 को मुख्य अतिथि के रूप में किया। इस समारोह में विशेष अथिति के रूप में श्री रमेश चन्द्र समूह महा प्रबन्धक (प्रदावण) भी पधारे थे। समारोह की अध्यक्षता श्री बी० एन० मित्तल, महा प्रबंधक ने की। इस अवसर पर श्री एन सन्याल ने अपने उद्बोधन में अभिव्यक्त किया कि हमारे देश के लिए एक ही सम्पर्क भाषा की आवश्यकता है और देश को एकत्रित रखने के लिए हिन्दी ही सम्पर्क सूत्र है। विशेष अतिथि श्री रमेश चन्द्र ने अपने वक्तव्य में कहा कि अधिकांश लोगों द्वारा बोली या समझी जाने के कारण हिन्दी हमारी राजभाषा बनाई गई है। श्री बी एन मित्तल ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिन्दी को अपनाना हमारा संवैधानिक एवं पावन कर्त्तव्य है। मान्यता प्राप्त कामगार संघ (हिन्दुस्तान जिंक मजदूर संघ) के अध्यक्ष श्री सी एच राघवेन्द्र राव ने कर्मचारियों को संबोधित करते हुए कर्मचारियों को हिन्दी सीखने की आवश्यकता पर जोर दिया। साथ ही श्री बी एस राव, वरिष्ठ प्रबंधक (का० व प्रशा०) श्री पी के राऊत, क० सतर्कता अधिकारी, श्री एस एस लोढ़ा, वरिष्ठ प्रबंधक (प्र) एवं श्री एस सी पटनायक, मुख्य प्रबंधक (पर्यावरण) ने भी अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम का शुभारंभ श्री बी एच के शर्मा, श्री के सत्यदास, श्री के जगन्नाथ राव, श्रीमती एम भानुमति और श्रीमती सी बी शीला, द्वारा राजभाषा के प्रति समर्पित हिन्दी गीत गायन के साथ हुआ। सबसे पहले सबका स्वागत करते हुए श्री ओ सत्यनारायण राव, राजभाषा अधिकारी ने पूरे सप्ताह का ब्यौरा दिया।

तदुपरांत श्री सन्याल, निदेशक, खान मंत्रालय ने राजभाषा अनुभाग द्वारा प्रकाशित "सामान्य ज्ञान" नाम पुस्तिका का विमोचन किया। अंततः पिछले जुलाई माह में आयोजित हिन्दी ज्ञान प्रतियोगिता एवं हिन्दी गीत प्रतियोगिता के विजेताओं को श्री रमेश चन्द्र, समूह महा प्रबन्धक (प्रदावण) के करकमलों द्वारा पुरस्कार वितरण किया गया।

सप्ताह समापन समारोह के मुख्य अतिथि प्रो० पी० आदेश्वर राव, हिन्दी विभाग, आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टण थे। अपने संबोधन में प्रोफेसर राव ने कहा कि हिन्दी हमारी अपनी भाषा है एवं यह हमारी संस्कृति का धरोहर है एवं इसे सीखकर हमें देश की एकता को कायम रखने की सख्त जरूरत है। समारोह की अध्यक्षता श्री जितेन्द्र सिंह, मुख्य प्रबंधक (कार्य) ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिन्दी को व्यापक रूप में अपनाने हम सब को प्रतिबध होकर काम करना पड़ेगा और यह हमारा नैतिक दायित्व भी है। हिन्दुस्तान जिंक मजदूर संघ के संयुक्त सचिव श्री कृष्णा प्रसाद भी अतिथि के रूप में उपस्थित होकर सभी कर्मचारियों को हिन्दी सीखने के लिए प्रबंधन द्वारा दिये जाने वाले समस्त फायदों का उपयोग कर इसे लागू करने की अपील की। इस उपलक्ष्य में श्री असीम हालदार, प्रबंधक (कार्मिक) ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

आकाशवाणी केन्द्र, जलगांव

दि० 14 सितम्बर, 95 को हिन्दी पखवाड़े का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ। प्रमुख अतिथि के रूप में स्थानीय मुलजी जेठा महाविद्यालय के उप प्राचार्य एवं हिंदी विभागाध्यक्ष श्री ए० बी० पाटील यहां उपस्थित थे। पखवाड़े के उद्घाटक केन्द्र निदेशक श्री विजय सिंह गावीत जी थे। श्री पाटीलजी ने "अनुवाद कला" विषय पर अपने विचार व्यक्त किये। श्री गावीतजी ने हिन्दी दिवस एवं हिन्दी पखवाड़े का महत्व विषद किया। साथ ही उन्होंने इस पखवाड़े को सफल बनाने का आश्वासन दिया।

इस दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। विजेताओं को पुरस्कृत किया गया।

श्री पुणतांबेकरजी के कर कमलों द्वारा कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किये गये। साथ ही डॉ शंकर पुणतांबेकरजी का सत्कार साहित्य आकाश द्वारा किया गया। हाल ही में उन्हें चक्कलस पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उस उपलक्ष में उनका सत्कार केन्द्र निदेशक श्री विजय सिंह गावीतजी ने किया। डा० पुणतांबेकरजी ने सबसे अधिक हिन्दी में कार्य करने वाले कर्मचारियों को भी पुरस्कार प्रदान किये।

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, अनुवाद प्रशिक्षण केन्द्र, बम्बई

दिनांक 29 सितंबर, 95 को 43वें अनुवाद सत्र का समापन समारोह आयोजित किया गया। अनुवाद सत्र समापन के साथ-साथ सितंबर माह में आयोजित हिन्दी पखवाड़े के पुरस्कार वितरण का समारोह भी सम्पन्न किया गया। इस समारोह के मुख्य अतिथि श्री (डा०) रामजी तिवारी, हिन्दी विभागाध्यक्ष, बम्बई विश्वविद्यालय के करकमलों से राजभाषा पखवाड़े के पुरस्कार तथा अनुवाद सत्र के प्रमाणपत्रों का वितरण किया गया।

डा० रामजी तिवारी द्वारा अनुवाद को एक दुष्कर एवं श्रमसाध्य कला बताया जो सांस्कृतिक एवं सामाजिक सेतु की भांति कार्य करता है और हिन्दी की श्रीवृद्धि करने में एक ठोस माध्यम रहा है। हिन्दी में अनुदित रचना को अन्य भारतीय भाषाओं में पदार्पण करने का अवसर स्वतः ही मिल जाता है। संयुक्त निदेशक श्री के० एन० मेहता द्वारा कार्यालय के अन्दर राजभाषा के प्रचार प्रसार में अनुवाद और अनुवादक के प्रयास को

उल्लेखनीय मानते हुए प्रशिक्षणार्थियों को इस पुनीत एवं संवैधानिक कार्य में अपना भरसक योगदान देने का आह्वान किया गया।

भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद

भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला में हिन्दी सप्ताह का शुभारम्भ, दिनांक 11.9.1995 को शब्द प्रश्नोत्तरी (वर्ड क्विज) से हुआ। इसका उद्घाटन प्रयोगशाला के निदेशक प्रो० जी० एस० अग्रवाल ने किया। प्रो० अग्रवाल ने अपने भाषण में हिन्दी भाषा की महत्ता और उपयोगिता को रेखांकित किया और इसके सरल रूप के प्रयोग पर बल दिया। उन्होंने हिन्दी के सरकारी कामकाज में यथावश्यक सहयोग एवं सहायता देने की बात कही। उन्होंने प्रतिभागियों का उत्साह बढ़ाते हुए इस कार्यक्रम की सफलता की कामना की।

इस दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित कीं। जिसमें प्रतिभागियों ने बड़े उत्साह से भाग लिया।

हिन्दी सप्ताह समारोह आयोजन समिति के अध्यक्ष डा० एस० के० गुप्ता ने अपने धन्यवाद ज्ञापन में कहा कि हिन्दी सप्ताह अपनी प्रयोगशाला में एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रम के रूप में उभरा है। इस कार्यक्रम में सभी वर्गों के कर्मचारी व परिवारों के सदस्य समान रूप से उत्साह पूर्वक भाग लेते हैं। इस सप्ताह के सफल समापन में योगदान के लिए उन्होंने हरेक व्यक्ति के प्रति आभार प्रदर्शित किया। यह हिन्दी सप्ताह समारोह जलपान के साथ पूर्ण हुआ।

यूको बैंक, अजमेर

14 से 20 सितम्बर तक चलने वाले हिन्दी सप्ताह के तहत गुरूवार को अजमेर जिले में विभिन्न संस्थाओं द्वारा अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए।

यूको बैंक मंडल कार्यालय अजमेर में हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में 'दैनिक नवज्योति' के प्रधान सम्पादक दीनबंधु चौधरी ने मुख्य अतिथि पद से कहा कि देश की प्रगति राष्ट्र भाषा को अपनाने से ही हो सकती है। उन्होंने विदेश भ्रमण के संस्मरणों को दोहराते हुए हिन्दी भाषा के महत्व पर प्रकाश डाला और कहा कि विदेशों में भी लोग अपनी मातृभाषा का ही प्रयोग करते हैं।

इस अवसर पर विशेष अतिथि डा० धर्मवीर आर्य ने विदेश प्रवास के संस्मरणों को दोहराते हुए जोर देकर कहा कि अभिव्यक्ति का माध्यम केवल मातृभाषा ही हो सकती है कोई विदेशी भाषा कदापि नहीं। इस अवसर पर यूको बैंक के मंडल प्रबंधक (स्था०) लालचंद जैन ने दोनों अतिथियों का माल्यार्पण कर स्वागत किया तथा अपने भाषण में अजमेर मंडल कार्यालय में राजभाषा नीति को पूरी तरह क्रियान्वित करने का आश्वासन दिया। समारोह के दौरान श्रीमती रजनी दीवान एवं एन० के० आर्य ने भी हिन्दी के प्रयोग की महता पर हिन्दी गीत व कविता प्रस्तुत की।

समारोह का संचालन मंडल कार्यालय के राजभाषा अधिकारी सुरेन्द्र कुमार गुप्ता ने किया। अंत में यूको बैंक पुरानी मंडी अजमेर शाखा के वरिष्ठ प्रबंधक आर० एस० शर्मा ने दोनों अतिथियों एवं उपस्थित नागरिकों को धन्यवाद ज्ञापित किया।

दूरदर्शन केन्द्र, मुजफ्फरपुर

राजभाषा हिन्दी के उत्तरोत्तर विकास, सफल कार्यान्वयन एवं कार्यालय में हिन्दीमय वातावरण बनाने हेतु दूरदर्शन केन्द्र मुजफ्फरपुर में अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बीच हिन्दी सप्ताह का आयोजन दिनांक 14.09.95 से 20.09.95 तक किया गया।

दिनांक 14.09.95 को इस केन्द्र के सहायक केन्द्र अभियंता श्री अर्जुन प्रसाद ने दीप प्रज्ज्वलित कर हिन्दी सप्ताह का शुभारम्भ किया। इस अवसर पर केन्द्र के नामित हिन्दी अधिकारी डॉ० आर०बी० भण्डारकर ने हिन्दी प्रयोग को सरल एवं आसान अभिव्यक्ति का माध्यम बताया। केन्द्र के हिन्दी अनुवादक श्री सुबोध कुमार ने सप्ताह के दौरान होने वाली प्रतियोगिताओं जैसे हिन्दी टिप्पण / आलेखन, हिन्दी निबंध प्रतियोगिता, हिन्दी टंकण प्रतियोगिता एवं तात्कालिक हिन्दी भाषण प्रतियोगिता की जानकारी दी। केन्द्र के निदेशक डॉ० डी०के० राय ने अधिकारियों एवं कर्मचारियों के नाम एक अपील जारी की जिसमें हिन्दी दिवस के अवसर पर अपनी मंगल कामना देते हुए उन्होंने लिखा था कि हमें राष्ट्र की एकता के लिए समर्पित भाव से हिन्दी में कार्य करना है।

मुख्य अतिथि डा० रमेश किरण ने कहा कि हिन्दी भाषा हमें संस्कार में प्राप्त हुई है यह सतत् प्रगतिशील है। निदेशक व सभापति डा० डी० के० राय ने सभी भारतीय भाषाओं में आपसी समन्वय स्थापित करते हुए कहा कि हिन्दी देश का मुख्य पथ है जहां सभी भाषाएं आकर मिलती है। यह माला के मुख्य पुष्प की तरह है यह सम्पूर्ण देश में आसानी से समझी जाने वाली है इसलिए सर्वाधिक उपमुख्य सम्पर्क भाषा भी है। इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक ने सभी विजेताओं को प्रमाण पत्र व पुरस्कार वितरित किए।

बैंक ऑफ बड़ौदा, उत्तरी अंचल, नई दिल्ली

बैंक ऑफ बड़ौदा, अंचल कार्यालय, नई दिल्ली एवं दिल्ली स्थित शाखाओं / कार्यालयों द्वारा संयुक्त रूप से दिनांक 14.9.95 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया।

पखवाड़े के दौरान मुख्य समारोह दिनांक 22.9.95 को वाइएमसीए ऑडिटोरियम में आयोजित किया गया जिसमें राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के उप-निदेशक (कार्यान्वयन) डॉ० गुरूदयाल बजाज ने अपने वक्तव्य में बैंक ऑफ बड़ौदा की प्रशंसा करते हुए कहा कि बैंक ऑफ बड़ौदा ने राजभाषा कार्यान्वयन की दिशा में सभी बैंकों में सर्वोत्तम कार्य किया है जिसके कारण उसे वर्ष 1994-95 के लिए इन्दिरा गांधी राजभाषा पुरस्कारों के अन्तर्गत प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ है। डॉ० बजाज ने आगे कहा कि बैंक ऑफ बड़ौदा, उत्तरी अंचल की शाखाओं में जहां कहीं भी उनको जाने का अवसर मिला है, उन्होंने वहां राजभाषा हिन्दी में अच्छा कार्य पाया है। उन्होंने बैंक को समग्र रूप से सतर्क रहने के लिए कहा है क्योंकि प्रतिस्पर्द्धात्मक वातावरण में दूसरे बैंक भी इस दिशा में शीर्ष स्थान पाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

अंचल के महाप्रबन्धक श्री जी०ए० नायक ने अपने स्वागत भाषण में हिन्दी पखवाड़े के बारे में बताते हुए कहा कि हम न केवल राजभाषा कार्यान्वयन की दिशा में ही सबसे आगे हैं बल्कि हमारा बैंक, बैंकिंग कारोबार के क्षेत्र में भी सभी बैंकों में श्रेष्ठ है, जैसा कि "बिजनेस टुडे" के अप्रैल, 95 के अंक में "क्राइसिल" द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण से भी स्पष्ट है। उन्होंने आगे कहा कि हम बैंक आॅफ बड़ौदा की प्रतिष्ठा को आगे भी इसी प्रकार बनाए रखेंगे।

हिंदुस्तान पेट्रोलियम कार्पोरेशन लि०, विशाखापट्नम

दिनांक 7 से 21 सितंबर के बीच विशाल रिफाइनरी में हिंदी पखवाड़ा उल्लास और उत्साह के साथ भव्यतापूर्वक मनाया गया। इस पखवाड़े के दौरान कर्मचारियों के लिए विभिन्न तरह की प्रतियोगिताएं, राजभाषा प्रदर्शनी, स्थानीय स्कूल, कॉलेजों के विद्यार्थियों के लिए भाषण प्रतियोगिता तथा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, विशाखपट्नम के सदस्य कार्यालयों के कर्मचारियों के लिए हिंदी कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। इन विविधता भरी प्रस्तुतियों के कारण हिंदी पखवाड़े के दौरान एक सजगता का माहौल निर्मित हुआ। दिनांक 7 सितंबर 95 को हिंदी पखवाड़ा का उद्घाटन श्री एम ए टांकीवाला, महाप्रबंधक-रिफाइनरी के मुख्य आतिथ्य में हुआ, जिसमें श्री वी डी महाजन, महाप्रबंधन-परियोजनाएं विशेष अतिथि थे। अध्यक्षता श्री बी के घोष, उप महाप्रबंधक-कार्मिक व प्रशासन ने की। श्री टांकीवाला ने अपने भाषण में कहा कि हम जिस तरह हिंदी को समर्पित होकर कार्य कर रहे हैं और नये लक्ष्य प्राप्त कर रहे हैं मुझे उम्मीद है कि हम नये नये लक्ष्य प्राप्त करेंगे और नई मंजिलों को छुयेंगे।

अध्यक्षीय आसन से बोलते हुए बी के घोष ने हिंदी पखवाड़े के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला और कहा कि हम हिंदी के इतना भव्य समारोह मनाते हैं एवं इसके पीछे हमारा उद्देश्य होता है कि इसको अधिकाधिक प्रचार-प्रसार देकर कामकाज में हिंदी कार्यान्वयन को नयी दिशा दें, नये लक्ष्य प्राप्त करें। अपने भाषण में श्री महाजन ने हिंदी की बढ़ती हुई लोकप्रियता की प्रशंसा की और कहा हम निरंतर नये लक्ष्य प्राप्त कर रहे हैं और यह हमारे लिए गर्व की बात है कि हम विशाखापट्नम के 67 सरकारी संस्थानों में हिंदी कार्यान्वयन के लिए दूसरा पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं। हम कोशिश करें कि हम पहले स्थान को प्राप्त करें।

उद्घाटन समारोह के बाद महाप्रबंधक-रिफाइनरी श्री एम ए टांकीवाला ने विशाख रिफाइनरी प्रशिक्षण संस्थान के "समेधा" में आयोजित राजभाषा प्रदर्शनी का उद्घाटन किया।

भारतीय स्टेट बैंक, गुंटूर

दिनांक 8 से 18 सितम्बर, 1995 तक राजभाषा समारोह मनाया गया। उक्त अवधि के दौरान बैंक में हिन्दी प्रयोग को बढ़ावा देने हेतु (1) स्टाफ सदस्यों के बीच और उनके बच्चों के बीच किवजू (2) शब्द निर्माण (3) वाक प्रतियोगिता (4) पत्र लेखन (5) निबन्ध (6) अनुवाद आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

समारोह का आरंभ श्री एम० खाजावली, सचिव राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय स्टेट बैंक, गंटूर, के स्वागत भाषण से हुआ। समारोह की अध्यक्षता श्री के० शंकर राव, सहायक महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, गुंटूर ने को और श्री पि० रघु, उपायुक्त (आयकर) मुख्य अतिथि थे। हिन्दी प्रचार में योगदान देने वाले और भारतीय स्टेट बैंक, गुंटूर को समय— समय पर अपना सुझाव, सहयोग, सूचना और सहायता आदि देने वाले दो व्यक्तिः डा० सुनील कुमार लोका, हिन्दी प्राध्यपक और श्रीमती दुर्गा नागावेणी लोका, प्रध्यापिका को सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि डा० पि० रघु ने प्रतियोगिताओं में विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए।

मुख्यालय, मुख्य अभियन्ता, चेतक परियोजना, द्वारा 56 सेना डाकघर

चेतक परियोजना द्वारा हिन्दी सप्ताह का आयोजन 14 सितम्बर 95 से 20 सितम्बर 95 तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। सप्ताह के दौरान मुख्य रूप से विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। प्रतियोगिता के अलावा हिन्दी में सर्वाधिक तथा अपेक्षित सीमा तक कार्य करने पर आन्तरिक स्तर पर ई 3 अनुभाग को ईन्टर सेक्शन "हिन्दी ट्राफी" देकर सम्मानित भी किया गया।

समापन समारोह के अध्यक्षीय भाषण पर मुख्य अभियन्ता जे० विश्वनाथन ने कहा कि इस आयोजन पर इस मुख्यालय के कार्मिकों ने ज्यादा से ज्यादा संख्या में भाग लेकर इस आयोजन को सफल बनाया है जिसके लिये उन्होंने उन सबों को शाबासी दी है। उन्होंने आशा प्रकट की कि हिन्दी में ज्यादा काम करके चेतक परियोजना को सर्वोपरि स्थान देंगे। उन्होंने अनुरोध किया कि सदैव सरल हिन्दी भाषा का प्रयोग करें जिसे सभी आसानी से समझ सकें।

केन्द्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पोर्ट ब्लेयर

संस्थान के निदेशक डा० ए०के० बन्द्योपाध्याय की अध्यक्षता में 20 सितंबर 1995 को "हिन्दी सप्ताह" समापन का समारोह का आयोजन किया गया जिसमें कार्यालय के सभी अधिकारियों और कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस अवसर पर कर्मचारियों तथा बच्चों के लिए निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया तथा निदेशक द्वारा विभिन्न राजभाषा प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार, प्रमाण पत्र, नकद पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया गया। अपने अध्यक्षीय भाषण में संस्थान के निदेशक ने कहा कि द्वीपों की संपर्क भाषा हिन्दी है तथा किसानों को सिर्फ हिन्दी को आधार देकर ही तकनीकी हस्तांतरण किया जा सकता है, जो कि उनकी प्रगति के लिए जरूरी है। उन्होंने सभी से अनुरोध किया कि हर अधिकारी/कर्मचारी अपने कार्य का कम से कम 10 वाक्य प्रतिदिन हिन्दी में लिखे तथा हस्ताक्षर अनिवार्य रूप से हिन्दी में करें। सभी तकनीकी सामग्री अनिवार्य रूप में द्विभाषी या हिन्दी में जारी किया जाए। हिन्दी के साथ अन्य भारतीय भाषाओं को किसानों के हित के लिए प्रयोग करें, न कि अंग्रेजी को आधार मानकर।

इसी दिन संस्थान में एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का भी आयोजन किया गया जिसमें 120 से अधिक अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। प्रतिभागियों को संघ की राजभाषा, नीति, अधिनियम, प्रोत्साहन योजना, सामान्य टिप्पणी आदि के बारे में बताया गया। संस्थान के

अधिकारियों द्वारा सरकारी कामकाज में राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रति जागरूकता पैदा करने तथा इसके प्रगामी प्रयोग में गति लाने के लिए अपने सुझाव प्रस्तुत किये गये।

नेशनल टेक्स्टाइल कारपोरेशन (एम०एन०) लि०, बम्बई

कार्यालय में निगम के अध्यक्ष श्री डी०आर० मेहता की अध्यक्षता में दिनांक 14.9.1995 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया।

समारोह के मुख्य अतिथि प्रो० श्री अगम शर्मा, खालसा कालेज, बम्बई ने अपने भाषण में हिन्दी की गारिमा पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हिन्दी लोगों को जोड़ने वाली भाषा है। शासन तथा जनता के बीच विचारों के आदान-प्रदान की एक सशक्त कड़ी है। प्रो० शर्मा जी ने अपने भाषण में हिन्दी के प्राकृतिक स्वरूप का बड़ा ही जीवन्त निरूपण किया। निगम के निर्देशक (कार्मिक) ने अपने भाषण में निगम द्वारा किए गए कार्यों की जानकारी से लोगों को अवगत कराया। निगम के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री डी०आर० मेहता ने अपने अध्यक्षीय भाषण में निगम कार्यालय में हो रहे हिन्दी के कार्य प्रति संतोष प्रकट करते हुए लोगों को विश्वास दिलाया कि भविष्य में भी हम इसी तरह हिन्दी में और भी अधिक और अच्छा कार्य करेंगे जिससे कि न केवल हम सरकार द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को पूरा कर सकेंगे बल्कि राजभाषा हिन्दी के उत्तरोत्तर विकास में अपना सबल सहयोग प्रदान करेंगे।

इस अवसर पर निगम कार्यालय में अपना ज्यादा से ज्यादा कार्य हिन्दी में करने वाले अधिकारियों तथा कर्मचारियों को नकद पुरस्कार तथा प्रमाण-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया।

क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त कार्यालय, बेंगलूर

दिनांक 3.9.95 से 15.09.95 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई।

14 सितंबर 95 को पुरस्कार वितरण समापन समारोह आयोजित किया गया जिसमें क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त महोदय श्री ए० विश्वनाथन के विजेताओं को प्रमाण-पत्र तथा नकद पुरस्कार वितरित किए।

सेन्ट्रल बैंक आफ इंडिया, मेरठ

क्षेत्र की शाखाओं द्वारा 1 से 15 सितम्बर 95 तक हिन्दी पखवाड़ा बड़े वर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया गया। मुख्य समारोह क्षेत्रीय कार्यालय मेरठ में 14 सितंबर 95 को किया गया। समारोह का उद्घाटन नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, मेरठ के अध्यक्ष एवं आयकर आयुक्त श्री अभयनन्दन प्रसाद जी ने किया। इस अवसर क्षेत्रीय कार्यालय में हिंदी में किये जा रहे कार्यों की एक राजभाषा प्रदर्शनी भी लगायी जिसका अवलोकन मुख्य अतिथि ने किया।

आकाशवाणी, अगरतला

दिनांक 4.9.95 को आकाशवाणी, अगरतला में हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया।

हिन्दी अधिकारी ने संगोष्ठी कक्ष में उपस्थित सभी गणमान्य व्यक्तियों और प्रतिभागियों को हार्दिक स्वागत से सम्मानित किया तथा हिन्दी और हिन्दी पखवाड़े की महत्वता पर प्रकाश डाला। तदोपरान्त केन्द्र अभियंता श्रीमती अनिमा दास ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का कानूनी दर्जा मिला होने की ओर सभी का ध्यान आकर्षित किया तथा विशेष रूचि लेकर हिन्दी सीखने और सरकारी कामकाज हिन्दी में करने पर बल दिया। कविता पाठ प्रतियोगिता में 26 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। श्री एस० के० बसु, कार्यक्रम निर्वाहक, श्रीमती सुमिला दाम-प्रसारण सहायक एवं श्री आशीष पाल-आशुलिपिक को क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय विजेता घोषित किया गया।

श्रुतलेखन प्रतियोगिता में 12 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। श्रीमती नंदिता दत्त, श्रीमती शिप्रा देब एवं पुरेन्दु सरकार-निम्न श्रेणी लिपिकों को क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय विजेता घोषित किया गया।

हिंदी निबंध प्रतियोगिता में 10 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। श्रीमती शिप्रा देब, निम्न श्रेणी लिपिक, श्री विश्वजीत भट्टाचार्य-उच्च श्रेणी लिपिक एवं कुमारी नवनीता घोष, निम्न श्रेणी लिपिक को प्रतियोगिता में क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान का विजेता घोषित कर सममानित किया गया।

निदेशक, श्री एन०सी० देब वर्मा ने व्याख्यान देते हुए बताया कि केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए हिन्दी का प्रशिक्षण अनिवार्य है हिन्दी प्रशिक्षण एवं सरकारी कामकाज हिन्दी में करने के लिए प्रोत्साहन देने की व्यवस्था है, इसलिए सभी को हिन्दी का प्रशिक्षण प्राप्त करना तथा सरकारी कामकाज हिन्दी में करना भी अनिवार्य है।

आकाशवाणी, सिलचर

1 सितंबर 15 सितंबर, 1995 तक आकाशवाणी सिलचर में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन किया गया। समारोह के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। पुरस्कार वितरण दिनांक 14.9.95 को किया गया। दिनांक 11.9.95 एवं 14.9.95 के सभा की अध्यक्षता श्री गोपाल चन्द्र शुक्लवैद्य, केन्द्र निदेशक ने किया। मुख्य अतिथि केन्द्रीय विद्यालय संगठन के सहायक आयुक्त श्री जी०डी० शर्मा थे।

अध्यक्ष महोदय ने अपना उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जिसके माध्यम से विभिन्न प्रांतों के लोग आपस में एक साथ मिलने पर अपने विचार व्यक्त करते हैं। उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा कि दक्षिण भारत के लोग जब देश के अन्य प्रांतों में जाते हैं तो वे संवाद के लिए हिन्दी का ही सहारा लेते हैं। प्रचार माध्यम एवं सिनेमा के माध्यम से हिन्दी का विकास काफी हुआ है। देश के हर कोने के लोग इसे आसानी से समझ लेते हैं। बोलचाल में तो हिन्दी का काफी प्रयोग हो रहा है। केवल समस्या है इसे कार्यालय में लिखने-पढ़ने की व्याकरण की अशुद्धि के कारण और शब्दों का सही ज्ञान न होने के कारण कठिनाई होती है। फिर भी हमें अधिक-से-अधिक प्रयास करना चाहिए।

मुख्य अतिथि श्री जी०डी० शर्मा० ने अपना विचार प्रकट करते हुए कहा कि प्रतिवर्ष हम लोग हिन्दी दिवस मनाते हैं और हिन्दी दिवस समाप्त होते ही हिन्दी की बात भूल जाते हैं। यह तो प्रतिवर्ष होने वाला एक उत्सव हो गया है जिसे वर्ष में एक बार ही याद किया जाता है। यहां तक कि हिन्दी

दिवस तो मना रहे हैं लेकिन काम अंग्रेजी में ही कर रहे हैं। इस तरह तो कार्यालय में हिन्दी का विकास कभी संभव नहीं होगा। इसके विकास के लिए हमें प्रतिदिन हिन्दी दिवस मनाना होगा। यदि सप्ताह में कम-से-कम एक दिन हम हिन्दी दिवस कर सारा काम हिन्दी में करें तो यह एक अच्छी शुरूआत होगी।

मुख्य अतिथि ने विभिन्न प्रतियोगिताओं के सफल प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र वितरित किया।

कार्यालय आयकर आयुक्त, आयकर भवन, भैंसाली ग्राउन्ड मेरठ

14 सितंबर, 1995 से 20 सितंबर, 1995 तक "हिन्दी सप्ताह" का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। हिन्दी निबंध प्रतियोगिता, हिन्दी टिप्पण व प्रारूप लेखन प्रतियोगिता, हिन्दी भाषण प्रतियोगिता तथा काव्य पाठ प्रतियोगिता आयोजित की गई। सरकारी कामकाज मूल रूप से हिन्दी में करने के लिए प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत अनेक अधिकारियों/कर्मचारियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।

हिन्दुस्तान फ़ोटो फ़िल्म का विपणन प्रधान कार्यालय, मद्रास

हिन्दुस्तान फ़ोटो फ़िल्मस मैन्यु कं० लिमिटेड के विपणन प्रधान कार्यालय, मद्रास, में हिन्दी सप्ताह मनाया गया। इस सिलसिले में हिन्दी क्विज, अंताक्षरी, हिन्दी टंकण जैसी कई प्रतियोगिताएं आयोजित की गयी। मुख्य समारोह 14.9.1995 को संपन्न हुआ। श्री ए०आर० मुरली, व०प्र०वि०, श्रीमती विजयलक्ष्मी, अनु० अधि० (हि०), श्री पी० राजा, व०प्र० (अ०) के साथ हिन्दी लेखक, श्री कण्णन ने भी मुख्य अतिथि के रूप में समारोह में भाग लिया। श्री वी० रामदुरै, स०प्र० (प्रशा०) ने धन्यवाद समर्पित किये।

केंद्रीय उत्पाद शुल्क कार्यालय, जमशेदपुर

आयुक्त, कार्यालय केन्द्रीय उत्पाद शुल्क जमशेदपुर में 14 सितंबर को हिन्दी दिवस का आयोजना किया गया। इस अवसर पर श्री सुजीत कुमार सिन्हा, उपायुक्त ने दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का उद्घाटन किया। उन्होंने अपने संबोधन में हिन्दी को सही अर्थों में अपनाकर दैनिक जीवन में उसका प्रयोग करने पर बल दिया।

कार्यक्रम का संचालन कर रहे श्री शैलेन्द्र नाथ दूबे, वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक ने सरकारी अपेक्षाओं एवं आदेशों की चर्चा की तथा राजभाषा हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करने का अनुरोध किया। इस अवसर पर अनेक अधिकारियों ने भी अपने उद्गार व्यक्त किये।

तत्पश्चात् दिनांक 15 सितंबर के दौरान हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया गया। इसके दौरान हिन्दी निबंध लेखन प्रतियोगिता वाद-विवाद प्रतियोगिता, स्वरचित कविता पाठ प्रतियोगिता अहिन्दी भाषी अधिकारियों की प्रतियोगिता एवं प्रश्नोत्तरि प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में विभागीय अधिकारियों ने पूरे उत्साह के साथ भाग लिया। प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत किए गए अधिकारियों का विवरण इस प्रकार है।

21 सितंबर को पूरे उत्साह के साथ हिन्दी सप्ताह समापन समारोह का आयोजन किया गया। अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए श्री सुजीत कुमार सिन्हा, उपायुक्त ने सांस्कृतिक अभिरूचि का प्रदर्शन करने का सुझाव दिया। उन्होंने कहा कि सांस्कृतिक प्रगति से मानसिक प्रगति होगी तथा राजभाषा हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने में सफलता मिल सकेगी।

प्रतियोगिता के विजेताओं को श्री सिन्हा ने पुरस्कृत कर उन्हें प्रोत्साहित किया। तत्पश्चात् श्री शैलेन्द्र नाथ दूबे वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक ने भी अपने विचार रखें। कार्यक्रम श्री यू० एन० कर्मकार ने अपने जादू से सभी दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया।

गुणता आश्वासन निदेशालय, बम्बई

1 सितम्बर से 15 सितम्बर तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। पहली सितम्बर को जारी अपील में निदेशक (गु० आ०) श्री आर० एस० अरोड़ा ने कार्यालय में हिंदी की प्रगति पर संतोष व्यक्त किया तथा अधिकारियों से विशेष अनुरोध किया कि वे न केवल अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को हिंदी में काम करने के लिए प्रोत्साहित करें बल्कि स्वयं हिंदी में काम करके उनके सामने उदाहरण प्रस्तुत करें।

हिंदी पखवाड़े के दौरान तीन प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। हिंदी टंकण प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार कु० चित्रा गाठे को तथा द्वितीय पुरस्कार श्री किशोर भिमटे को प्राप्त हुआ। कवितापाठ प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार श्री एल० टी० भोंडेकर को तथा द्वितीय पुरस्कार श्री ए० एस० चड्ढा को प्राप्त हुआ। वाक् प्रतियोगिता में पहला पुरस्कार श्री विश्वकर्मा ने और दूसरा पुरस्कार श्री किशोर भिमटे ने प्राप्त किया। प्रतियोगिता के निर्णायक श्री ए० के० सत्वाह और श्री ए० एन० तलवार थे।

हिंदी दिवस 14 सितम्बर को आयोजित एक विशेष समारोह में निदेशक (गु० आ०) श्री आर० एस० अरोड़ा ने विजेता प्रतियोगियों को पुरस्कार स्वरूप चिन्ह और प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, ईटानगर

14 सितंबर 1995 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, ईटानगर की ओर से एक भव्य हिंदी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। केन्द्रीय विद्यालय के छात्रों द्वारा सरस्वती वंदना की प्रस्तुति के साथ ही कार्यक्रम का समारंभ हुआ।

समिति के अध्यक्ष तथा भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के प्रभारी निदेशक श्री बी० के० रैना ने कहा कि हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा है तथा इसका विकास और उन्नयन हम सभी का दायित्व है। श्री रैना ने अपना भावोद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि 14 सितंबर का दिन भारतीय भाषाओं के लिए अति महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी दिन 1949 में भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया था तथा भारत की अन्य भाषाओं के विकास के लिए भी स्पष्ट दिशा-निर्देष दिया गया था। उन्होंने कहा कि आजादी के चार दशक से अधिक समय बीत चुका है लेकिन अभी तक हम लोग अपनी भाषा को वह स्थान नहीं दे सके हैं जो अपेक्षित था। विश्व के अनेक छोटे-छोटे देश भी अपनी भाषा को महत्व देते हैं और अपना कामकाज स्वभाषा में करते हैं परंतु हम लोग अभी तक हिन्दी को पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित नहीं कर सके हैं जो अनुचित

है। हिन्दी भाषा के विकास से अन्य भारतीय भाषाओं का विकास जुड़ा हुआ है।

मुख्य अतिथि के पद से बोलते हुए श्री अविनाश कुमार मिश्रा ने कहा कि हिंदी का विकास करना हम सबका सामुहिक दायित्व है क्योंकि यही एक भाषा है जो भारत में सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। हिंदी एक विशाल प्रवाह है जो कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा केरल से असम तक सर्वत्र बोली जाती है। हिंदी जाननेवाले व्यक्ति को भारत में कहीं भी कोई कठिनाई नहीं होगी। मुख्य अतिथि महोदय ने जोर देकर कहा कि हिंदी दिवस की सार्थकता तभी सिद्ध होगी जब देश का कामकाज हिंदी में होने लगेगा।

रक्षालेखा नियंत्रक (दक्षिण कमान) कार्यालय (पुणे)

सितंबर माह के प्रथम पक्ष को हिंदी पखवाड़े के रूप में मनाया गया। इस दौरान कार्यालय के सदस्यों के बीच विविध हिंदी प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। मुख्य समारोह 14 सितंबर हिंदी दिवस की संध्या में संपन्न हुआ जिसमें हिन्दी-मराठी के एक प्रभावपूर्ण गीत-संगीत कार्यक्रम के पश्चात् प्रतियोगिताओं के यशस्वी प्रतिभागियों को रक्षालेखा नियंत्रक के हाथों पुरस्कार प्रदान किए गए। सुश्री मीरा लाटकर, श्रीमती सुलभा तेरणीकर, श्री गोपालचंद्र गुप्त, श्री अशोक गाडगे, श्री सुहास आगरकर, श्री श्रीहरि जोशी, श्री किशोर ठेकेदार, श्री स्वा० विश्वनाथन ने विशिष्ट पुरस्कार प्राप्त किए। सर्वोत्कृष्ट हिंदी कार्य के लिए 'संवितरण भुगतान एवं निधि अनुभाग' की ओर से लेखा अधिकारी श्री पा०अ० धर्माधिकारी ने चल वैजयंती प्राप्त की।

रक्षा लेखा नियंत्रक श्री श्री शा० सवदी ने अधिकारियों और कर्मचारियों का आह्वान किया कि वे हिंदी के प्रयोग और प्रसार में मनःपूर्वक आगें आएं और हिंदी में मौलिक रूप से विचार को उद्भासित करने का प्रयास करें जिससे अनुदित भाषा की अस्वाभाविकता और जटिलता से बच कर हिंदी को उसके सरल-सहज और स्वभाविक भाषारूप में विकसित होने के कार्य की गति प्राप्त हो। उन्होंने आश्वासन दिया कि संघ की नीति हिंदी को थोपने की नहीं है बल्कि इसे राष्ट्रीय आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए प्रेम और प्रोत्साहन द्वारा आगे बढ़ाने की है। उन्होंने इस दिशा में हिन्दी के विविध कार्यक्रमों, कार्यशालाओं, पत्रिका-प्रकाशनों और विभिन्न प्रतियोगिताओं आदि के आयोजनों के महत्व को रेखांकित किया।

मुख्यालय सीमा सड़क महानिदेशालय

मुख्यालय सीमा सड़क महानिदेशालय में दिनांक 01 सितम्बर से 15 सितम्बर, 95 तक सचिवालय सीमा सड़क विकास मंडल, मुख्यालय सीमा सड़क महानिदेशालय एवं रक्षा लेखा नियंत्रक (सीमा शुल्क) के कार्यालयों ने संयुक्त रूप से हिन्दी दिवस/पखवाड़े का आयोजन बड़े उत्साह के साथ किया। इस पखवाड़े के दौरान कर्मचारियों का हिन्दी के प्रति उत्साह और जागरूकता बढ़ाने की दृष्टि से प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। इन प्रतियोगिताओं में काफी संख्या में कर्मचारियों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया। उपरोक्त प्रतियोगिताओं में जिन अधिकारियों / कर्मचारियों ने प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया उन्हें नकद पुरस्कार एवं प्रशस्ति पत्र से और जो कर्मचारी कोई स्थान प्राप्त न कर सके उनका मनोबल बढ़ाने के लिए सांत्वना पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

हिन्दी दिवस/पखवाड़े के दौरान उपरोक्त तीनों कार्यालयों ने मिलकर "स्मारिका-1995" नामक हिन्दी पत्रिका प्रकाशित की।

कल्याण मंत्रालय

कल्याण मंत्रालय में हिन्दी पखवाड़े का आयोजन 14 सितम्बर से 28 सितम्बर, 1995 तक किया गया। सचिव (कल्याण) 14 सितम्बर को दौरे पर होने के कारण इस आयोजन का शुभारम्भ श्री डी०के० मणवालन, अपर सचिव द्वारा माननीय गृह मंत्री जी तथा कल्याण मंत्री जी के संदेशों को पढ़ा गया। इसी अवसर पर संयुक्त सचिव (प्रशासन) श्री भगवती प्रसाद, ने कहा कि सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार मंत्रालय के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करना है। उन्होंने आगे कहा कि देश की एकता एवं अखण्डता के लिए भी हिन्दी का अपना विशेष महत्व है।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान मंत्रालय के अधिकारियों/कर्मचारियों में राजभाषा हिन्दी के प्रति रूचि को बनाए रखने के लिए हिन्दी, निबन्ध, हिन्दी टंकण, हिन्दी टिप्पण और आलेखन, जैसी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में अधिकारियों/कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। निबन्ध प्रतियोगिता में बंगला, तमिल, तेलगु, मलयालम भाषी प्रतियोगियों ने भाग लेकर बहुत अच्छे निबन्ध लिखे और इन प्रतियोगिताओं में कुल मिलाकर 16 नकद पुरस्कार प्रदान किए गए। इसी अवसर पर हिन्दी में विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालने वाले चार वृत्तचित्रों तथा कंप्यूटर की वाणी, नई सुबह की ओर, हिन्दी सब संचार तथा एकता की वाणी को भी दिनांक 22.10.1995 को मंत्रालय के अधिकारियों / कर्मचारियों को दिखाया गया। हिन्दी दिवस / हिन्दी पखवाड़ा आदि संबंधी परिपत्र संदेश आदि कल्याण मंत्रालय के नियत्राणाधीन सभी कार्यालयों आदि को भेजे जाए। दिनांक 26.9.1995 को मंत्रालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक संयुक्त सचिव (प्रशासन) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई और इस समिति के निर्णय के अनुसार राजभाषा हिन्दी के कार्य में रूचि बनाए रखने के लिए हिन्दी कार्यशाला का आयोजन भी किया गया जिसमें 40 कर्मचारियों / अधिकारियों ने भाग लिया।

विद्युत मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की दिनांक 24 अगस्त, 1995 की बैठक में पावर ग्रिड, कार्पोरेशन के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री एस॰ सी॰ सुरेश पारख का वक्तव्य

माननीय श्री साल्वे जी, विद्युत राज्य मंत्री श्रीमती / डॉ॰ उर्मिला वेन पटेल, विशेष सचिव श्री अजीत कुमार, सलाहकार समिति के सदस्यगण व सभी अतिथिगणों, सलाहकार समिति की समीक्षा बैठक में मैं अपनी तथा निगम की और से माननीय मंत्री जी, अध्यक्ष C.E.A. का अभिनन्दन करता हूं।

हमारे निगम की स्थापना अक्टूबर, 1989 को हुई किन्तु निगम की गतिविधियां वास्तविक रूप से वर्ष 1992 से ही प्रारम्भ हुई है। इन साढ़े तीन वर्षों की अल्प अवधि में जिस प्रकार पावरग्रिड ने अपने अन्य कार्य क्षेत्रों में अद्वितीय सफलता हासिल की है उसी प्रकार राजभाषा के क्षेत्र में भी एक आश्चर्यजनक सफलता पाई है। मैं तो यह कहूंगा कि हमारे निगम में इस क्षेत्र में एक क्रांति सी आई है। बाहर लगाई गई प्रदर्शनी से इस संबंध में आपने कुछ अंदाजा लगा ही लिया होगा।

निगम द्वारा नियमों अधिनियमों और निर्देशों के प्रावधानों का शतप्रतिशत पालन करने का निरंतर प्रयास किया जा रहा है। जैसेः—

पावरग्रिड राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक की अध्यक्षता निदेशक स्तर पर की जाती है जिसमें अन्य सभी निदेशक / महाप्रबंधक / विभागाध्यक्ष इसके सदस्य हैं और भाग लेते हैं। सभी सदस्य अपने-अपने विभाग में हुई राजभाषा कार्यों के लिए नोडल अधिकारी भी हैं। यह अधिकारी अपने-अपने विभाग में हर तिमाही में किए गए कार्यों की रिपोर्ट व समीक्षा प्रस्तुत करते हैं। वर्ष में एक बार अध्यक्ष महोदय स्वयं इस बैठक की अध्यक्षता करते हैं।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मंत्रालय की कार्यान्वयन समिति की सिफारिश पर निगम के प्रत्येक विभाग में राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति का गठन किया गया है जिसकी मासिक बैठकें नियमित रूप से आयोजित की जाती है और जिनकी अध्यक्षता संबंधित स्वयं करते हैं। प्रत्येक बैठक में किए गए कार्यों व प्रयासों पर विचार-विमर्श किया जाता है व आगामी माह के लिए लक्ष्य निर्धारित किया जाता है।

इसके फलस्वरूप एक के बाद एक विभाग में अति तकनीकी कार्य भी अब हिन्दी में होने लगे हैं। इन प्रयासों से जिन तकनीकी विभागों में राजभाषा के क्षेत्र में सचमुच की क्रांति आई है उनमें प्रमुख हैं अभियांत्रिकी विभाग, लोड डिस्पैच एवं संचार विभाग, कारपोरेट मॉनीटरिंग ग्रुप, केन्द्रीय सामग्री विभाग, मेन्टीनेन्स विभाग आदि। परिणामस्वरूप प्रोजेक्ट रिपोर्ट व केवल शेडयूल तक भी हिन्दी में तैयार होने लगी है। साथ ही बैठकों के कार्यवृत्त लोड डिस्पैच एवं संचार, मानीटरिंग ग्रुप, अभियांत्रिकी विभाग, कंपनी सचिवालय इत्यादि से द्विभाषी रूप में डिग्लॉट फार्म में जारी होने लगे हैं। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय कार्मिक व प्रशासन विभाग, समय पालन कार्यालय, सतर्कता विभाग, विधि विभाग आदि में बड़े पैमाने पर कार्य हिन्दी में ही हो रहा है।

नियमों के अंतर्गत जो भी कागजात दोनों भाषाओं में जारी करने अनिवार्य है निगम द्वारा विशेष प्रयास किया गया है कि यह कागजात एक साथ डिग्लॉट फार्म में ही जारी हों। जिसमें हिन्दी पहले छापी जाएं।

विभिन्न बैठकों व चर्चाओं के दौरान यह पाया गया है कि हिन्दी में दिए गए आदेशों व विचारों में अधिक स्पष्टता रहने के कारण ज्यादा कुशलतापूर्वक कार्य किया जा सकता है। हमारा अनुभव है कि सभी कार्यालयों में हिन्दी में काम हो सकता है। इसके लिए केवल आवश्यकता है हिन्दी में कार्य करने के लिए मानसिकता का निर्माण करने की। अतः

1. स्वंय मेरे द्वारा व सभी निदेशकों द्वारा हस्ताक्षर व हाथ से लिखी जाने वाली टिप्पणियां अधिकांश हिन्दी में ही लिखी जाती हैं।
2. हमारे यहां कई वरिष्ठ अधिकारी अपना शत प्रतिशत कार्य केवल हिन्दी में करते हैं।
3. सभी उच्चस्तरीय बैठकों में तथा सम्मेलनों में सम्बोधन व चर्चा निदेशकगण द्वारा हिन्दी में ही प्रारम्भ करते हैंः— फलस्वरूप सभी लोग हिन्दी में चर्चा करने लगते हैं।
4. आज हमारे कार्यालय में हिन्दी को सहज स्वाभाविक रूप से प्रयोग करने का वातावरण बन गया है।
5. समय-समय पर हिन्दी में कार्य करने की प्रवृति को बढ़ावा देने के लिए विशेषज्ञों को आमंत्रित किया जाता है।

हमारा निगम मूल पत्राचार में हिन्दी के प्रयोग का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु वचनबद्ध है। जो भी कर्मचारीगण आज पावरग्रिड परिवार के सदस्य हैं इसका बड़ा भाग अन्य निगमों के ट्रांसमीशन सिस्टम के साथ पावरग्रिड में आया था। अतः टाइपिस्टों एवं स्टेनोग्राफर आदि का बड़ा अनुपात हिन्दी टाईपिंग / स्टेनोग्राफी में प्रशिक्षित नहीं था तथा कर्मचारियों को कार्यसाधक ज्ञान भी नहीं था।

इन सब कमियों के होते हुए भी हिन्दी पत्राचार को अपेक्षाओं व राष्ट्रीय कार्यक्रमों के अनुरूप बढ़ाने के प्रति हमारी वचनबद्धता व सरकारी नीतियों

को पूर्ण निष्ठा से लागू करने का हमारा संकल्प पूर्ण हो इसलिए राजभाषा प्रचार-प्रसार की प्रक्रिया में प्रारम्भिक कदम विभिन्न चरणों में अत्यंत सजगता से योजनाबद्ध ढंग से उठाए गए हैं। जैसेः—

1. शत प्रतिशत हस्ताक्षर हिन्दी में करने का प्रयास।
2. वरिष्ठतम अधिकारियों द्वारा हाथ से लिखी जाने वाली टिप्पणियों को केवल हिन्दी में लिखने का "संकल्प" तथा
3. मंगलवार और शुक्रवार को हिन्दी दिवस घोषित किया जाना।
4. दूसरे चरण में इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिन्दी शिक्षण, टाइपिंग व स्टेनोग्राफी प्रशिक्षण के लिए निगम कार्यालय परिसर में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए गए हैं ताकि प्रभावी ढंग से प्रशिक्षण प्रदान कर राजभाषा हिन्दी में सभी कर्मचारियों को कार्य करने में सक्षम बनाया जा सके।

इन सब की वजह से आज हमारा पत्राचार पिछले 3 वर्षों में 0.5% प्रतिशत से आज 58 प्रतिशत हो गया है।

धारा 3.3 के अनुपालन को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए विभिन्न चेक पॉइंट (जांच बिन्दु) बनाए गये हैं।

1. जैसे यदि मोहरें नामपट्ट विजिटिंग कार्ड, इत्यादि द्विभाषी नहीं बनवाए गए तो वित्त विभाग इनके बिल पास नहीं करेगा।
2. सामान्य आदेश द्विभाषी ही जारी हों इसके लिए राजभाषा विभाग व डिस्पैच को जांच बिन्दु बनाया गया है।
3. प्रकाशन सामग्री के छपवाए जाने की दिशा में सामगरी विभाग को पूर्णतया उत्तरदायी बनाया गया है सभी फर्म व मानक मसौदे द्विभाषी छपवाएं गए हैं।
4. छपने के बाद सामान्यतः यह फार्म आदि हिन्दी में भरे जाएं इसके लिए भी प्रयास जारी हैं।
5. डायरी वार्षिक रिपोर्ट एवं अन्य प्रकाशन सामग्री जैसे फलैश, ग्रिड समाचार भी द्विभाषी छपवाएं जाते हैं।
6. माननीय सदस्यों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हमारे सभी टाईपराइटर द्विभाषी हैं।
7. इस वर्ष के अंत तक सभी कम्प्यूटरों को भी द्विभाषी करने के लिए विशेषज्ञों की मदद ली जा रही है।
8. राजभाषा हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए हर विभाग में हिन्दी के समाचार पत्र व पत्रिकाएं नियमित रूप से पढ़ने के लिए दी जाती हैं।
9. पुस्तकालय में काफी मात्रा में हिन्दी की पुस्तकें हैं। हिन्दी पुस्तकालय को और अधिक समृद्ध बनाने के लिए प्रत्येक तिमाही में इसमें काफी मात्रा में वृद्धि की जाती हैं।
10. कार्यपालकों व अकार्यपालकों के लिए कार्यशालाओं का नियमित आयोजन किया जाता है। साथ ही एक ही विभाग के सभी कार्मिकों की एक साथ कार्यशाला उनके विभाग के कार्य को ध्यान में रखते हुए करवाई की जाती है, ताकि व्यवहार में कहीं कोई बाधा हो तो दूर की जा सके।
11. कुछ कार्यशाला विशेष रूप से वरिष्ठ अधिकारियों, महाप्रबंधकों व निदेशक मण्डल के सदस्यों के लिए भी आयोजित की जाती है ताकि व्यवहारिक आधार पर राजभाषा में कार्य करने की मानसिकता को बल मिले।
12. टाईम आफिस, सामग्री अनुरक्षण, कार्मिक एवं सुरक्षा विभाग ने अपना सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में करना प्रारम्भ कर दिया है।
13. इंजीनियरिंग विभाग, मानीटरिंग ग्रुप, वित्त विभाग ने भी अपना काफी काम हिन्दी में करना प्रारम्भ कर दिया है।
14. भवन के सभी तलों पर हिन्दी की सूक्तियां एवं कैलेन्डर लगाए गए हैं।
15. हमने अपने स्थापना वर्ष से ही निगम में "हिन्दी सप्ताह" का आयोजन किया है एवं इसमें सभी वर्गों के कर्मचारियों ने अत्यंत उत्साह से भाग लिया है। वर्ष 1992 में आयोजित हिन्दी सप्ताह में 400 में से 200 कर्मचारियों ने विभिन्न प्रतियोगिताओं में भाग लिया व पुरस्कार जीते। वर्ष 1994 में आयोजित हिन्दी पखवाड़े में 600 में से 431 कर्मचारियों ने विभिन्न प्रतियोगिताओं में भाग लिया। इन वर्षों में इन कार्यक्रमों के उद्घाटन व समापन समारोह में निगम के अध्यक्ष महोदय ने स्वयं अध्यक्षता की एवं समस्त निदेशक मण्डल ने भाग लेकर प्रतियोगियों का उत्साह बढ़ाया। पुरस्कार वितरण समारोह में भी कर्मचारियों का उत्साह देखने योग्य था। हमने एक परंपरा बनाई है निगम के अध्यक्ष स्वयं पुरस्कार वितरण करते हैं व प्रत्येक कार्मिक द्वारा किए जा रहे कार्य का ब्यौरा जानकर उन्हें प्रोत्साहित करते हैं। साथ ही उल्लेखनीय कार्यों के लिए विशेष प्रशंसा-पत्र भी प्रदान किए जाते हैं।
16. हिन्दी में कार्य करने वाले कर्मचारियों को और प्रोत्साहित करने के लिए निगम में लागू प्रोत्साहन योजनाओं को और अधिक आकर्षक बनाने की योजना में विचाराधीन हैं। इसे भी हिन्दी माह के अवसर पर लागू कर दिया जाएगा।
17. हमारे निगम के स्थापना की तीन वर्षों के अवधि में ही विभिन्न उच्चस्तरीय समितियों द्वारा हमारा निरीक्षण किया गया है। वर्ष 1994 में संसदीय समिति के निरीक्षण के दौरान पावरग्रिड द्वारा किए गए कार्यों की समिति सदस्यों द्वारा मुक्त कंठ से सराहना की गई जिसकी पुष्टि मंत्रालय द्वारा निगम को विशेष रूप से प्रशंसा-पत्र प्रदान कर की गई।
18. गृह मंत्रालय के वार्षिक निरीक्षण के दौरान भी पावरग्रिड के द्वारा किए गए कार्यों की सराहना व अनुशंसा की गई व अन्य निगमों के लिए भी यह निगम आने वाले समय में प्रेरणा स्त्रोत होगा ऐसा विश्वास व्यक्त किया गया।

अन्त में मैं समिति को पूर्ण विश्वास दिलाता हूं कि जिन-जिन दिशाओं में राजभाषा के प्रयोग के संबंध में कमियां पाई जाएंगी हम उन्हें अविलम्ब दूर करेंगे।

मैं माननीय मंत्री महोदय/मंत्री महोदया विभाग के माननीय सचिव एवं समिति के सदस्यों का आभारी हूं व पुनः धन्यवाद करता हूं कि उन्होंने मुझे अपने निगम की राजभाषा संबंधी जानकारी प्रस्तुत करने का अवसर दिया

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें

केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान रुड़की

केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान रुड़की की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 20वीं बैठक प्रोफेसर रे० ना० अयंगार की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में वार्षिक कार्यक्रम के मुख्य-मुख्य लक्ष्यों को सरल भाषा में तैयार करना, वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये जांच बिन्दुओं को और अधिक प्रभावी बनाना एवं वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये किसी अनुभाग विशेष को ही कार्रवाई करने का दायित्व सौंपना आदि निर्णय लिये गये।

आकाशवाणी, दरभंगा

आकाशवाणी दरभंगा की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दूसरी बैठक दिनांक 26.6.95 को केन्द्र निदेशक श्री त्रिपुरादि कांत शर्मा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में राजभाषा हिंदी के प्रगामी परयोग को बढ़ाने के लिये अनेक निर्णय लिये गए, यथा-प्रशा० अनुभाग पर कड़ी नजर रखी जाए जिससे कि हिंदी पत्रों का प्रतिशत बढ़ सके। कार्यालय के आशुलिपिकों को एक रजिस्टर रखने जिसमें समय-समय पर निकलने वाले सामान्य आदेश, यात्रा आदेश आदि-का विवरण रखा जाएगा का भी निर्णय लिया गया जिससे हिंदी एवं अंग्रेजी पत्रों की स्थिति का आकलन हो सके। हिंदी में टाइपराइटर की खरीद के संबंध में अध्यक्ष महोदय ने कहा कि इस दिशा में निधारित लक्ष्य को प्राप्त कर लिया जाए। उन्होंने यह भी निदेश दिये कि कार्यालय प्रांगण में एक बोर्ड लगाया जाए और हिन्दी तथा अंग्रेजी के शब्दों को लिखने की परम्परा पुनः शुरु न की जाए।

मुख्य आयकर आयुक्त कार्यालय, भोपाल

मुख्य आयकर आयुक्त कार्यालय, भोपाल की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 8 अगस्त, 1995 को अपर आयकर आयुक्त श्री जी० ए० शुक्ला की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में निर्णय लिया गया कि स्थापना, आलेख, आवक और जावक अनुभागों में शत प्रतिशत काम हिंदी में करने हेतु इन अनुभागों को राजभाषा नियम 8(4) के अंतर्गत निदेश दिये जाएं। इसके अतिरिक्त सभी अधिकारियों द्वारा पत्रों पर डाक स्टेज पर ही हिंदी में निर्देश आदि दिये जाएं।

आयकर आयुक्त (केन्द्र), लुधियाना प्रभार

कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 3.8.1995 को सम्पन्न हुई। बैठक हिन्दी की तिमाही प्रगति रिपोर्ट की समीक्षा करते समय यह निर्णय किया गया कि जिन कार्यालयों में पत्राचार की मात्रा में गिरावट आई है उन्हें पत्र लिखकर इसका कारण पूछा जाए तथा पत्राचार की मात्रा की तुलना पिछले वर्ष के उसी तिमाही से की जाए न कि चालू वर्ष की पिछली तिमाही से। इसके अलावा प्रभार में उपलब्ध द्विभाषी इलैक्ट्रानिक टाइपराइटरों का पूरा उपयोग करने एवं बजट को ध्यान में रखते हुए हिंदी की पुस्तकों को खरीदने तथा केन्द्र प्रत्यक्ष का बोर्ड के दिनांक 13.2.86 के आदेश सं० 11017/47/85-प्रशा० 1-9 द्वारा हिंदी में करने के लिये बताए गए कार्यों में हिंदी में ही करवाने आदि के बारे में निर्णय लिय गये।

दूरदर्शन केन्द्र, मुज्जफरपुर

दूरदर्शन केन्द्र मुज्जफरपुर की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक दिनांक 17.7.95 को केन्द्र निदेशक डा० डी० के० राय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में सर्वप्रथम पिछली बैठक में लिये गये निर्णय पर हुई कार्रवाई की पुष्टि की गई और तत्पश्चात कार्यसूची की विभिन्न मदों पर चर्चा हुई। हिन्दी टंकण एवं आशुलिपि प्रशिक्षण के संबंध में चर्चा करते समय यह निर्णय किया गया कि किसी अहिंदी भाषी कर्मचारी को प्रशिक्षण के लिये नामित किया जाए। समिति को सूचित किया गया कि कार्यालय में विभिन्न कार्यों के लिये द्विभाषी फार्म प्रयोग में लाए जा रहे हैं। टिप्पण, आलेखन आदि का कार्य भी हिन्दी में किया जा रहा है। "ग" क्षेत्र को भेजे जाने वाले पत्रों को छोड़कर प्रायः सभी पत्र हिंदी में भेजे जाते हैं या उन पर हस्ताक्षर हिन्दी में किये जाते हैं।

लघु उद्योग सेवा संस्थान कानपुर

संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 4 अगस्त, 1995 को निदेशक डा० पी० के० चौधरी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में 12 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। बैठक में निदेशक महोदय ने हिन्दी अनुभाग को निर्देश दिये कि समस्त अनुभागों द्वारा किये गये अंग्रेजी पत्राचार का क्षेत्रवार विवरण अगली बैठक में प्रस्तुत किया जाए। ताकि अंग्रेजी पत्राचार को रोका जा सके। संबंधित अनुभाग को हिंदी लिपिक एवं हिन्दी आशुलिपिक के पदों के सृजन हेतु आवश्यक कार्रवाई करने के लिये किये भी निर्देश दिये गये।

केन्द्रीय उत्पाद तथा सीमा शुल्क के आयुक्त का कार्यालय, सिडको, ओरंगाबाद

इस कार्यालय की राजभाषा समिति (मुख्यालय) की बैठक दिनांक 12.7.95 को आयुक्त श्री जे० एच० जोगलेकर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के संबंध में विभिन्न मदों पर चर्चा की गई। बैठक में निर्णय किया गया कि कार्यालय से भेजे जाने वाले सभी कागजातों के साथ प्रेषण पत्र हिंदी में लगाया जाए और अनुस्मारक आदि भी अनिवार्य रूप से हिंदी में भेजे जाएं। सतर्कता, वैधानिक/निवारक आदि अनुभागों को अपना अधिकतम कार्य हिंदी में करने के निर्देश दिये गये। हिंदी में तार भेजने के संबंध में समिति को बताया गया कि वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्य से भी अधिक तार हिंदी में भेजे जा रहे हैं। इस पर अध्यक्ष महोदय ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। इसके अलावा "देवनागरी" पत्रिका के तुरंत प्रकाशन के लिये भी अध्यक्ष महोदय द्वारा संबंधित अधिकारी को निर्देश दिये।

दिल्ली विद्युत प्रदाय संस्थान

संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 10.7.95 को महाप्रबंधक श्री सतीश चन्द्रा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में सर्वप्रथम 23.2.95 को हुई बैठक के निर्णयों की पुष्टि की गई। तत्पश्चात्

बैठक में राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का शत-प्रतिशत अनुपालन करने एवं संस्थान में न्यूनतम हिन्दी-पदों के सृजन पर आवश्यक कारवाई करने तथा संस्थान की कार्यप्रणाली की दृष्टि से बनाई गई। तिमाही प्रगति रिपोर्ट के प्रपत्र को गृह मंत्रालय का अनुमोदन के लिये भेजने आदि के बारे में लिये गये।

पृष्ठ 54 का शेष

लगता है, जैसा कि अक्सर हम बम्बईया फिल्मों में देखते हैं। इस तरह का प्लाट अमित और सुमति दोनों ही को नायक-नायिका से खलनायक-खलनायिका में परिवर्तित कर देता है। और यह एक छदम स्थिति है। उनकी पुत्रियों की जीवन गाथा एकदम बाहरी और असंगत हो जाती है।

यह सही है कि अगर हम अमित और सुमति की शादी को सुविधापरक और उनके आपसी रिश्तों को ठण्डा मान लें तो उनकी दो पुत्रियों की जीवन यात्रा रोचक होने की सम्भावना बढ़ जाती है। लेकिन अगर पुत्रियां—सोमा और रूपा की जीवन कथा भी लेखकीय वक्तव्यों के जरिए उद्घाटित करने का प्रयास किया जाए तो ऐसे कथानक में पाठकों की रूचि कम हो जाना स्वाभाविक ही है।

एक ठण्डे पारिवारिक जीवन का नतीजा यह हो सकता है कि उस परिवार के बच्चे अपने जीवन में गलत निर्णय लें और फिर ऐसे गलत निर्णयों का शिकार भी हो जैसी कि सोमा एक गलत युवक के प्रेम में पड़कर और रूपा सन्यास का रास्ता पकड़कर सिहर करते हैं। लेकिन यह पूरे परिवार के लिए एक दुखान्त स्थिति ही मानी जाएगी। इस दृष्टि से देखने पर "अपना-अपना सुख" आधुनिक किन्तु खोखले (बुद्धिजीवी) परिवारों की अनिवार्य त्रासदी ही माना जाएगा। विशेषकर उस स्थिति में जब ऐसे बुद्धिजीवी परिवारों के सामने अन्य विकल्प बनने बनाने की सम्भावनाएं स्पष्ट ही हों। यह तथ्य रिचर्ड और शोभा जो अपने पुराने संदर्भों को छोड़कर नये जोड़-तोड़ में मिलते हैं, आसानी से सिद्ध कर देते हैं। इसके साथ ही वे अपने जीवन अनुभव के जरिए बुद्धिजीवियों पर एक तोहमत भी मढ़ देते हैं।

लेकिन इस तोहमत से बचने के लिए लेखक बुद्धिजीवियों की सामाजिक भूमिका को सार्थक दिखाने का प्रयास करता है। लेकिन यह भी एक लम्बा वक्तव्य ही है, जिसे उपन्यास की कमजोरी ही माना जाएगा। वर्तमान राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों पर एक वकतव्य है जिसका उपन्यास के घटनाक्रम से दूर का भी संबंध नहीं बैठता। इसके बाद रिचर्ड के कार्य-कलापों को लेकर आचार्य रजनीस का "सैक्स से आध्यात्म" वाला दर्शन शुरु हो जाता है और इसी दर्शन पर उपन्यास समाप्त होता है यानी कि एक सैद्धान्तिक स्वर पर जो कि उपन्यास के विकास के साथ मेल नहीं खाता, सतही लगता है।

—राधेश्याम यादव

"हिन्दी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है"

-महर्षि दयानन्द सरस्वती

अरूणाचल प्रदेश में राजभाषा हिन्दी की दशा-दिशा

भारत के पूर्वोत्तर छोर पर स्थित सीमांत राज्य "अरूणाचल प्रदेश' को उगते हुए सूर्य की भूमि कहा जाता है। लोहित, सियांग, सुबनश्री, दिहिंग आदि नदियां इस भूमि का अभिषेक करती हैं, इसकी सीमा चीन, बर्मा (म्यामार) और भूटान की अंतर्राष्ट्रीय सीमा को स्पर्श करती हैं, भगवान भाष्कर अपनी रश्मि से इस भूमि को सबसे पहले आलोकित करते हैं और बनाच्छादित पर्वत इस "नील परिधान बीच सुकुमार" धरती का श्रृंगार करते हैं।

यह एक जनजातिबहुल प्रदेश है। यहां लगभग तीस प्रमुख जनजातियां निवास करती हैं। ये जनजातियां अपनी संस्कृति और परम्पराओं का बहुत सम्मान करती हैं। ये जनजातियां प्रकृति पूजक हैं। इनके अधिकांश पर्व-त्योहार कृषि पर आधारित है। प्रमुख जनजातियों की भी अनेक उपशाखाएं हैं। ये जनजातियां भिन्न-भिन्न रीति से धार्मिक अनुष्ठान सम्पन्न करती हैं तथा इनकी पूजा-विधियों में भी अंतर है। कुछ प्रमुख जनजातियों के नाम इस प्रकार हैं:—

(1) आदि जनजाति
(2) निशिंग जनजाति
(3) आपातानी जनजाति
(4) मिसमी जनजाति
(5) मोम्पा जनजाति
(6) गालौंग जनजाति
(7) तागिन जनजाति
(8) मिन्योंग जनजाति
(9) खाम्ती जनजाति
(10) खोआ (बुगुन) जनजाति
(11) वांचू जनजाति
(12) शेरदुक्पेन जनजाति
(13) हिल मीरी जनजाति
(14) नोक्ते जनजाति
(15) सुलुंग जनजाति इत्यादि।

ये जनजातियां धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से तो पृथक हैं ही, भाषायी दृष्टिकोण से भी इनमें अनेकता है। इनकी भाषाओं/बोलियों का नामकरण भी इन जनजातियों के नाम के आधार पर हुआ है। अलग-अलग जनजातियां भिन्न-भिन्न प्रकार की भाषाएं बोलती हैं। उदाहरण के लिए आपातानी जनजाति आपातानी भाषा बोलती है तो आदी जनजाति आदी भाषा का प्रयोग करती है। अपनी समृद्ध संस्कृति एवं मौखिक लोकसाहित्य के बावजूद इनकी कोई लिपि नहीं है। इसलिए इनके साहित्य एवं लोकसाहित्य का शोधपरक अध्ययन-विश्लेषण अभी शेष है।

सर्वमान्य लिपि तथा सर्वमान्य भाषा के अभाव में ये जनजातियां विचार-विनिमय के लिए किसी तीसरी भाषा का प्रयोग करती हैं क्योंकि एक जनजाति की भाषा दूसरी जनजाति की भाषा से इतनी भिन्न है कि उनमें परस्पर संप्रेषण नहीं है। इसलिए उन्हें संप्रेषण के लिए हिन्दी अथवा असमी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है।

औपचारिक रूप से अरूणाचल प्रदेश की राजभाषा तो अंग्रेजी स्वीकृत की गई है और कार्यालयीन कार्य भी अंग्रेजी में ही संपन्न होते हैं परन्तु कर्मचारीगण परस्पर विचार-विनिमय हिंदी में ही करते हैं क्योंकि कार्यालयों में देश के सभी राज्यों से आए लोग एक साथ काम करते हैं। एक ही कार्यालय में तमिल, तेलगु, मलयालम, मराठी, बंगला, असमी इत्यादि अनेक भाषाभाषी कार्य करते हैं और उनके मध्य सेतु का कार्य हिन्दी करती हैं। हिंदी नहीं जान वाले कर्मचारी भी देश के किसी कोने से स्थानांतरित होकर आते हैं तो एक महीने के अंदर ही स्वयं हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। कुछ लोग अरूणाचल प्रदेश को इन्हीं विशेषताओं के कारण "लघु भारत" कहते हैं।

इस प्रदेश में दसवीं कक्षा तक हिन्दा अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ायी जाती है। हिंदी इस प्रदेश की दूसरी भाषा है। हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाने के कारण यह राज्य के सुदूर क्षेत्रों में भी बोली-समझी जाने लगी है। यह एक आश्चर्यजनक सच्चाई है कि इस प्रदेश के दूरस्थ तथा दुर्गम क्षेत्रों में भी, जहां यातायात तथा संचार का कोई साधन नहीं है, हिंदी संपर्क भाषा का कार्य कर रही है।

व्यवसायिक प्रतिष्ठानों और बाजारों में हिन्दी के बिना कार्य संभव नहीं है। उत्तर-पूर्व के सातों राज्यों में अरूणाचल प्रदेश हिंदी प्रयोग के क्षेत्र में सबसे आगे है। यहां के निवासियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि

इनमें भाषा के प्रति कोई दुराग्रह नहीं है। ये लोग प्रेमपूर्वक हिन्दी का प्रयोग करते हैं। यहां के शांतिप्रिय निवासी घर में अपनी भाषा बोलते हैं तथा घर से बाहर हिन्दी का प्रयोग करते हैं।

इस प्रदेश की हिन्दी जनजातीय बोलियां, असमिया तथा बंगला के शब्दों, ध्वनियों एवं व्याकरणिक विशेषताओं को समाहित करते हुए विकसित हो रही है। यहां बोली जाने वाली हिन्दी में व्याकरणिक शुद्धता की तलाश करना उचित नहीं है। यहां की जनजातियों की अपनी-अपनी मातृभाषाएं हैं, प्रदेश से लगी हुई असम राज्य की सीमा है तथा बंगलाभाषी कर्मचारियों एवं व्यवसायिकों का आधिक्य है। इसलिए हिंदी का विकास अलग रूप में हो रहा है जिसमें इन भाषाओं/बोलियों का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित किया जा सकता है।

इस प्रदेश की अपनी कोई लिपि नहीं है जिसके कारण यहां के समृद्ध साहित्य के संबंध में देश के अधिकांश लोग अनभिज्ञ हैं। पौराणिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह प्रदेश गौरवशाली है। भगवान कृष्ण की पत्नी रूक्मिणी इसी प्रदेश की राजकुमारी थी। भगवान परशुराम ने पापमुक्ति के लिए इसी पवित्र भूमि के ब्रह्मकुंड में अपना परशु धोया था। भक्त प्रह्लाद की जन्मभूमि भी यही है। इन आख्यानों से हिन्दी जगत अभी तक अनभिज्ञ है, इसका कारण इस प्रदेश की लिपिहीनता है। कुछ पाश्चात्य विचारों के पोषक बुद्धिजीवी इन जनजातीय भाषाओन के लिये रोमन लिपि की वकालत करते है, यह सर्वथा अनुचित है क्योंकि इनकी ध्वनियों को समेटने का सामर्थ्य रोमन लिपि में नहीं है। इस प्रदेश के लिए देवनागरी लिपि सबसे उपयुक्त है। यदि देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता एवं उपयोगिता को सही ढंग से संगोष्ठियों/परिचर्चाओं के द्वारा यहां के बुद्धिजीवियों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के सम्मुख रखा जाए तो यहां के लोग देवनागरी को अवश्य स्वीकार कर लेंगे। ऐसा करने से राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता की नींव मजूबत होगी।

प्रस्तुतिः डा॰ वीरेन्द्र कुमार सिंह

नागालैंड में हिन्दी की स्थिति

पूर्वोत्तर भारत के प्रमुख प्रदेश नागालैंड में हिन्दी का आगमन बहुत देर से हुआ। मूल नागा निवासियों की संकोची प्रवृत्ति एवं अलग-अलग रहने की आदत, एवं सुदूरवर्ती जंगल-पहाड़ों में रहने के कारण यहाँ बाहरी सभ्यता का प्रवेश ही काफी देर से हुआ। नागालैंड में हिन्दी प्रचार-प्रसार करने में सैनिक और व्यापारिक कारण अन्य जगहों की तरह यहाँ भी रहा है। नागालैंड के कोहिमा में, जो अब इस देश की राजधानी भी है, द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान ब्रिटिश सेना और आजाद हिंद फौज के बीच घमासान युद्ध हुआ था। इस युद्ध के महत्व का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि युद्ध विशेषज्ञों के अनुसार अगर आजाद हिंद फौज इस युद्ध को जीत जाता तो लगभग संपूर्ण पूर्वोत्तर भारत में सुभाष चंद्र बोस का तिरंगा फहराता। मगर दुर्भाग्यवश ब्रिटिश सेना की विजय हुई। और एक नया इतिहास बनते-बनते रह गया। जो भी हो इस क्षेत्र में सैनिकों के माध्यम से हिंदी आई। क्योंकि ब्रिटिश सेना और आजाद हिंद फौज दोनों में भारतीय ही थे। और वे हिंदी ही बोलते थे। स्वाभाविक ही दोनों का स्थानीय नागा समाज से संपर्क रहा। और इस भांति हिंदी का व्यवहार हुआ।

भारतीय सेना के साथ इसके पूर्व भी नागालैंड का परिचय तो अंग्रेजों के माध्यम से तो हुआ ही। और इनके साथ हिंदी भाषी व्यापारियों का भी आगमन हुआ था। जिन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से ही सही हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान किया। मगर अंग्रेज नागा क्षेत्र को सभी दृष्टि से अलाभप्रद और अनुपयोगी मानते थे। वह नागाओं के हिंसक जीवन दृष्टि से डरते भी थे। इसलिए उन्होंने इन्हें अलग-अलग रखने की नीति अपनाई। इससे नागा समाज शेष भारतीय समाज से एक लंबे अरसे तक पृथक ही रहा। मगर नागा समाज खरीददारी के लिए असम के भारतीय व्यापारियों से जुड़ा रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्थिति कुछ बदली। रेडियो और सिनेमा के माध्यम से यहाँ भी कुछ अंशों में हिंदी आई। व्यापारियों ने अपने व्यापार यहां भी बढ़ाए। मगर हिंदी की गति अत्यंत धीमी थी। मगर गत दशक के मध्य में दूरदर्शन ने जाने-अनजाने हिंदी के प्रचार-प्रसार शुरू कर दिया। हालाँकि उसकी यह मंशा न भी रही हो, मगर मनोरंजन का माध्यम तो हिंदी ही था। और पूर्वोत्तर भारत के अन्य राज्यों की तरह यहाँ हिंदी पढ़ने लिखने में भले कठिनाई हो, बोलने-समझने में जरा भी कठिनाई नहीं होती। राज्य सरकार ने भी महसूस किया कि अगर नागालैंड का विकास करना है, तो इसे शेष भारत से जुड़ना ही होगा। और इसके लिए माध्यम "हिन्दी" ही हो सकती है। और इसलिए यहाँ की पाँचवी, छठी और सातवीं कक्षा में हिन्दी को अनिवार्य कर दिया गया।

राज्य सरकार ने एक प्रशंसनीय कार्य और किया कि विद्यालय चाहे सरकारी हो अथवा प्राइवेट, उसमें हिन्दी शिक्षक अनिवार्य कर दिया। इन हिन्दी शिक्षकों को नागालैंड की राज्य सरकार ही बहाली करती है और उनका वेतन भी सरकार ही देती है। इस हिन्दी की अनिवार्यता और उपयोगिता की वजह से नागा लोगों का रुझान हिन्दी सीखने की ओर गया है।

हिंदी पढ़ने-लिखने और सीखने की गति और तेज हो सकती है, अगर यहां हिंदी, को मैट्रिक तक अनिवार्य कर दी जाए। साथ ही हिंदी के शिक्षकों को और सुविधाएं दी जाएं। फिलहाल उनकी स्थिति ठीक नहीं। इस दिशा में एक और सुझाव यह दिया जा सकता है कि नागाभाषी हिंदी शिक्षकों को ही और प्रशिक्षित किया जाए। उन्हें ही आगे बढ़ाया जाए। क्योंकि वही इस क्षेत्र की समस्याओं को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं। तब तक हिंदी भाषी शिक्षकों की सेवा ली जा सकती है। मगर उन्हें हिंदी पढ़ाने-लिखाने का काम मिशनरी भावना से करना होगा।

आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि नागालैंड में हिंदी का भविष्य उज्जवल है। क्योंकि नागा समाज यह महसूस करने लगा है कि उनका विकास और रोजी-रोटी की समस्या का समाधान में अगर कोई माध्यम सक्षम है, तो वह है—हिंदी। उनके इस रास्ते में हिंदी समाज को भी आगे आना चाहिए। उनकी हर मुश्किलों के समाधान के लिए हमें तत्पर रहना चाहिए।

प्रस्तुतिः चितरंजन भारती

हिन्दुस्तान पेट्रोलियम में अधिकारी प्रशिक्षार्थियों की चयन परीक्षा में हिन्दी का विकल्प हुआ

सितम्बर 1995 के समाचार पत्रों में छपी एक सूचना के अनुसार हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कॉरपोरेशन लिमिटेड में लगभग 200 अधिकारी प्रशिक्षार्थियों की नियुक्ति के लिए 3 दिसम्बर 1995 को एक परीक्षा होगी, परीक्षा में हिंदी का विकल्प भी होगा।

अनुरोध है कि उक्त विकल्प का व्यापक प्रचार किया जाए और आवेदकों को हिन्दी माध्यम का विकल्प चुनने के लिए प्रेरित किया जाए। अन्य जिन-जिन ऐसी ही परीक्षाओं में हिंदी का विकल्प नहीं हुआ है, उसके लिए प्रत्यन जारी रखे जाएं।

सहायकों की भर्ती परीक्षा में अंग्रेजी का महत्व घटा

दैनिक नवभारत टाइम्स के 9 सितम्बर 1995 के अंक में छपी एक सूचना कि अनुसार भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों आदि में सहायकों की मुख्य भर्ती परीक्षा 28 जनवरी 1996 को होगी। इससे पूर्व प्रारंभिक परीक्षा वस्तुनिष्ठ प्रकार की होगी जिसमें अंग्रेजी भाषा के विकल्प में हिन्दी भाषा का विकल्प भी रखा गया है और शेष विषयों के प्रश्न-पत्र हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में छापे जाएंगे जिनका उत्तर हिन्दी में भी दिए जाने की सुविधा है।

मुख्य परीक्षा परम्परागत प्रकार की होगी जिसके 300 अंकों के प्रश्न-पत्रों में से सामान्य अंग्रेजी केवल 50 अंकों की होगी और वह भी केवल अर्हक होगी। अर्थात् अंग्रेजी के प्रश्न-पत्र में प्राप्त अंक अंतिम चयन सूची बनाते समय नहीं जोड़े जाएंगे। अंग्रेजी भाषा के प्रश्न-पत्र के अतिरिक्त शेष विषयों के प्रश्न-पत्रों के उत्तर हिन्दी में भी दिए जाने का विकल्प होगा।

अनुरोध है कि उक्त विकल्प का व्यापक प्रचार किया जाए और परीक्षा देने वालों की सुविधा के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाए।

जापान में वेद

जापानी स्कूलों में वेदों की शिक्षा। चौंकिए मत। वेदों के वैज्ञानिक चरित्र ने जापानी शिक्षाविदों को इतने गहरे तक प्रभावित किया है कि जापान की स्कूली शिक्षा में वेदों के आसान अध्ययायों को शामिल किया जा रहा है। प्रायोगिक तौर पर शुरू होने वाली यह स्कीम अगर अच्छे नतीजे सामने लाई तो कालेज स्तर पर भी वेदों का अध्ययन शुरू किया जाएगा। याकोहामा यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर तासुआ नेती कहते हैं कि वेद तो जीवन की शिक्षा हैं जब तक जीवन है तब तक आप इन्हें अनदेखा नहीं कर सकते। पता नहीं कैसे ज्ञान के इस अथाह भंडार की कीमत इनका जनक देश भारत ही नहीं जान पा रहा है।

(नवभारत टाइम्स के 20.8.95 के अंक से साभार

सारस्वत सम्मान के लिए प्रशंसनीय चयन

इस वर्ष हिन्दी दिवस के पुण्य पर्व पर हिंन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा सम्मनित होने वाले हिन्दी-प्रेमियों में एक नाम ऐसे हिंदी सेवी का चुना गया है, जो स्वयं ख्याति से दूर रहते हुए सरकारी काम-काज में हिन्दी का प्रयोग करने में तथा औरों से करवाने में, हनुमान के समान निष्ठापूर्वक प्राण-पण से जुटे रहे हैं और सरकारी सेवा से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् अपने को मन-वचन-कर्म से हिन्दी की प्रतिष्ठा के लिए समर्पित कर चुके हैं। ये हैं केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के पुराने सदस्य और लगभग बीस वर्षों से राजभाषा-कार्य के संयोजक श्री जगन्नाथ जी।

श्री जगन्नाथ जी की कार्य-प्रणाली अत्यन्त सुव्यवस्थित, सुनिश्चित और गम्भीर प्रभाव वाली है। के०स०हि० परिषद् की सफलता के मूल में बहुत कुछ इनका भी महत्वपूर्ण योगदान है। अपने कर्तव्य के प्रति अनन्य निष्ठावान् जगन्नाथ जी स्वयं को प्रकाश में लाने से सप्रयास बचते रहे; किंतु कोई रत्न कब तक छिपा रह सकता है, कभी न कभी तो वह खोजियों को आकर्षित कर ही लेता है। यह एक सुखद संयोग ही है कि दिल्ली की एक अंनाम सेवी सम्मान समिति ने ऐसे अनाम हिंदी-सेवी को खोजकर इसी वर्ष, मई-1995 में सम्मनित किया था, और जब हिंदी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें सारस्वत सम्मान प्रदान कर प्रशंसनीय कार्य किया है।

आधुनिकतम ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शिक्षा का माध्यम हिंदी भी

दिनांक 6-7 फरवरी, 1995 को अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद की देख रेख में योजना तथा वास्तुकला विद्यालय ने "योजना तथा वास्तुकला पाठ्यक्रमों में हिंदी माध्यम का प्रयोग" नामक विषय पर एक संगोष्ठी की और विषय-विशेषज्ञों और विद्वानों के मध्य आवश्यक विचार-विमर्श के बाद कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें की गई जो निम्न प्रकार हैं:—

(1) योजना तथा वास्तुकला शिक्षा पाठ्यक्रमों से संबंधित शब्दावली का संग्रह तत्काल अद्यतन रूप में उपलब्ध कराया जाना चाहिए ताकि पाठ बनाने, अनुवाद करने और मौलिक पुस्तक लेखन में कोई व्यवधान न आए। इसके लिए वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग का सहयोग प्राप्त किया जाए।

(2) वास्तुकला से संबंधित हमारे जितने भी प्राचीन ग्रंथ हैं, उनमें से छात्रोपयोगी सामग्री का संकलन किया जाए।

(3) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्, योजना तथा वास्तुकला विद्यालय को यह अनुमति दें कि विद्यालय अपने पाठ्यक्रमों में हिंदी को प्रतिष्ठित करे और प्रवेश के समय हिंदी माध्यम से पढ़ने वाले छात्रों का समुचित ध्यान रखा जाए।

(4) योजना तथा वास्तुकला विद्यालय में एक सेल स्थापित किया जाए, जो वास्तुकला और योजना विषयों पर छात्रों के लिए उपयुक्त हिंदी पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने तथा आधुनिकतम अंग्रेजी सामग्री का हिंदी अनुवाद करवाने और माध्यम परिवर्तन लागू करने का कार्यक्रम शुरू करें।

(5) प्रारंभ में योजना तथा वास्तुकला के कुछ चुनिंदा पाठ्यक्रमों में हिंदी माध्यम शुरू किया जाना चाहिए।

(6) योजना तथा वास्तुकला विद्यालय एक पुरस्कार योजना शुरू करे ताकि योजना तथा वास्तुकला विषयों से संबंधित तैयार उत्कृष्ट हिंदी पुस्तकें समुचित रूप से पुरस्कृत की जा सकें।

(7) तीन मास के अंतराल से प्राध्यापकों एवं विशेषज्ञों की बैठकों का आयोजन हो जो इस दिशा में हुई प्रगति का मूल्यांकन करें।

(8) कार्यशालाएं तथा प्रशिक्षण शिविर नियमित रूप से आयोजित किए जाएं ताकि प्राध्यापकों में अभिरूचि तथा जागरुकता उत्पन्न हो।

(9) हिंदी में कार्य करने के लिए सामान्य सुविधा जैसे टाइपराइटर व कम्पयूटर आदि उपलब्ध कराया जाए।

(10) हिंदी संबंधी दायित्व के बढ़ने के कारण विद्यालय में वर्तमान हिंदी सेल को मजबूत किया जाए तथा हिंदी संबंधी उच्च पद की भी व्यवस्था की जाए।

(11) वास्तुकला और योजना पाठ्यक्रमों के स्नातकपूर्व कार्यक्रम में प्रवेश हेतु निर्धारित अनिवार्यताओं में अंग्रेजी अथवा हिंदी का विकल्प होना चाहिए या फिर दोनों विकल्पों को हटा दिया जाना चाहिए।

'सेतु' वृतचित्र

राष्ट्रीय महत्ता की फिल्म सेतु, देश की एकता की कड़ी व सामासिक संस्कृति का केन्द्र बिन्दु राष्ट्रभाषा हिन्दी पर बनाई गई। एक महत्वपूर्ण फिल्म है, जिसमें विभिन्न वर्गों/धर्मों/भाषा के लोगों के विचार है। तमिलनाडु की आम जनता में आज हिन्दी की क्या स्थिति है इसका नजारा फिल्म देखने पर ही मिलता है। आज तमिलनाडु की नई पीढ़ी हिन्दी के प्रति बहुत उत्साहित तथा जागरूक है। सेतु हिन्दी के प्रचार-प्रसार के ऊपर आधारित है। 31 मिनट की अवधि वाली यह फिल्म स्व० पदम् भूषण डा० मोटूरि सत्यनारायण जी को समर्पित है। स्व० श्री मोटूरि सत्यनारायण जी भारतीय संविधान सभा के सदस्य थे और उन्होंने कड़ी मेहनत करके हिन्दी को संघ की भाषा का स्थान दिलवाया, जबकि वे स्वयं अहिन्दी क्षेत्र के थे और अन्त तक हिन्दी के उत्थान के लिए प्रयत्न करते रहे।

सेतु में बड़े ही सरल ढंग से व रोचक ढंग से दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के प्रधान सचिव आ० रामास्वामी वरिष्ठ हिन्दी प्रचारक श्री एम० आर० परशुरामन् वरिष्ठ हिन्दी प्रचारिका सुश्री सी० रेवती, तमिल भाषी हिन्दी लेखक श्री एम० सुब्रहमणियम् तथा सुफी संत मुर्युजाविया के संस्थापक जनाब डा० एस० के कादरी के साक्षात्कार संकलित है।

फिल्म में दक्षिण भाषी छात्र-छात्राओं के विचार भी संग्रहीत हैं। इन साक्षात्कारों से यह बात उभर कर सामने आती है कि भाषा को राजनीति से दूर रखना जरूरी है साथ ही भारत जैसे बहुभाषी देश में हिन्दी ही एक मात्र भाषा है जो संपर्क भाषा के रूप में काम कर सकती है।

जोड़ने का कार्य करती आ रही है, सच्चे मायने में यह संपूर्ण राष्ट्र को जोड़ने का एक सेतु है। इस फिल्म का निर्माण अभिनेता/निर्माता/निदेशक टी० विरेन्द्र ने अपने बैनर मैसर्स वी० टी० पिक्चर्स में किया है। इसके लेखक डा० किशोर वासवानी है, छायांकन श्री निरंजन रामनाथन का है, सम्पादक श्री एल० पी० एलबिन है तथा संगीत डा० पी० बी० श्रीनिवास का है।

डा० शशि तिवारी पुरस्कृत

दिल्ली विश्वविद्यालय के चाणक्यपुरी स्थित मैत्रेयी महाविद्यालय में रीडर के पद पर कार्यरत डा० शशि तिवारी को हाल में ही दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा दो पुरस्कारों से अलंकृत किया गया है। अगस्त 9, 1995 को उन्हें अपनी नवीनतम कृति 'सूर्यदेवता' पर 'अखिल भारतीय मौलिक संस्कृत साहित्य रचना पुरस्कार' प्रदान किया गया, जिसे श्री केदारनाथ साहनी ने फिक्की सभागार, नयी दिल्ली में समारोहपूर्वक उन्हें दिया। सूर्यदेवता वर्ष 1994 में वैदिक शौध एवं सांसकृतिक प्रतिष्ठान के तत्वावधान में मेहरचन्द लक्ष्मण दास पब्लिकेशन्स द्वारा प्रकाशित हुई है। दूसरा पुरस्कार उन्हें 11 अक्टूबर को पुराना सचिवालय में आयोजित एक समारोह में मुख्यमंत्री श्री मदन लाल खुराना द्वारा सादर प्रदान किया गया। 'संस्कृत शिक्षक पुरस्कार दिल्ली के दो महाविद्यालयीय शिक्षकों को उनकी योग्यताओं के आधार पर अकादमी द्वारा प्रतिवर्ष दिया जाता है। डा० शशि तिवारी को वर्ष 1995 के लिए चयन किया गया। दोनों ही पुरस्कारों में प्रतीक चिह्न, प्रशस्ति पत्र, शाल और पांच सहस्त धन राशि दी गई है।

डा० शशि तिवारी को वर्ष 1990 में जयपुर की राजस्थान संस्कृत अकादमी से अखिल भारतीय 'भारतीमिश्रा पुरस्कार' से भी सम्मानित किया जा चुका है। ऋग्वेदीय आप्री सूक्त, मुण्डको पनिषद, इशानास्योपनिषद्' भारतीय धर्म और संसुति सूर्यदेवता उपनिषदों की बोध कथाएं आपकी मुख्य प्रकाशित पुस्तकें हैं। देश विदेश की अनेक संगोष्ठियों में आपने भाग लिया है और आपके साठ से अधिक शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का दिनांक 9.10.95 का कार्यालय ज्ञापन सं॰ 1-4/95-निदेशक (के॰अ॰ब्यूरो)

केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों की अनुवाद संबंधी आवश्यकताओं को पूर्ति के लिए अनुवादकों का अखिल भारतीय पैनल बनाना।

राजभाषा विभाग में यह महसूस किया गया है कि केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, मुख्यालयों/आंचलिक कार्यालयों/स्थानीय कार्यालयों में मानदेय के आधार पर अनुवाद कार्य करने के लिए अनुवादकों का एक अखिल भारतीय पैनल तैयार किया जाए। तदनुसार इस कार्य के लिए इच्छुक व्यक्तियों से आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं। यह मात्र रजिस्ट्रेशन है। कार्य का आबंटन संबंधित कार्यालयों द्वारा आवश्यतानुसार किया जाएगा। पैनल में शामिल होने के लिए अनिवार्य योग्यता हैः- किसी मान्यताप्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक स्तर पर हिन्दी और अंग्रेजी इलेक्टिव विषय हों अथवा विकल्प के रूप में इनमें से कोई एक इलेक्टिव विषय हो और दूसरा शिक्षा का माध्यम।

2. मानदेय पर अनुवाद को वर्तमान दरें रु॰ 40 प्रति हजार शब्द सामान्य सामग्री के लिए तथा रु॰ 45 प्रति हजार शब्द तकनीकी सामग्री के लिए निर्धारित हैं। ये दरें समय-समय पर परिवर्तित की जाती हैं।

3. अनुवादकों की सूचियां विधावार, स्थान/क्षेत्रवार, स्रोत तथा लक्ष्य भाषा वार बनाकर अखिल भारतीय राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र के NIC-NET कंप्यूटर में रखी जाएगी ताकि केन्द्र सरकार के सभी कार्यालयों में ये सूचियां उपलब्ध रहें।

4. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में कार्यरत हिन्दी पदाधिकारी यथा अनुवादक सहायक निदेशक (रा॰भा॰), उप निदेशक (रा॰भा॰), निदेशक (रा॰भा॰)कृपया आवेदन न करें।

5. इच्छुक व्यक्ति अपना आवेदन पत्र निर्धारित संलग्न प्रोफार्मा में निदेशक, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरों, 8वीं मंजिल, पर्यावरण भवन, केन्द्रीय कार्यालय परिसर, लोदी रोड, नई दिल्ली को इस कार्यालय ज्ञापन के जारी होने के एक महीने के अंदर भेजें।

प्रोफार्मा

1. नामः

2. स्थाई पताः

3. अनुवाद के लिए लक्ष्य भाषाः 1. हिन्दी 2. * 3. *

4. स्रोत भाषाः 1. अंग्रेजी 2. * 3. *

5. शैक्षणिक योग्यताएं
   (1) लक्ष्य भाषा में
   (2) स्रोत भाषा में

6. अनुवाद कार्य का अनुभव (अनुवाद में प्रशिक्षण सहित)

7. अनुवाद के लिए निम्नलिखित विधाओं में से किन्हीं चार में रूचिः—

(अपनी पसंद के क्रम में)

1. कार्मिक प्रशासन, 2. कानून व्यवस्था एवं आंतरिक सुरक्षा, 3. वित्तीय प्रशासन, 4. कृषि एवं ग्रामीण विकास, 5. समाज सेवाएं तथा शिक्षा प्रशासन, 6. योजना, 7. आर्थिक एवं तकनीकी प्रशासन तथा 8. औद्योगिक प्रशासन,

1.

2.

3.

4.

---

*इन स्थानों पर सूचना आवेदनकर्ता द्वारा भरी जाए

आवेदक के हस्ताक्षर

केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का दिनांक 6.10.95 का कार्यालय ज्ञापन सं॰ 19016/1/95—के हिप्रसं/हिटापपा

विषयः—पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण-II वां सत्र।

भारत सरकार के आदेशों के अनुसार केन्द्रीय सरकार और उनके उपक्रमों/निगमों/बैंकों आदि के सभी अवर श्रेणी लिपिकों/टंककों के लिए सेवाकालीन हिन्दी टाइपलेखन प्रशिक्षण अनिवार्य है। दूर-दराज के स्थानों पर कार्यरत कर्मचारियों को हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा देने के लिए अगला (ग्यारहवां) सत्र केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान के तत्वावधान में दिनांक 1.2.1996 से प्रारम्भ किया जा रहा है। पाठ्यक्रम की अवधि 6 माह की होगी। इस संबंध में आवश्यक जानकारी संलग्न विवरण में दी जा रही है।

2. वित्त मंत्रालय आदि से अनुरोध है कि इस पाठ्यक्रम के ब्यौरों के बारे में अपने सम्बद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों तथा सभी उपक्रमों, निगमों, उद्यमों, निकायों और अभिकरणों आदि के अधिकारियों/कर्मचारियों को अवगत कराएं। पाठ्यक्रम के 1 फरवरी, 1996 से प्रारम्भ होने वाले 11वें सत्र में प्रवेश के लिए पात्र कर्मचारियों के नाम व आवेदन-पत्र संबंधित मंत्रालयों/विभागों के प्रशासनिक कार्यालय संलग्न निर्धारित प्रोफार्माओं में भरकर यथाशीघ्र दिनांक 15 दिसम्बर, 1995 तक, उप निदेशक (पत्राचार पाठ्यक्रम-हिन्दी टाइपलेखन), केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-110011 को भेज दें।

3. यह भी अनुरोध है कि कृपया निम्नलिखित बातों को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाए ताकि पत्राचार पाठ्यक्रम की प्रशिक्षण क्षमता का पूरा लाभ उठाया जा सकेः—

(1) केवल उतने ही कर्मचारियों को नामित किया जाए जिनको कार्यालय में अभ्यास के लिए हिन्दी टाइपराइटर उपलब्ध कराए जा सकें।

(2) चूंकि पाठ्यक्रम के लिए प्रविष्ट कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण पूरा करके परीक्षा देना अनिवार्य है और गैरहाजिरी को कर्त्तव्य की अवहेलना माना जाता है, अतः यह सुनिश्चित कर लिया जाए किः—

(क) सत्र के दौरान शैक्षिक या विभागीय परीक्षा या किसी अन्य कारण से लम्बी छुट्टी पर जाने वाले अथवा लम्बे दौरों पर रहने वाले कर्मचारियों को नामित न किया जाए।

(ख) जिन कर्मचारियों की सत्र के दौरान प्रोन्नति की सम्भावना हो उन्हें भी नामित न किया जाए, और

(ग) सत्र के दौरान किसी कर्मचारी का ऐसा स्थानान्तरण न किया जाए जिससे उसके प्रशिक्षण पर कुप्रभाव पड़े।

(3) जिन कर्मचारियों को प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में प्रवेश दे दिया जाता है उन सभी के परीक्षा आवेदन-पत्र पूर्ण रूप से भरवा कर निर्धारित तिथि तक उप निदेशक (पत्राचार पाठ्यक्रम हिन्दी टाइपलेखन), नई दिल्ली को अनिवार्य रूप से भिजवाए जाएं।

(4) व्यवस्था की जाए कि सभी कर्मचारी उप निदेशक (पत्राचार पाठ्यक्रम-हिन्दी टाइपलेखन) द्वारा भेजी गई पाठ्यक्रम सामग्री का दिए गए निर्देशों के अनुसार अभ्यास करें और अभ्यास की गई सामग्री जांच के लिए भेजे।

(5) सत्र के मध्य में किसी भी कर्मचारी को किसी भी कारण से नाम वापिस लेने अथवा प्रशिक्षण बन्द करने अथवा किसी दूसरे प्रशिक्षण पर जाने की अनुमति न दी जाए।

(6) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम (पर्सनल कंटैक्ट प्रोग्राम) पाठ्यक्रम का आवश्यक भाग है, जिसके द्वारा प्रशिक्षार्थियों की समस्याओं/शंकाओं का समाधान किया जाता है और उन्हें आवश्यक मार्गदर्शन तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाता है। अतः प्रशिक्षण के दौरान आयोजित किए जाने वाले व्यक्तिगत संपर्क कार्यक्रमों (पर्सनल कंटैक्ट प्रोग्राम्स) में भाग लेने के लिए कर्मचारियों को अवश्य भेजा जाए। इस दौरान उन्हें शासकीय ड्यूटी पर माना जायेगा।

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी टाइपलेखन के प्रशिक्षण से संबंधित विवरण

1. पात्रताः

(1) यह पाठ्यक्रम केन्द्रीय सरकार और केन्द्रीय सरकार के उपक्रमों, निगमों आदि के उन अवर श्रेणी लिपिकों/टाइपिस्टों आदि के लिए है जो हिन्दी टाइपलेखन नहीं जानते हैं और जिनके लिए हिन्दी टाइपलेखन का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य है तथा जो ऐसे स्थानों पर कार्यरत हैं जहां राजभाषा विभाग के अन्तर्गत हिन्दी टाइपलेखन प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं है।

(2) इस पाठ्यक्रम में केवल वही कर्मचारी भाग ले सकेंगे, जो पहले से ही अंग्रेजी टाइपलेखन जानते हैं और जिन्हें हिन्दी का कम से कम प्रवीण अथवा मिडिल (कक्षा-8) स्तर तक का ज्ञान है।

(3) जिन कर्मचारियों के कार्यालय/कार्यस्थल हिन्दी टंकण प्रशिक्षण के नियमित अथवा अंशकालिक केन्द्रों से 8 किलोमीटर अथवा इससे अधिक की दूरी पर स्थित है, उन्हें आवागमन की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है।

बैंकों अथवा उपक्रमों आदि के कर्मचारियों को भी यह छूट दी जा सकती है। परन्तु उसके प्रशिक्षण के लिए प्रथम प्राथमिकता नियमित प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश लेने के लिए ही होगी।

(4) जिन कर्मचारियों को संख्या की अधिकता अथवा अन्य कारणों से नियमित अथवा अंशकालिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश नहीं मिल पाता, उन्हें पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है बशर्ते कि ऐसे कर्मचारियों के आवेदन-पत्र उनके कार्यालय प्रमुखों द्वारा इस आशय के प्रमाण-पत्र के साथ भेजे जाएं कि उन्हें नियमित/अंशकालिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश नहीं मिल सकता है।

(5) वे आशुलिपिक जो केवल हिन्दी टंकण का प्रशिक्षण लेना चाहते हैं और जिन्हें उनके कार्यालयों द्वारा नियमित प्रशिक्षण के लिए छोड़ा जाना सम्भव नहीं है, उन्हें पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है।

(6) उच्च श्रेणी लिपिकों, सहायकों और हिन्दी अनुवादकों को स्वैच्छिक आधार पर इस पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी टाइपलेखन के प्रशिक्षण के लिए नामित किया जा सकता है। (सहायकों और उच्च श्रेणी लिपिकों के पदों में ग्रुप "ग" के वे कर्मचारी भी शामिल होंगे जो दूसरे कार्यालयों में उससे मिलता-जुलता कार्य करते हों न कि पर्यवेक्षण कार्य और जिनके भिन्न पदनाम हैं जैसे परीक्षा लेखा विभाग में प्रवरण लेखा परीक्षक या लेखा परीक्षक। हिन्दी अनुवादकों के पदों का अभिप्राय ग्रुप "ग" के उन कर्मचारियों से भी है जो अनुवाद कार्य करते हों न कि पर्यवेक्षक कार्य और जिनके लिए भिन्न पदनाम हों, जैसे लेखा परीक्षा विभाग में अनुवाद के कार्य में लगे हुए कनिष्ठ हिंदी अनुवादक, वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक, आदि या अनुभाग अधिकारी, प्रवर लेखा परीक्षक, लेखा परीक्षक)

(7) जो राजपत्रित अधिकारी हिन्दी टाइपलेखन सीखना चाहते हैं परन्तु अपनी कार्य की प्रकृति के कारण नियमित प्रशिक्षण व्यवस्था का लाभ नहीं उठा सकते, उन्हें भी इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है परन्तु उन्हें इसके लिए किसी भी प्रकार का वित्तीय अथवा अन्य प्रोत्साहन नहीं दिया जाएगा।

(8) शर्त यह है कि:—

(क) जो कर्मचारी केन्द्रीय सरकार की सेवा में प्रवेश करने से पहले यह बता चुका है कि वह हिन्दी टाइपलेखन जानता है, या

(ख) जो कर्मचारी सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त किसी संस्थान से पहले ही हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका हो, या

(ग) जो कर्मचारी हिन्दी शिक्षण योजना (परीक्षा स्कंध) द्वारा आयोजित हिन्दी टाइपलेखन की परीक्षा में फेल हो चुका हो, या

(घ) जो कर्मचारी तदर्थ आधार पर नियुक्त किया गया हो, वह इस पाठ्यक्रम में प्रवेश का पात्र नहीं होगा।

2. प्रवेश शुल्क/परीक्षा शुल्क:

(1) किसी भी प्रशिक्षार्थी से कोई प्रवेश शुल्क नहीं लिया जायेगा।

(2) केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों से कोई परीक्षा शुल्क नहीं लिया जायेगा, किन्तु निगमों/उद्यमों/कंपनियों आदि को अपने प्रति प्रशिक्षार्थी के लिए रूपये 40/- (रुपये चालीस मात्र) परीक्षा शुल्क बैंक ड्राफ्ट द्वारा "उप निदेशक (परीक्षा), हिन्दी शिक्षण योजना, नई दिल्ली" के पदनाम से देय होगा। परीक्षा शुल्क परीक्षा आवेदन पत्रों के साथ उप निदेशक (टंकण पत्राचार) को भेजा जाएगा।

3. सुविधाएं:—

(1) इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रविष्ट कर्मचारियों को निर्देश-पत्रक और पाठ्य सामग्री उप निदेशक (टंकण पत्राचार) द्वारा मुफ्त भेजी जाएगी और परीक्षा की समाप्ति पर वापिस नहीं ली जाएगी।

(2) कर्मचारियों को अभ्यास करने के लिए हिन्दी टंकण मशीनें उनके कार्यालयों द्वारा उपलब्ध करवाई जायेंगी।

4. प्रोत्साहन:—

(1) **एकमुश्त पुरस्कार*—**इस पाठ्क्रम द्वारा प्रशिक्षण लेने वाले कर्मचारियों के लिए माना जाएगा कि वे प्रशिक्षण निजी तौर पर ले रहे हैं इसलिए वे प्रशिक्षण के बाद हिन्दी टाइपलेखन परीक्षा पास करने पर रुपए 400/- (रुपए चार सौ मात्र) के एकमुश्त पुरस्कार के पात्र होंगे।

(2) **वैयक्तिक वेतन:—**एकमुश्त पुरस्कार के अलावा समय-समय पर जारी किए गए आदेशों के अनुसार कर्मचारी परीक्षा पास करने पर 12 महीने की अवधि के लिए एक वेतन वृद्धि की राशि के बराबर वैयक्तिक वेतन के हकदार भी होंगे

(3) नकद पुरस्कार 90% या अधिक अंक प्राप्त करके परीक्षा पास करने पर कर्मचारी निम्नलिखित नकद पुरस्कार पाने के हकदार भी होंगे:—

97% या उससे अधिक अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 600 रुपये का नकद इनाम
95% या इससे अधिक परन्तु 97% से कम अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 400 रुपये का नकद इनाग
90% या इससे अधिक परन्तु 95% से कम अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 200 रुपये का नकद इनाम

(4) स्वैच्छिक आधार पर प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उच्च श्रेणी लिपिक, सहायक और हिन्दी अनुवादक भी हिन्दी टाइपलेखन परीक्षा पास करने पर अवर श्रेणी लिपिक की भांति इस संबंध में पहले से निर्धारित शर्तों के अनुसार विभिन्न सुविधा तथा वित्तीय प्रोत्साहन पाने के हकदार होंगे।

(5) ऐसे स्थानों पर तैनात आशुलिपिकों को जहां हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत हिन्दी आशुलिपि प्रशिक्षण केन्द्र नहीं है। यह सुविधा दी गई है कि वे या तो हिन्दी शिक्षण योजना की हिन्दी आशुलिपि परीक्षा सीधे पास करें अगर चाहें तो पहले हिन्दी टाइपिंग की परीक्षा पास करें और फिर आशुलिपि की। दूसरी स्थिति में ऐसे कर्मचारियों को प्रोत्साहन के रूप में मिलने वाली

*एकमुश्त पुरस्कार और वैयक्तिक वेतन संबंधित कर्मचारियों को पहली बार परीक्षा में शामिल होने की तारीख से 15 महीने की अवधि के अन्दर परीक्षा पास करने पर ही दिये जायेंगे।

एकमुश्त पुरस्कार की आधी राशि (अर्थात 375/- रुपये) हिन्दी टाइपिंग परीक्षा पास करने पर दी जाएगी और बाकी आधी राशि (अर्थात 375/- रुपए) हिन्दी आशुलिपि की परीक्षा पास करने पर। लेकिन आशुलिपिकों को हिन्दी टाइपिंग के प्रशिक्षण लेने अथवा परीक्षा पास करने के लिए अन्य कोई प्रोत्साहन (व्यक्तिक वेतन या नकद पुरस्कार) नहीं दिया जाएगा परन्तु हिन्दी टाइपिंग परीक्षा के लिए उन्हें वे सभी सुविधाएं दी जाएंगी जो उन कर्मचारियों को दी जाती हैं जिनके लिए हिन्दी टाइपिंग का प्रशिक्षण अनिवार्य है।

5. पाठ्यक्रम की अवधि:—

पत्राचार पाठ्यक्रम की अवधि 1 फरवरी, 1996 से 31 जुलाई, 1996 तक कुल 6 माह होगी।

6. पाठ्यक्रम में प्रवेश और संचालन-व्यवस्था:—

(1) उपनिदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम), केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-11) द्वारा इस पाठ्यक्रम का संचालन किया जाएगा।

(2) इस पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के पात्र कर्मचारियों के नाम और उनके आवेदन-पत्र देश के विभिन्न भागों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और सार्वजनिक उपक्रमों, निगमों उद्यमों, निकायों, अभिकरणों, राष्ट्रीयकृत बैंकों आदि के प्रशासनिक कार्यालय उप निदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम) केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-110011 को संलग्न प्रोफार्माओं में 15 दिसम्बर, 1995 तक अवश्य भेज दें।

(3) सामान्य रूप से इस पाठ्यक्रम में दाखिले का नियम यह होगा कि जिन कर्मचारियों के नाम विहित प्रोफार्मा में उनके प्रशासनिक कार्यालयों के माध्यम से उपनिदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम के कार्यालय में पहले प्राप्त होंगे, उन्हें प्रवेश में प्राथमिकता दी जाएगी।

(4) प्रशिक्षण के लिए लेखन सामग्री (स्टेशनरी) और डाक भेजने के लिए टिकटों का प्रयोग संबंधित कर्मचारी अपने निजी खर्च के लिए करेंगे।

प्रशिक्षण व्यवस्था:—

(1) इस पाठ्यक्रम में प्रवेश और आवंटित अनुक्रमांक की सूचना प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को उप निदेशक (पत्राचार-पाठ्यक्रम हिन्दी टाइप लेखन) का कार्यालय देगा।

(2) प्रशिक्षण अवधि में प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को पाठ्य-सामग्री समय निर्देश पत्रक के किस्तों में उप निदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम) द्वारा भेजी जाएगी, जिसके आधार पर टाइप की हुई अभ्यास सामग्री प्रत्येक प्रशिक्षार्थी, प्राप्त तिथि के 15 दिन के भीतर उप निदेशक (पत्राचार पाठ्यक्रम-हिन्दी टाइपलेखन) को जांच के लिए भजेगा।

(3) जून के महीने में प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को नमूने के प्रश्न-पत्र भेजे जाएंगे।

पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षार्थियों का मार्गदर्शन करने तथा उनकी व्यक्तिगत कठिनाइयों को दूर करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रमों (पर्सनल कंटैक्ट प्रोग्राम्स) की व्यवस्था की जाएगी।

8. परीक्षा:—

इस पाठ्यक्रम के प्रशिक्षार्थियों की परीक्षा व्यवस्था उप निदेशक (हिन्दी टाइपलेखन पाठ्यक्रम), के माध्यम से उप निदेशक (परीक्षा), हिन्दी शिक्षण योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, दसवां तल, मयूर भवन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली-1 द्वारा की जाएगी। परीक्षा जुलाई 1996 में होगी।

9. पत्र-व्यवहार:—

पत्राचार पाठ्यक्रम के अन्तर्गत परीक्षा, प्रवेश आदि के संबंध में विशेष जानकारी अथवा स्पष्टीकरण उप निदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम), केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-11 के कार्यालय से प्राप्त किया जा सकता है। दूरभाष: 3018196

हिन्दी वह धागा है, जो विभिन्न मातृ-भाषाओं रूपी फूलों को पिरो कर भारत माता के लिए सुन्दर हार का सृजन करेगा।

—डॉ. जाकिर हुसैन

11वां सत्र

प्रोफार्मा

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा संचालित हिन्दी टाइपलेखन के पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए कर्मचारियों की सूची।

क्र०सं०	कर्मचारी का नाम	जन्म तिथि	पदनाम	कार्यालय का पूरा पता	क्या कर्मचारी अंग्रेजी टाइप जानता है?	हिन्दी ज्ञान का स्तर (हिंदी की कौन-सी परीक्षा पास की है?	प्रशिक्षार्थी पत्राचार करने का पूरा पता	से अभ्यास के लिए उपलब्ध हिंदी टाइप मशीनों की संख्या तथा उसका विवरण	कार्यालय से हिंदी शिक्षण योजना के नियमित/ अनियमिक प्रशिक्षण केंद्र (यदि है) की दूरी	कैफियत
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	

सम्पर्क अधिकारी (हिन्दी) /
प्रशासनिक अधिकारी के कार्यालय मोहर के साथ हस्ताक्षर

तारीख:
स्थान

बाल शौरि रैड्डी

हिन्दी के बेताल

तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन (1983) में श्री बाल शौरि रैड्डी हिन्दी कवयित्री महादेवी वर्मा से पंचधातु की प्रतिमा और अभिनन्दन पत्र ग्रहण करते हुए।

पं० सं० 3246/77
आई एस एस एन 0970—9398

"यदि हम अंग्रेजी के आदि नहीं हो गए होते, तो यह समझने में हमें देर नहीं लगती कि अंग्रेजी के शिक्षा का माध्यम होने से हमारी बौद्धिक चेतना जीवन से कट कर दूर हो गई है, हम अपनी जनता से अलग हो गए हैं, जाति के सर्वश्रेष्ठ विभागों का विकास रुक गया है और जो विचार हमें अंग्रेजी के माध्यम से मिले, उन्हें हम जनता में फैलाने में नाकामयाब रहे हैं। पिछले साठ वर्षों से हमने विचित्र-विचित्र शब्दों को केवल रटना सीखा है, तथ्यपूर्ण ज्ञान पचाने के बदले हमने शब्दों का उच्चारण सीखा है। जो विरासत में हमें अपने बाप-दादों से हासिल हुई, उसके आधार पर नव-निर्माण करने के बदले, हमने उस विरासत को भूलना सीखा है। इस दुर्गति की मिसाल सारी दुनिया के इतिहास में नहीं है। यह तो राष्ट्रीय शोक अथवा ट्रेजेडी का विषय है। आज की पहली और सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि हम अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़ें और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपनी सभी प्रादेशिक कार्रवाईयों अपनी-अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्रवाईयों की भाषा हिन्दी होनी चाहिए।"

—महात्मा गांधी
कलकत्ता, 27 दिसम्बर 1917

राजभाषा विभाग, भारत सरकार, (गृह मंत्रालय) लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।